रसायन में नोबेल पुरस्कार-विजेता

१९०१–१९५०

[Translated into Hindi from "Nobel Prize winners in Chemistry by Eduard Farber" Henery Schuman, New York]

हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला—६६

रसायन में नोबेल पुरस्कार-विजेता

(१९०१–१९५०)

लेखक

श्री एडुअर्ड फार्बेर

अनुवादक

डा० हरि भगवान

हिन्दी समिति, सूचना विभाग

उत्तर प्रदेश, लखनऊ

प्रकाशकीय

सभ्यता और शिक्षा की उन्नति के साथ-साथ विज्ञान हमारे जीवन मे अधिकाधिक प्रवेश करता जा रहा है। हमारे उद्योग-व्यापार पर, हमारी सुख-समृद्धि पर एव हमारे मानसिक विकास पर उसका गहरा प्रभाव पड रहा है। बीसवी शताब्दी मे भौतिकी, रासायनिकी आदि मे हुए महान् आविष्कारो ने हमारे रहन-सहन के तरीको, विचारो, व्यवहारो, साधनो आदि मे क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिये है। इन आविष्कारो और प्रभावो की कहानी जितनी ज्ञानवर्द्धक है, उतनी ही रोचक एव उत्साहवर्धक भी है।

इस पुस्तक मे उन विख्यात रसायनज्ञो के आविष्कारो का सक्षिप्त वर्णन है जिन्हे सन् १९०१ से १९५० के बीच रसायन मे नोबेल पुरस्कार मिला था। पुरस्कार विजेताओ के थोडे-से परिचय के साथ-साथ इसमे उनकी रुचियो, उनकी शिक्षा और उन परिस्थितियो का भी वर्णन है जिनसे सफलता की ओर अग्रसर होने मे उन्हे सहायता मिली। इसके अतिरिक्त इसमे उनकी कृतियो और विज्ञान-जगत् पर पडनेवाले उनके प्रभावो का भी विवेचन किया गया है जिससे विश्वज्ञान-वृद्धि मे उनका उचित मूल्याकन हो सके और जिससे ससार के अन्य वैज्ञानिक एव विद्वान् और शिक्षार्थी भी यथेष्ट रूप से लाभान्वित हो सके।

पुस्तक के अनुवादक डाक्टर हरिभगवान हिन्दी मे वैज्ञानिक विषयो पर वर्षो से लेख लिखते रहे है। आप द्वारा अनूदित 'क्रोमैटोग्राफी' नामक एक पुस्तक हम पहले प्रकाशित कर चुके है। मूल के भावो की रक्षा करते हुए आपने यथासभव सरल और सुबोध भाषा का ही प्रयोग किया है। आशा है, हिन्दी के पाठको की वैज्ञानिक जानकारी बढाने मे इससे यथेष्ट सहायता मिलेगी।

ठाकुरप्रसाद सिंह

सचिव, हिन्दी समिति

भूमिका

बीसवी शताब्दी के आरम्भ के साथ ही साथ डाक्टर आल्फ्रेड नोबेल के वसीयतनामे को कार्यान्वित करने के लिए नोबेल प्रतिष्ठान (Nobel Foundation) का कार्य आरम्भ होता है। तब से लेकर १९५० तक ५३ रसायनज्ञों को पुरस्कार मिल चुका है। १९१६, १७, २४, ३३, ४०, ४१ और ४२ के वर्षो को छोडकर प्रत्येक वर्ष मे रसायन के अग्रणी महारथियो के अतर्राष्ट्रीय समूह द्वारा पुरस्कार प्रदान करने के लिए व्यक्ति प्रस्तावित किये और चुने जाते रहे है। पहले इस समूह मे ३०० व्यक्ति होते थे, अब लगभग ४५० होते है। विज्ञान की रायल स्वीडिश अकादमी पहले १० व्यक्तियो मे से और अब ७० व्यक्तियो मे से पुरस्कार-विजेताओ को चुनती है। १९०१ मे पुरस्कार ४१,८०० डालर का होता था, किन्तु १९५० मे यह केवल ३१,७०० डालर का ही रह गया। यद्यपि पुरस्कार का धन सबधी मूल्य गिर गया है, तथापि इन वर्षों मे उसकी महत्ता और प्रसिद्धि बढ गयी है। जब वैज्ञानिको के कार्य की उनके साथी लोग प्रशसा करते है और कहते है कि उससे रसायन के ज्ञान मे वृद्धि हुई है तो उससे उनको प्रोत्साहन मिलता है, इससे विज्ञान एव मानवता की प्रगति होती है और इस प्रकार डॉक्टर नोबेल का मौलिक लक्ष्य सिद्ध होता है।

पुरस्कार के प्रत्येक वर्ष मे, नोबेल पुरस्कार की सूचना पाकर सब देशो की जनता मे बिजली की लहर-सी दौड जाती है और साहित्य, राजनीति एव विज्ञान के इन महान् व्यक्तियो की ओर उसका ध्यान आकर्षित हो जाता है। तथापि उनके कार्य को कम लोग ही समझते है। नोबेल पुरस्कार के विजेता और उनका कार्य 'बेसबाल अथवा बाक्सिग' के विजेताओ की भी अपेक्षा शीघ्रतर भुला दिये जाते है, इसलिए कुछ वर्ष पहले, श्री हेनरी शूमान ने इस स्थिति मे सुधार करने का निश्चय किया। आपने औषध एव शरीरविज्ञान (फिजिओलोजी), भौतिकी और रसायन—इन तीन भागो मे नोबेल पुरस्कार-प्राप्त कार्य एव उसकी महत्ता के विवरण को प्रकाशित करने की योजना बनायी। श्री शूमान से परामर्श करके इस योजना का निश्चित रूप बनाया गया। यह पुस्तक इसी योजना का परिणाम है।

जीवन-चरित्र की रूपरेखाओ मे मैने इन विजेताओ की शिक्षा एव पदो के काल-क्रमानुसार वर्णन के अतिरिक्त और भी कुछ देने का प्रयत्न किया है। वैज्ञानिक अन्वेपणो और उनके औद्योगिक उपयोगो को हम और अच्छी तरह समझ सक्ते है, यदि हमे यह मालूम हो कि अन्वेषको की उस विषय मे रुचि किस प्रकार हुई और उन्होने किन परि-स्थितियो मे सफलता प्राप्त की। पुराने विजेताओ की जीवनी-सामग्री आधुनिक विजे-ताओ की अपेक्षा अधिक रूप मे उपलब्ध होती है, क्योकि आधुनिक विजेता यह तो बता सकते है कि उनकी रुचि किस ओर है (उदाहरणार्थ, पहाड पर चढना वायलिन बजाने से अधिक रुचिकर है), किन्तु वे अपनी भावनाओ और झुकाव को अधिक निश्चित रूप मे नही बता पाते।

पुरस्कार-विजेता के कार्य का वर्णन साधारणतया पुरस्कार-प्राप्ति के समय किये गये उनके भाषण से लिया गया है। फ्रैंच, जर्मन और स्वीडिश भाषाओ के प्रकाशनो का मैने ऐसा अग्रेजी अनुवाद देने का प्रयत्न किया है, जिसमे उनका मौलिक कथन विद्यमान रहे। साधारण रूप से मैने सक्षेप मे नये अन्वेषण की पृष्ठभूमि का भी वर्णन किया है। जहाँ पर पुरस्कार-विजेताओ के कथन जटिल हो गये है, वहाँ उनकी कुछ व्याख्या भी कर दी गयी है। विचारो और प्रयोगो मे सामजस्य दिखाने के लिए पिछले अध्यायो का भी जगह-जगह पर हवाला दे दिया गया है।

नये अन्वेषण के महत्त्व का वर्णन सिद्धात और व्यवहार पर उसके प्रभाव को बता-कर किया गया है। यह प्रभाव कभी-कभी बहुत बडा हो सकता है और किसी रासायनिक विचारधारा का आधार बन सकता है, अथवा यह विशिष्ट भी हो सकता है, जिससे किसी व्यावहारिक समस्या का हल हो गया हो। अनेक दशाओ मे पुरस्कार तब दिया जाता है जब शोध के अनेक विषयो पर उसका प्रकाश पडता है। उनके आलोचनात्मक उत्साह को ठीक सिद्ध करने के लिए मैने किसी का भी बढा-चढाकर वर्णन नही किया है; इसके बिना किसी भी अच्छे ग्रथ का निर्माण सम्भव नही है।

इस प्रकार इस पुस्तक मे हमारी शताब्दी की प्रमुख रासायनिक घटनाओ और हमारे जीवन पर उनके प्रभाव की कहानी का सकलन है। यह कहानी तब पूरी होगी जब औषध एव शरीरविज्ञान पर इस प्रकार के ग्रथ का निर्माण हो जायगा, क्योकि उसमे कुछ पुरस्कार ऐसे विषयो पर दिये गये है, जिनको रसायन मे सम्मिलित किया जा सकता है। जनता के सम्मुख ऐसी कहानी रखने मे विशेष अनुभव का सहारा लेना पड़ा है; इसको बताना तो कठिन है, क्योकि इसका जीवन से सीधा सम्बन्ध होता है। परमाणु, क्लोरोफिल, विटामिन और खादे दोनो में ही आती है। जैसे-जैसे वैज्ञानिक

कार्य हमारे दिन प्रति दिन के जीवन मे प्रवेश करता जायगा, वैसे-वैसे उन लोगो की सख्या मे वृद्धि होती जायगी, जो यह जानना चाहते है कि रासायनिक ज्ञान मे प्रगति किस प्रकार होती है और रसायनज्ञ अपना कार्य किस प्रकार पूर्ण करते है। यद्यपि इस पुस्तक मे केवल कुछ महान् विचारो का ही समावेश है और इसमे बीसवी शताब्दी के रासायनिक ज्ञान का पूर्ण क्रमबद्ध ज्ञान नही है, तथापि इसमे पिछली सफलताओ के प्रेरणात्मक वर्णन से पाठको को अपने लक्ष्य की सिद्धि मे सहायता मिलेगी।

वाशिगटन, डी० सी० — एडुअर्ड फार्बेर
वसत, १९५३

विषयसूची

१९०१

जैकोबिस हनरीकस वैट हॉफ़ (Jacobus Henricus Vant Hoff)

(१८५२-१९११)

"रासायनिक ऊष्मा-गतिकी एवं रसाकर्षण दाब के नियमों के आविष्कार के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

जैकोबस वैट हॉफ का जन्म ३० अगस्त १८५२ को ऐम्सटर्डम मे हुआ था। यद्यपि आपने रसायन पढने का निश्चय किया, तथापि आपकी रुचि इसी विषय तक सीमित न थी, गणित, कविता और औषध-विज्ञान मे भी आपकी विशेष रुचि थी। आपके अध्ययन का आरम्भ डेलफ्ट, हालैड मे हुआ और उसकी समाप्ति १८७४ मे यूट्रेक्थ मे हुई। इस बीच मे आपने कुछ समय बॉन मे बिताया। यहाँ प्रसिद्ध रसायनज्ञ केकुले (Kekule) से आपका थोडा परिचय हुआ। पेरिस मे आदोल्फे वुर्त्स के सरक्षण मे आपकी वैज्ञानिक विचारधारा की नीव पडी। यूट्रेक्थ से लौटने के बाद आपने ११ पृष्ठ की पुस्तिका लिखी जिसका शीर्षक था "जगह (या देश space) मे आजकल के प्रयुक्त आकारीय सूत्रो के विस्तार का प्रस्ताव एव उससे सबधित कार्बनिक यौगिको के प्रकाश-घूर्णन (optical rotation) एव रासायनिक सगठन (chemical constitution) के सम्बन्ध पर विचार।" इस "प्रस्ताव" का आपने ज्यामितीय प्रतीको (geometric symbols) द्वारा परमाणुओ को स्पष्ट करने के प्राचीन विचारो से आरम्भ किया था और इन विचारो का केकुले के चतु-सयोजक कार्बन परमाणु के विचार से सम्बन्ध स्थापित किया था। जे० विसली-सेनस (वुर्ज बुर्ग) ने वैट हॉफ के सिद्धात "जो पदार्थ प्रकाश-घूर्णन करते है, वे ऐसा अपने अणुओ के असम्मित आकार होने के कारण करते है" की उत्साहपूर्वक पुष्टि की। इस पर ऐम्सटर्डम विश्वविद्यालय ने रसायन के आचार्य पद को विभूषित करने के लिए आपको आमन्त्रित किया।

बीस वर्षों (१८७७–१८९६) मे अन्य सबधो को स्थापित करके आपने विज्ञान की सेवा की। आपने ऊर्जा के भौतिक एव रासायनिक विचारो मे सबध स्थापित किया। रसाकर्षण (Osmosis) के वनस्पति-विज्ञान एव फिजिओलोजी के विचार एव घोलो मे पदार्थ की रासायनिक दशा मे भी आपने सबध स्थापित किया। इस कार्य के लिए १९०१ मे आपको नोबेल पुरस्कार मिला। यह नोबेल पुरस्कार-वितरण का प्रथम वर्ष था।

बीस वर्ष के अध्यापन कार्य से थककर, १८९६ मे वैट हॉफ ने प्रशा की विज्ञान-अकादमी मे जाना स्वीकार किया। यहा आपने स्टास फर्ट (Stassfurt) की खानो मे मिलने वाले लवणो पर अपना ध्यान जमाया। यह खान पोटासियम लवणो का सबसे बडा स्रोत थी। इन लवणो का खाद रूप मे प्रयोग होता था।

अपने विद्यार्थी-जीवन मे वैट हॉफ प्रयोगो की अपेक्षा सिद्धातो मे अधिक रुचि रखते थे। बाद मे आपने रासायनिक प्रगति के इन दोनो स्रोतो मे सबध स्थापित करना सीखा।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का विवरण[1]

"आजकल भौतिक रसायन ने जो कार्य किया या करने का वह दावा करता है उसका सम्बन्ध किसी नवीन उपकरण के आविष्कार या परीक्षण की किसी नवीन विधि के आविष्कार से नही है। भौतिक रसायन का आधुनिकतम विकास उन बडे सिद्धातो के स्थापन से हुआ है जो विज्ञान के सपूर्ण आधार को मजबूत बनाते है और भविष्य मे रसायन के बडे भाग के विकास मे सहायक होगे।

"आधुनिक भौतिक रसायन की नीव मुख्यतया दो सिद्धातो पर आधारित है—अवोगाड्रो एव ऊष्मा-गतिकी (Thermodynamics) के नियमो का विस्तार। अवोगाड्रो के नियम का विस्तार इस प्रकार हुआ है—एक दिये हुए पदार्थ का रसाकर्षण दाब, मान मे गैसीय दाब के बराबर होता है, बशर्ते कि ताप और साद्रण अर्थात् इकाई आयतन का परिमाण (quantity) बराबर हो। इससे स्पष्ट दिखाई देता है कि दो पदार्थों के दो घोलो के एक ही आयतनो मे समान परिस्थितियो मे अणुओ की सख्या बराबर होती है और यदि उनका ताप और आयतन एक है तो उनका रसाकर्षण दाब भी

१. जे० एच० वैंट हॉफ की पुस्तक "Physical Chemistry in the Service of the Sciences" से। (शिकागो; शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, १९०३) २० से २४ जून, १९०१ को शिकागो विश्वविद्यालय मे दिये गये भाषणों से।

एक ही होता है। केवल इतना ही नही, प्रत्युत जब अणु-भार ज्ञात होता है तो इस दाब की गैसीय दाब की भॉति आसानी से गणना की जा सकती है।

"यह नियम मोलिक एव विस्तृत दोनो रूपो मे बिलकुल यथार्थता (strict accuracy) का दावा करता है, जबकि तनुता (dilution) काफी अधिक हो, अर्थात् केवल उन दशाओ मे जिन तक व्यवहार मे नही पहुँचा जा सकता। तब भी उन तनुओ पर जिनपर विलयनो का दाब वायुमडलीय दाव के बराबर होता है, (अर्थात् गैसो मे •१ वायुमडल दाब पर और विलयनो मे लगभग दशाश नार्मल (N/10पर)[1] इस नियम का व्यतिक्रम (deviation) नही के बराबर होता है।

"पहले सिद्धात, जिसको विलयन का सिद्धात कहा जाता है, के लिए इतना काफी है। दूसरे का सबध उष्मा-गतिकी की उपयोगिता से है—विशेप रूप से कार्य और ऊर्जा की अविनाशिता और कार्नो-क्लासियस सिद्धात की रासायनिक प्रश्नो के हल करने की उपयोगिता से।

"यह क्रिया (operation) के उत्क्रमणीय चक्रो (reversible cycles) मे लगाया जा सकता है या इसका उपयोग गणित के फलनो (functions) एव भौतिक दुर्बोध विचारो के बनाने मे होता है, जैसा कि गिब्स, प्लाक और ड्यूहेम महोदय ने किया है। मेरा विश्वास है कि रसायनज्ञ के लिए इसका पहला रूप, जिसमे उत्क्रमणीय चक्र काम मे आते है, विशेष रूप से उपयोगी है। सक्षिप्त रूप मे एक चक्र मे उन सब परिवर्त्तनो की श्रेणी (series) होती है जिनमे मौलिक दशा पर फिर पहुँच जाया जाता है। उदाहरणतया–बर्फ का वाष्प मे परिवर्त्तन, वाष्प का जल मे परिवर्त्तन और फिर जल का बर्फ मे परिवर्त्तन।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

वैंट हॉफ के कार्य से एक शताब्दी के उन प्रयासो का अत होता है, जिनके द्वारा रासायनिक पदार्थो की बधुता, प्रेम एव घृणा, के वैज्ञानिक अर्थ को समझने की चेष्टा की गयी थी। आपने प्रतिक्रिया (reaction) के ताप को, रासायनिक बधुता (affinity) को और रासायनिक परिवर्त्तन के ताप को गणित की सहायता से मिलाया है।

गणित रूप मे सिद्धात सरल हो जाता है और उसका उपयोग सार्वभौमिक हो

१. जिस विलयन के एक लिटर मे विलयशील (Solute) का भार तुल्याक भार का दसवां होता है—उदाहरणार्थ, ४. ६ ग्राम इथाइल अल्कोहल प्रत्येक लिटर में।

जाता है, किन्तु ये दोनो बाते रासायनिक पदार्थो की वास्तविकता और उनके व्यवहार के लिए आदर्श प्रतीक को मान कर होती है। रासायनिक परिवर्तन का पूर्ण रूप से उत्क्रमणीय चक्र, जिसके लिए वैट हॉफ ने हस को काटने और पकाने का एक बार उदाहरण दिया था, वैट हॉफ के आदर्श विचारो का एक यथार्थ रूप है। आपको भली-भाति मालूम था कि आदर्श दशा, जिससे कि गणित के नियमो का निकालना सभव होता है, यथार्थ रूप मे व्यवहार मे नही पायी जाती, तथापि आपने उसके आश्चर्यान्वित प्रभावो को दर्शाया। वाष्प, दाब और विलयनो के सान्द्रण के सबध को भी आपने स्थापित किया। घुलित पदार्थो द्वारा विलयन के क्वथनाक मे वृद्धि और हिमाक मे कमी की गणना की जा सकती है। ताप अथवा दाब को बदलने पर रासायनिक प्रतिक्रियाओ मे जो परिवर्तन होता है, उसको पहले से ही देखा जा सकता है। सतुलन (equilibrium) शब्द यौगिको और उनके अवयवो के नियत्रित की जा सकने वाली परिस्थितियो मे सबध का एक प्रतीक है। ये सबध उस साधारण ज्ञान के आधार है जिनसे हमे ज्ञात होता है कि विशिष्ट इच्छित फलो की प्राप्ति के लिए हमे क्या करना चाहिए। इस प्रकार आदर्श सिद्धात की उपयोगिता स्पष्ट हो जाती है। वैट हॉफ ने इसकी व्यावहारिक उपयोगिता को अतिम वर्षो मे अकार्बनिक लवणो पर अपने कार्य से प्रदर्शित किया।

१९०२

एमिल फ़िशर (Emil Fischer)

(१८५२-१९१९)

"शर्कराओं के समूहो और प्यूरीन के सश्लेषणो के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

एमिल फिशर अपनी कक्षा मे सर्वप्रथम होकर बॉन के जिम्नेमियम से १८६९ मे स्नातक हुए। आप अपने पिता के खूब चलते और बढते हुए व्यापार मे सम्मिलित हो सकते थे, तथापि आपने भौतिकी एव गणित पढने की इच्छा प्रकट की। बीमारी (पेट की शिकायतो) के कारण, आप १८७१ के ईस्टर तक बॉन विश्वविद्यालय मे प्रवेश न कर सके। वहाँ की पढाई की दशाओ से असतुष्ट होकर आप स्ट्रासबुर्ग चले गये, जहाँ आपके अध्यापक रसायन मे ऐडोल्फ फान बाएर, खनिज-शास्त्र मे पाल ग्राथ और भौतिकी मे एडोल्फ कुन्ड्ट थे।

आपको डाक्टर की उपाधि १८७४ मे मिली। इसके १ वर्ष बाद आपने एक नवीन कार्बनिक यौगिक सवधी अपने आविष्कार एव अन्वेषण प्रकाशित किये। यह यौगिक भविष्य मे शर्कराओ पर शोध-कार्य के लिए बडा उपयोगी सिद्ध हुआ। आपने उसका नाम फिनाइल हाइड्रेजीन रखा। हाइड्रेजीन एक ऐसा अकार्बनिक यौगिक था जिसके दो नाइट्रोजन परमाणु एक दूसरे से जुडे हुए थे और प्रत्येक मे दो हाइड्रोजन परमाणु थे। नये यौगिक मे एक हाइड्रोजन परमाणु के स्थान पर फिनाइल समूह था। बेजोल मे से जब एक हाइड्रोजन परमाणु हटा दिया जाता है तो उसे फिनाइल-समूह कहते है। आपने ज्ञात किया कि फिनाइल हाइड्रेजीन साधारण शर्कराओ–जैसे ग्लूकोज (द्राक्षा-शर्करा) या फल-शर्करा (फ्रुक्टोज) से सयोग करती है और इस प्रकार शर्कराओ के बने हुए नये यौगिक सरलता से शुद्ध किये और पहचाने जा सकते है।

म्यूनिख मे १८७५ मे बाएर के साथ होकर आप अपना अन्वेपण कार्य करते रहे, १८८२ तक एरलागेन मे, उसके ३ वर्ष बाद तक वुर्जबुर्ग मे और अततोगत्वा १८९२

तक बर्लिन मे आपका शोध-कार्य चलता रहा। कार्य की रूपरेखा सदैव सावधानी से तैयार की जाती थी, किन्तु अप्रत्याशित परिणाम जहाँ तक ले जाते थे, वहाँ तक आप कार्य करते थे। इस प्रायोगिक कला का आपने यूरिक अम्ल (Uric Acid) के अन्वेषण के लिए सफलतापूर्वक उपयोग किया। यूरिक अम्ल सर्पो के मूत्र मे साधारण रूप से पाया जाता है और मनुष्यो मे कुछ प्रकार के वात रोगो का कारण होता है। यूरिक अम्ल से वाएर महोदय को विशेष रुचि थी, फिशर ने बाएर के शोध-कार्य का विस्तार किया और ऐसा करने मे आपने केफीन (caffein) और थियोब्रोमीन (theobromine) की रासायनिक रचना (structure) को स्पष्ट किया। ये पदार्थ मूल रूप से एक ऐसे पदार्थ से निकलते है जिसका नाम आपने प्यूरीन (purine) रखा। इसके अर्थ मे शुद्ध यूरिक अम्ल (शुद्ध यूरिकम–purum uricum) है।

इस अन्वेषण की समाप्ति १८९९ मे हुई। जब फिशर महोदय को १९०२ मे शर्करा और प्यूरीन पर अन्वेषण के लिए नोबेल पुरस्कार मिला, तब तक आप प्रोटीन के रसायन के क्रमबद्ध ज्ञान के लिए कार्य आरम्भ कर चुके थे। पुन, आपने पूर्व मनन के साथ अप्रत्याशित फलो सम्बन्धी होशियारी के सयोग से, विश्लेषण की नवीन एव अधिक अच्छी विधियो का विकास किया। इसमे आपको विभिन्न देशो के अनेक विद्यार्थियो और सहकारियो से भी सहायता मिली। जब कुछ प्रोटीन पदार्थो के मूल अवयवो का पता लग गया और उनकी रासायनिक रचना स्पष्ट हो गयी, तब निश्चित योजना के अनुसार उनका सश्लेषण आरभ हुआ। इस प्रकार आपने प्रोटीन-जैसे पदार्थो के बडे-बडे अणुओ का भली प्रकार से नियत्रित क्रमो (steps) मे निर्माण किया। आपने १९०६ मे एक भाषण मे अपने कार्य का सक्षेप प्रस्तुत किया। इस भाषण का वर्णन बढा-चढाकर किया गया और कहा गया कि जीवन पहेली की समस्या हल कर ली गयी है। फिशर ने इन रिपोर्टो पर खेद प्रकट किया।

टैनिन (Tannins) पर फिशर का कार्य थोडा ही समाप्त हुआ था जबकि प्रथम विश्वयुद्ध आरभ हुआ। जनसाधारण मे प्रचलित मान्यताओ के विरुद्ध रासायनिक एव खाद्य-पदार्थो के उत्पादन का सगठन प्रथम विश्वयुद्ध के समय जर्मनी मे नही हुआ था, इस प्रकार के सगठन के निर्माण के लिए एमिल फिशर पर जो उस समय का माना हुआ जर्मनी के रसायन का नेता था, दोप लगाया गया।

आपके तीन पुत्रो मे से दो की मृत्यु हो गयी—एक की युद्ध मे और दूसरे की युद्ध पश्चात् जर्मनी की परिस्थितियो मे। इन दोनो पुत्रो की मृत्यु के विषाद से १९१९ मे एमिल फिशर की पुरानी बीमारी से मृत्यु हो गयी।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का विवरण[1]

फिशर के नोबेल-पुरस्कार-भाषण मे से निम्नलिखित अवतरण का चयन इस कारण किया गया है कि इससे आपके शर्कराओ और प्रोटीन के शोध-कार्यो का सबध स्पष्ट होता है। इन दोनो का मूल सबध जीवन मे आपकी विशेष रुचि है। ग्लूकोनिक अम्ल, (इसका प्रयोगशाला मे उत्पादन कार्बन के छठे परमाणु के आक्सीकरण से होता है, आक्सीकरण से ऐलकोहल समूह अम्लीय समूह मे बदल जाता है) पशुओ मे विपचन (metabolism) के फलस्वरूप पाया जाता है। पौधो और पशुओ मे विशिष्ट रासायनिक यत्र (tool) होते है जिनके द्वारा वे शर्कराओ और उनसे सबधित यौगिको, जैसे ग्लूकोसाइड, का निर्माण करते है। ये यत्र खमीर कहलाते है। उनका स्थायित्व बहुत कम होता है और ताप-परिवर्त्तन से उन पर शीघ्र प्रभाव होता है। इनका विनाश कुछ रासायनिक प्रभावो से, जो विष का सा काम करते है, सरलता से किया जा सकता है, तथापि वे अपने भार से हजार गुने भार तक के कायिकी के विशिष्ट पदार्थो को अपनी परिस्थितियो मे बनाने मे बडे शक्तिशाली होते है। एमिल फिशर ने इस असाधारण सक्रियता को शर्करा अथवा प्रोटीन के अणुओ मे परमाणुओ की जटिल व्यवस्था से सबधित करने की चेष्टा की।

सबसे अधिक पायी जाने वाली शर्कराओ मे ६ कार्बन परमाणुओ की शृखला (chain) होती है, प्रत्येक परमाणु एक आक्सीजन परमाणु से जुडा होता है। ५ परमाणुओ मे आक्सीजन के साथ-साथ हाइड्रोजन परमाणु भी होता है और ये दोनो परमाणु ऐल्कोहल-समूह बनाते है। आक्सीजन का एक परमाणु विशेष रूप से सक्रिय होता है और यह फार्मैल्डीहाइड (formaldehyde) समूह मे होता है। जिस कार्बन परमाणु पर यह समूह होता है उसकी सख्या साधारणतया एक दी जाती है। दूसरे कार्बन परमाणुओ से जुडे हुए ऐलकोहल-समूह,अन्य ऐलकोहलो की भाँति, अम्ल से प्रतिक्रिया करते है और इस प्रकार एस्टर बनाते है। फिशर ने ज्ञात किया कि चमडे के कमाने के काम में आने वाले कुछ पदार्थो मे शर्करा और पित्तीय अम्लो से मिलकर बने एस्टर पाये जाते है।

"इस क्षेत्र मे सश्लेषण की दिशा नयी समस्याओ की ओर है। द्राक्षाशर्करा से बने सादे यौगिको मे से शरीर विज्ञानशास्त्री को ग्लूकोनिक अम्ल भली-भाँति ज्ञात है, क्योकि पशु प्राणी इस अम्ल को कार्बोलिक अम्ल, क्लोराल और टर्पेन्टाइन-जैसे विषो

1. Les Prix Nobel en 1902 से अनूदित।

को मारने एव निर्दोप वनाने के काम मे लाता है। इसकी रचना और द्राक्षाशर्करा (ग्लूकोज) से इमका सबध और शरीर मे इसके उत्पादन की सभावित व्याख्या इस सश्लेषण विधि से स्पष्ट हुई है। ग्लूकोजामीन के साथ बडी कठिनाइया आयी। यह नाइट्रोजन से बना एक अजीब पदार्थ है और सबसे पहले इसको झीगा मछली से प्राप्त किया गया। किन्तु अब हमको ज्ञात है कि पशु-जगत मे यह प्रचुरता से व्याप्त है। इसके सश्लेषण से, जिसमे मै कुछ सप्ताह पूर्व ही सफल हुआ हूँ, स्पष्ट है कि ग्लूकोजामीन, द्राक्ष-शर्करा और आल्फा ऐमीनो अम्ल के बीच का पदार्थ है। यह इस प्रकार, कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन मे बहुत काल से खोजे गये सबध को स्थापित करता है।

'ग्लूकोसाइडो से प्राप्त परीक्षण-फल रोचक है। ये पदार्थ वनस्पति-जगत् मे प्रचुरता से पाये जाते है और इनको शर्कराओ और बिलकुल दूसरे प्रकार के यौगिको से मिलकर बने हुए समझना चाहिए। इसके उदाहरण है—एमिग्डलीन जो कड़ुवे बादामो मे पाया जाता है, और सैलिसिन जो पुराने औषध-विज्ञान मे बुखार की दवा मानी जाती थी।

"खमीरका, जिसको आजकल ऐजाइम (enzyme) कहा जाता है, जीव-प्राणी के रासायनिक यत्रो मे बडा विशेष स्थान है। यह कहा जा सकता है कि जीव-कोशिका मे जो भी रासायनिक परिवर्तन होते है, वे मुख्यतया एजाइम की सहायता से ही होते है। अप्राकृत ग्लूकोसाइडो के परीक्षण से ज्ञात हुआ है कि एजाइम का प्रभाव मुख्यतया उससे प्रभावित अणुओ के ज्यामितीय आकारो के कारण होता है और ये दोनो एक दूसरे से इस प्रकार फिट होने चाहिए जैसे ताला और कुजी। फलत प्राणी इनकी सहायता से बडे विशिष्ट परिवर्तन कर सकता है—ऐसे परिवर्तन, जो साधारण रासायनिक पदार्थो से नही हो सकते।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

शर्कराओ की शोध के लिए जिस रासायनिक यत्र का आविष्कार एमिल फिशर ने ७५ वर्ष पूर्व किया था, उसका आज कल भी प्रयोग होता है। उसमे कई परिवर्त्तन कर दिये गये है और उसकी कई अन्य उपयोगिताएँ भी ज्ञात हो गयी है। ग्लूकोनिक अम्ल का जिसमे आपकी विशेष रुचि थी, महत्त्व आज कल और बढ गया है, क्योकि औषध रूप मे भी इसकी उपयोगिता देखी गयी है।

राइबोज (Roibose) एक ऐसा कार्बोहाइड्रेट है (जिसका अन्वेपण फिशर महोदय ने केवल सश्लेषण के दृष्टिकोण से ही किया था) जो शर्करा के अणु मे परमाणुओ

की विशिष्ट रचना (configuration) का उदाहरण है। रक्त और मास-पेशियो मे पाये जाने वाले सक्रिय पदार्थो मे इसके प्रमुख स्थान पर प्रकाश डाला गया है। उसमे यह ऐडीनीन से, जो प्यूरीन है, सयुक्त अवस्था मे होता है। लीबिग के प्रसिद्ध गोश्त के सार (extract) मे केवल यही एक उपयोगी पदार्थ होता है। यह सार साद्रित शोरवा होता है जिसका पौष्टिक भोजनो मे बडा महत्त्व माना जाता है।

फिशर महोदय ने वेरोनाल (१९०४) का विश्लेषण करके अपने वैज्ञानिक कार्य से स्वय व्यावहारिक फल निकाले। जोजेफ फान मेरिंग के साथ आपने अस्वाभाविक निद्रा लाने के लिए इसका उपयोग आरभ किया। आपने जिन औषधियो का पेटेट कराया था उनमे सारे बारबिट्यूरेट (barbiturates) शामिल है।

सादी शर्कराओ के ऐल्डीहाइड-समूह को उसके आक्सीजन परमाणु मे हाइड्रोजन परमाणु को जोड कर अवकृत करके ऐलकोहल-समूह बनाया जाता है। इस प्रतिक्रिया से शर्कराओ की सूक्ष्म रचना को स्पष्ट करने मे बडी सहायता मिली। इस प्रतिक्रिया से औद्योगिक रूप मे शर्कराओ से ऐलकोहल व्यापारिक मात्रा मे प्राप्त किये जाते है। इन ऐलकोहलो से अम्ल के कुछ यौगिक-एस्टरोका नमी लाने वाले पदार्थों (wetting agents) और परिमार्जको (detergents) के रूप मे प्रयोग होता है।

फिशर महोदय का शर्कराओ और प्यूरीन पर कुछ कार्य प्रोटीन से काफी सबधित है। इसकी चर्चा भी करना आवश्यक है कि एमीनो-अम्लो का, जिनको फिशर ने प्रोटीन पदार्थो का मौलिक अवयव पाया था, उत्पादन आज कल होता है और विशेष पौष्टिक पदार्थो के रूप मे इनका उपयोग होता है।

१९०३

स्वान्ते अगस्त एर्‌ह्रीनियस (Svante August Arrhenius)

(१८५९-१९२७)

"वैद्युत विश्लेषिक विघटन के सिद्धात के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

मेलार झील (स्वीडेन) के समीप विक मे स्वान्ते एर्‌ह्रीनियस का जन्म हुआ था। आपने तीन वर्ष की आयु से पढना सीखा और स्कूल के आरभिक वर्षो मे ही भौतिकी और गणित मे आपकी विशेष रुचि हो गयी। यद्यपि आपने अपने अध्ययन का आरभ उप्पसल विश्वविद्यालय मे किया था, तथापि आपका वास्तविक शोध-कार्य स्टाकहाम मे हुआ। १८८४ मे उप्पसल मे लौटने पर आपको डाक्टर की उपाधि मिली।

उस समय भौतिकीज्ञ, फ्रीडरिश क्होलराउश ने वुर्जबुर्ग मे विलयनो की विद्युत् चालकता नापने के लिए एक सरल विधि का विकास किया था। धातु के तार की विद्युत् चालकता सरलता से नापी जा सकती है। जब एक ही धातु के दो टुकडो को शुद्ध जल मे डुबोया जाता है तो एक टुकडे से दूसरे में विद्युत् धारा का प्रवाह नही होता, इस दशा मे शुद्ध जल पृथक्कारी है। जल मे लवण अथवा अम्ल को मिलाने से उसमे चालकता आ जाती है। पहले यह माना जाता था कि विद्युत्-धारा विलयन मे घुलित पदार्थ के अणुओ से बँध जाती है, अणु इस प्रकार धन एव ऋण विद्युत् युक्त अणुओं मे बँट जाते है और ये अणु विद्युत्-धारा को ले जाते है। फैरडे ने विद्युत् ले जाने वाले इन अणुओ को 'आयन' का नाम दिया था और जो पदार्थ विद्युत्-धारा के प्रवाह के लिए आयन मे टूट जाते थे उनको विद्युतीय (electrolytes) की सज्ञा दी थी।

जब एर्‌ह्रीनियस ने विद्युतीय की तनुता को परिवर्तित करके चालकता मे परि-वर्तन को नापा तो आपने निष्कर्ष निकाला कि विद्युत् को ले जाने के लिए विद्युतीय का एक भाग सक्रिय होता है और दूसरा अक्रिय। जैसे-जैसे तनुता मे वृद्धि होती जाती है सक्रिय भाग बढता जाता है। वहुत अधिक तनुता (जिसको अनन्त, infinite,

तनुता कहते है) पर सारा विद्युतीय सक्रिय भागो मे टूट अथवा विघटित हो जाता है। यह विघटित दशा विलयन मे बिना विद्युत् प्रवाह के भी होती है। १८८४ मे लिखे गये एर्‌हीनियस के प्रबन्ध (dissertation) से विल्हेल्म आस्ट्वल्ड (देखिए पृ० ३७–४१) इतना प्रभावित हुआ कि वह एर्‌हीनियस से इन परीक्षण-फलो के अर्थ एव उनकी उपयोगिता पर वाद-विवाद करने के लिए उप्पसल आया। इस प्रकार स्वीडेन के शिक्षा-क्षेत्रो मे उनके देशवासी के शोध-कार्य का महत्त्व स्पष्ट हुआ, इससे एर्‌ही-नियस को अपने शोध-कार्य मे बडी सुविधा मिली। आप भी यात्रा करके रीगा मे आस्ट्वल्ड से, वुर्जबुर्ग मे क्होलराउश से, ग्राज मे बोल्ट्जमान से और एम्सटर्डम मे वैट हाफ से मिले। इन्ही वर्षो मे वैद्युत विश्लेपक सिद्धात की रूपरेखा निश्चित हुई। यह रूप-रेखा विस्तृत कार्य का आधार बन सकती थी, किन्तु एर्‌हीनियस, जो अब (१८९१ मे) स्टाकहाम मे आचार्य वन चुके थे, की विशेष रुचि रासायनिक प्रतिक्रियाओ के आधारभूत सिद्धातो के अधिकतम उपयोग मे थी, जीवित प्राणियो मे विषो (टाक्सिन) की प्रक्रिया की व्याख्या ई० ए० फान बेरिग और पॉल एरलिश कर चुके थे, उन्होने विषो की प्रक्रिया को मारने वाले (टाक्सिन-विरोधी) पदार्थो को भी बताया था। एर्‌हीनियस ने प्राणिसबधी परिवर्तनो के साधारण, भौतिक एव रासायनिक नियमो को खोजने का प्रयास किया। आपने ज्ञात किया कि ये प्रतिक्रियाएँ भी अन्य रासायनिक प्रतिक्रियाओ के नियमो का पालन करती है और मानव शरीर मे होने वाली तथा परखनली मे होने वाली प्रतिक्रियाओ मे कोई विशेष अतर नही होता। यह एक ऐसा विषय था जो एर्‌हीनियस की सपूर्ण शक्तियो को खपा सकता था, किन्तु एर्‌हीनियस का कौतूहल यही तक सीमित न था। आपने अतरिक्ष भौतिकी का एक सिद्धात निकाला। इसमे आपने बताया कि प्रकाश-विकिरण के दाब से कण, यहाँ तक कि जीवित प्राणियो के सूक्ष्मजन्तु (germs) भी, देश (space) मे भेजे जा सकते है और इस प्रकार यह दाब सारे विश्व का सपर्क स्थापित करता है।

१९०५ मे एर्‌हीनियस भौतिक रसायन के नोबेल इस्टीट्यूट (Institute) के डायरेक्टर हुए। यह आप-जैसे सर्वतोमुखी प्रतिभा वाले व्यक्ति के लिए उपयुक्त स्थान था।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का विवरण[१]

"चालकता अणुओ ($ZnSO_4$) के आयनो (Zn और SO_4) की उस गति पर निर्भर होती है जिससे वे द्रव मे विद्युत्-बल अथवा स्थितिज अतर (potential

१ Proceedings of the Royal Institution of Great Britain, Vol.

difference) द्वारा ले जाये जाते है। यदि यह स्थितिज अतर नियत रहता है तो गति केवल उस घर्षण पर आधारित होती है जो आयनो की उसके चारो ओर घिरे हुए अणुओ के साथ होती है। बहुत अधिक तनुता पर ये अणु केवल जल के अणु होते है। अत यह आशा की जा सकती है कि इन परिस्थितियो मे चालकता नियत रहेगी और तनुता का उस पर कोई प्रभाव नही होगा, यदि यह मान लिया जाय कि $ZnSO_4$ के सारे अणु विद्युत्-धारा को ले जाने मे योग देते है। किन्तु प्रयोग से हमे ज्ञात होता है कि आणव चालकता तनुता के साथ बढती जाती है। तनुता बहुत अधिक ($ZnSO_4$ के एक अणु के साथ १००० या इससे भी अधिक जल के अणु के साथ) होने पर भी यह बढती जाती है। इससे यह अनुमान (hypothesis) बनता है कि $ZnSO_4$ के सारे अणु नही, किन्तु उनका एक भाग विद्युत् को ले जाने मे योग देता है। यह भाग उसी अनुपात मे बढता है जिस अनुपात मे आणव चालकता (k)। इसका सीमात मान (Limiting value k^∞) अनन्त तनुता पर होता है और यह उस सीमा से मिलता है जिस पर सब अणु विद्युत् को ले जाने मे योग देते है। विद्युत् ले जाने वाले अणुओ को मैने सक्रिय भाग कहा है। स्पष्ट रूप से इसकी गणना ($k : k^\infty$) के भागफल से की जा सकती है।

"सक्रिय अणुओ के विचार का सबसे अधिक महत्त्व निराकरण ऊष्मा की व्याख्या से स्पष्ट होता है। यह वैद्युतविश्लेषिक सिद्धात द्वारा बडी सरलता से समझ मे आ जाता है। इस सिद्धात के अनुसार तीव्र अम्ल एव तीव्र भस्म, तथा तीव्र लवण भी बहुत अधिक तनुता पर (लगभग) पूर्ण रूप से आयनो मे विघटित हो जाते है—उदाहरणतया HCl, H^+ और $\bar{Cl}$ मे, NaOH, Na^+ और $\bar{O}H^-$ मे, NaCl, Na^+ और $\bar{Cl}$ मे। किन्तु जल (प्राय) बिलकुल विघटित नही होता। इस प्रकार तीव्र अम्ल, उदाहरणतया HCl के एव तीव्र भस्म NaOH के अधिक तनु विलयनो को मिलाने की प्रतिक्रिया को इस प्रकार लिखा जा सकता है—

$$(\overset{+}{H}+\bar{Cl})+(\overset{+}{Na}+\bar{O}H)=(\overset{+}{Na}+\bar{Cl})+HOH$$

$$\text{या} \quad \overset{+}{H}+\bar{C}H=HOH$$
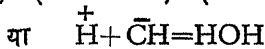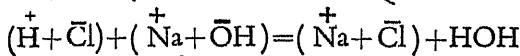
XVII (1904) मे पृष्ठ ५५३ और बाद के पृष्ठो पर छपे एर्हीनियम के नोबेल पुरस्कार स्वीकृति पर दिये गये भाषण से। यह आपकी ही भाषा में दिया गया है। आपने शायद सल्फेट $(ZnSO)_4$ हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCL) और सोडियम हाइड्राक्साइड (NaOH) का उदाहरण दिया है। पदार्थों के परमाणुओ पर + अथवा — का चिह्न लगा कर आयन को व्यक्त किया गया है।

"पूरी प्रतिक्रिया $\overset{+}{H}$ और $\bar{O}H$ आयनो के सयोग से जल के बनने के तुल्य है। स्पष्ट रूप से, तीव्र अम्ल अथवा तीव्र भस्म चाहे जो भी हो, यह प्रतिक्रिया एक ही रहती है। फलत तीव्र अम्लो और तीव्र भस्मो के तुल्य परिमाण (Quantity) के लिए इस प्रकार की प्रतिक्रिया की उष्मा सदैव एक होनी चाहिए। वस्तुत यह सब दशाओ मे १३,६०० तापाकक (कैलरी) पायी गयी है। ताप-रसायन मे आविष्कृत यह उष्मा-समता अपना बडा महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

"यह पूछा गया कि विद्युतीय का सक्रिय भाग अक्रिय भाग से किस प्रकार भिन्न है। इस प्रश्न का उत्तर मै १८८७ मे दे चुका हूँ।

"लवण के सक्रिय अणु आयनो में टूट जाते है। वे पूर्णतया स्वतत्र होते है और विलयनो मे दूसरे अणुओ की भाँति आचरण करते है।

"जल जिसको दुर्बल अम्ल अथवा भस्म समझना चाहिए एक महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। अपने वैद्युतविश्लेषिक विघटन से यह दुर्बल अम्लो एव भस्मो का जलविश्लेषण करता है।

कायिकी-रसायन के लिए यह (Sjogvist) प्रश्न बहुत बडे महत्त्व का है, जैसा कि स्जोगविस्ट के प्रायोगिक फलो से पुष्ट (confirm) हुआ है। ज्वालामुखी घटनाओ की व्याख्या के लिए भी जल और सिलिसिक अम्ल के विभिन्न तापो पर साथ आने की उपयोगिता स्पष्ट हुई है।"

सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रभाव

आरम्भ मे एर्‌हीनियस को अपने सिद्धात-प्रतिपादन के लिए बडे विरोध का सामना करना पडा। बहस मे कहा गया कि सोडियम तो जल को तेजी से विच्छेदित कर देता है और क्लोरीन की बडी भेदनशील (penetrating) गध होती है। ये दोनो तत्त्व शात अथवा गधहीन विलयन मे कैसे हो सकते है? इस प्रश्न का उत्तर विद्युत् चार्ज से सबधित था। सोडियम नही, अपितु सोडियम के धन विद्युत्-युक्त परमाणु, क्लोरीन नही, अपितु क्लोरीन के ऋण विद्युत्-युक्त परमाणु सोडियम क्लोराइड के इन विलयनो मे पाये जाते थे। एक परमाणु के इस प्रकार दो भागो मे टूट जाने से इस बात की भी व्याख्या हो जाती थी—सयुक्त अवस्था से रसाकर्षक दाब की गणना से दाब का जो मान आता था उसकी अपेक्षा वास्तविक दाब बहुत अधिक होता था और तनुता की वृद्धि के साथ-साथ दाब के परिवर्त्तन से विघटन के परिमाण का पता चलता था। सारे तीव्र अम्लो के तनु घोलो की रासायनिक सक्रियता आस्ट्वल्ड के प्रयोगो मे एक

पायी गयी, नये सिद्धात ने इसकी भी व्याख्या की। हाइड्रोजन आयन रासायनिक प्रतिक्रियाओ मे विद्युत् चालकता की भाँति सक्रिय भाग थे। जब इलेक्ट्रान-विद्युत्चार्ज की इकाई के आविष्कार की घोषणा की गयी तो एर्‌हीनियस का सिद्धात और पुष्ट हो गया। सोडियम का धन आयन अब सोडियम का एक परमाणु हो गया था, जिसने क्लोरीन परमाणु को अपना एक इलेक्ट्रान दे दिया था, क्लोरीन परमाणु, फलत, ऋण विद्युत्-युक्त हो जाता था।

अनेक प्रकार के तथ्यो—प्रतिक्रिया की ऊष्मा, रग, रसाकर्षक दाब ओर रासायनिक बधुता—की इस प्रकार एक साथ व्याख्या हुई। इस आदर्श सिद्धात के सौदर्य से उत्साहित होकर इस सिद्धात के आविष्कारक और उसके साथी बहुत दूर तक चले गये। विद्युतीय (electrolyte) के स्वभाव का प्रभाव सूक्ष्म प्रयोगो मे भी माना जाने लगा। आदर्श अवस्था को बहुत अधिक तनु घोलो पर तो मानना चाहिए, किन्तु अधिक साद्र घोलो के लिए घटनाओ की आवश्यकता से अधिक सरल व्याख्या करता था। विद्युतीय के वास्तविक आचरण के लिए यह पहला सन्निकटन सिद्ध हुआ। तथापि इसका आधार, जिसके अनुसार अम्ल, भस्म और लवण एक दूसरे से विरुद्ध चार्ज मे विघटित होते थे, उपयोगी बना रहा। इलेक्ट्रान का आदान-प्रदान रासायनिक बधकता (bonding) की आधारभूत व्याख्या बन गया।

१६०४

विलियम रेमजे (William Ramsay)

(१८५२-१९१६)

"वायु में निष्क्रिय तत्त्वो के आविष्कार एव आवर्त-सारणी मे उनके स्थान को व्यक्त करने के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

सर विलियम रैमजे ने रसायन मे अपनी रुचि के आरभ का इस प्रकार वर्णन किया है—"पिता की ओर से मेरे बाबा, विलियम रैमजे, ग्लासगो मे रासायनिक पदार्थों के उत्पादक थे। उनके परिवार मे बहुत दिनो से स्काटलैंड के पूर्व मे एक छोटे देहाती नगर हैडिग्टन मे रगसाजी का काम होता आया था। मेरा विचार है कि मेरे बाबा ने सबसे पहली बार लकडी के आसवन से अग्निजन (pyroligneous) अम्ल प्राप्त किया, चूने द्वारा निराकरण करके उन्होने चूने का एसीटेट टार रूप मे प्राप्त किया और इसका कासीस-तेल (गधकाम्ल) से पुन आसवन करके अम्ल को शुद्ध किया। बाइक्रोम के उत्पादन मे भी वे सर्वप्रथम थे और बहुत वर्षों तक अपने साझीदारो—मेसर्स टर्नबुल—के साथ टर्नबुल्स ब्लू (Turnbullsblue) भी वनाते रहे।

"मेरे नाना एक डाक्टर थे जो एडिनबरा मे प्रैक्टिस करते थे। आपने पाठ्यक्रम की कई पुस्तके लिखी थी। उनमे से एक का शीर्षक था ("Colloquium Chymica"। फलत रसायन मे रुचि मैने अपने परिवार के दोनो ओर से प्राप्त की।"

रैमजे ने ट्वीबिन्गेन से १८७२ मे डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। यह उपाधि आपने रुडोल्फ फिटिग (१८३५–१९१०) की सरक्षता मे आर्थो टालुइक अम्ल और उसके यौगिको पर कार्य करके प्राप्त की थी। दस वर्ष से अधिक तक, ग्लासगो मे लौटने के पश्चात् और ब्रिस्टल मे आचार्य होने (१८८०) के पश्चात् तक अकार्बनिक रसद्रवो (Chemicals) पर आप कार्य करते रहे। भौतिक रसायन के नये आविष्कारो की ओर आप आर्कषित हुए। यूनिर्वासिटी कालेज, लडन, मे अकार्बनिक रसायन

के आचार्य पद को विभूपित करने (१८८७) के बाद आपकी इसमे विशेप रुचि हो गयी। जब लार्ड रैले ने वायु एव अमोनिया से प्राप्त नाइट्रोजन के आपेक्षिक गुरुत्व के भेद का वर्णन किया तो आप उसका उत्तर देने के लिए तैयार थे" १८४९ मे कैवेडिश सोमायटी द्वारा छापी गयी कैवेडिश की जीवनी की जो प्रति मेरे पास है उसके इस वक्तव्य—जब नाइट्रोजन और आक्सिजन के मिश्रण मे विद्युत् चिनगारियाँ जलती है तो कुछ गैस, जो १।१२५ भाग से अधिक नही होती, बच जाती है—के सामने मैने "इमको ध्यान से देखो" लिख दिया था। सभवत इसी की दबी हुई स्मृति के कारण मैने १८९४ मे लार्ड रैले से कहा कि वह अवशिष्ट गस वायु से प्राप्त नाइट्रोजन के अधिक आपेक्षिक गुरुत्व का कारण हो सकती है। इसको ध्यान से देखने का फल एक नये तत्त्व आर्गन का आविष्कार हुआ और शीघ्र ही नीआन, क्रिप्टान और जीनान के आविष्कार हुए। यूरेनियम खनिजो से अम्ल की प्रतिक्रिया से प्राप्त की गयी गैस को पहचान कर आपने उसे हीलियम बताया।

शोध-कार्य मे विशिष्ट प्रायोगिक चातुर्य के कारण रैमजे महोदय (आर० ह्विटला-ग्रै के साथ) रेडियम से निकली रेडियम धर्मी गैस के सूक्ष्म परिमाणो को पृथक् करने, तौलने और उसका परमाणु-भार निकालने मे सफल हुए। रेडियम धर्मी विच्छेदन (Elements and Electrons, London, 1912) सबधी आपके विचार उस समय सामान्य रूप से नही माने जाते थे।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"हीलियम, आर्गन की भाँति, एक ऐसी गैस है, जो जल मे थोडी-थोडी विलेय है और जिस पर दाहक सोडा की उपस्थिति मे, विद्युत् विसर्जन के समय, और लालतपित मैग्नीशियम की उपस्थिति मे भी आक्सिजन के साथ कोई प्रतिक्रिया नही होती। आर्गन की भाँति नियत आयतन और नियत दाब पर इसकी विशिष्ट ऊष्मा से ज्ञात होता है कि यह तत्त्व एक-परमाणुक[2] है। अत इसका परमाणु और अणु एक ही होता है। इसका घनत्व मेरे और लैग्ले दोनो के अनुसार लगभग २ है, फलत ज्ञात गैसो मे हाइड्रोजन को छोड कर यह सबसे अधिक हलकी गैस है। दोनो के इन समान गुणधर्मो से स्पष्ट है कि हीलियम और आर्गन एक ही प्राकृतिक परिवार के है, यह भी स्पष्ट है कि इस परिवार के कम-से-कम तीन सदस्य तत्त्व और होना चाहिए। यह बात आवर्त-सारणी को देखने से ज्ञात होती है, जहाँ निम्नलिखित तत्त्व इस प्रकार साथ मे है—

1. Les Prix Nobel en 1904 से। 2. Monatomic

हाइड्रोजन (?)	फ्लोरीन	क्लोरीन	ब्रोमीन	आयोडीन
१	१९	३५ ५	८०	१२७
हीलियम	?	आर्गन	?	?
४	२०	४०	८२	१३२
लिथियम	सोडियम	पोटैसियम	रुबिडियम	सीजियम
७	२३	३९	८५	१३३

जब १५ लिटर आर्गन शुद्ध किया जा रहा था, तब तक डा० हैम्पसन अपने यत्र को निर्दोष बनाने मे सफल हो चुके थे। आपने द्रव वायु का एक लिटर हमको दे दिया। उससे खेल करने के पश्चात्, जिससे हम लोग उसके गुणधर्मो से खूब परिचित हो गये, हमारे पास पात्र मे लगभग १०० घन-सेटीमीटर वायु बची। मैने सुझाव दिया कि हमको इस सारे द्रव का लगभग पूर्ण उद्वाष्पन कर देना चाहिए, अतिम १० घन-सेटीमीटर का वाष्पन एक ऐसे पात्र मे करना चाहिए जिसमे गैस को एकत्रित किया जा सके। ऐसा ही किया गया। नाइट्रोजन और आक्सिजन को पृथक् करने के बाद २६ घन-सेटीमीटर एक गैस बची। इस गैस ने आर्गन के वर्णक्रम के अतिरिक्त एक चमकीली पीली और चमकीली हरी रेखा दिखायी। इन दोनो रेखाओ का तरग-दैर्घ्य (wave-length) क्रमश ५५७१ और ५५७० ५ था। यद्यपि नयी गैस का घनत्व ज्ञात करने पर केवल २२ ५ आया तथापि हम लोगो ने अनुमान लगाया कि इस क्रिप्टान (अर्थात् छिपी हुई) गैस का घनत्व शुद्ध करने पर हाइड्रोजन से ४० गुना अधिक होना चाहिए। फलत इसका परमाणुभार ८० होना चाहिए, क्योकि हम लोगो के प्रयोगो से यह बात पहले ही तय हो चुकी थी कि आर्गन की भाँति इसका अणु एव परमाणु-भार समान होना चाहिए।

"इस आविष्कार का विवरण रायल सोसायटी को ३ जून १८९८ को भेजा गया। आर्गन का परीक्षण द्रवण एव प्रभाजित आसवन से शीघ्र ही किया गया। १३ जून को हम यह घोषणा करने मे समर्थ हो सके कि १५ लिटर आर्गन के अल्प क्वथित भागो मे एक नयी गैस, जिसको हमने नीआन (नवीन) कहा, पायी जाती है। इसके वर्णक्रम मे विशिष्ट रूप से एक रगीन ज्वाला निकलती थी जिसमे अनेक लाल, नारगी और पीली रेखाएँ होती थी।

"सितबर १८९८ मे, एक नयी गैस के आविष्कार की घोषणा की गयी। इसका क्वथनाक और अधिक था तथा क्रिप्टान के प्रभाजन से इसको पृथक् किया गया था। हमने इसका नाम जीनान (अजीब) रखा।

वायु मे नीआन और हीलियम के परिमाण एक बार नापे जा चुके है, नीआन वायु के ८१,००० आयतन मे एक आयतन के अनुपात से होती है, हीलियम २४५,००० आयतन मे एक आयतन के अनुपात से। क्रिप्टान और जीनान बहुत ही थोडी मात्रा मे होती है। क्रिप्टान के एक आयतन से अधिक भाग को वायु के २०,०००,००० आयतन से नही निकाला जा सकता, जीनान का परिमाण वायु के १७०,०००,००० आयतन मे एक आयतन से अधिक नही है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

हीलियम, नीआन, आर्गन, क्रिप्टान और जीनान अपनी रासायनिक निष्क्रियता मे एक समान है। "भद्र गैसो (nobel gases)" के समूह के आविष्कार की आशिक भविष्यवाणी आवर्त-सारणी की नियम-परायणता (regularities) को देखकर पहले ही की जा चुकी थी। इस नये समूह के आविष्कार से सारणी मे विस्तार हो गया। यह तत्त्वो का ऐसा समूह है जिसकी सयोजकता शून्य ० है। ये असाधारण रासायनिक तत्त्व जो रासायनिक दृष्टिकोण से बिलकुल निष्क्रिय होते है, वस्तुत सारणी के दो सिरो को आदर्श रूप से जोडते है। तत्त्वो की शृखला मे इन नये तत्त्वो की कडियो के जुडने के बाद नीत्स ब्होर ने १९१३ मे परमाणु-रचना के सिद्धात को बनाना आरभ किया।

रैमजे और उसके साथियो ने जिन विधियो का विकास किया वे रेडियम-धर्मिता और जीवन-रसायन के लिए बडी महत्त्वपूर्ण बनती गयी, क्योकि इन दोनो मे सूक्ष्म परिमाणो से कार्य करने की आवश्यकता होती है। दूसरी ओर, जिन सिद्धातो पर गैसो को पृथक् किया गया था वे शीघ्र ही औद्योगिक उत्पादन मे काम आने लगे। हीलियम, नीआन और आर्गन केवल वैज्ञानिक कौतूहल का विषय नही रही और इनके स्रोत केवल एक या दो प्रयोगशालाओ तक ही सीमित न रहे। हीलियम के बडे स्रोत खनिजो के साथ मे पाये गये और शीघ्र ही यह गैस भयप्रद रूप से ज्वलनशील हाइड्रोजन के स्थान पर गुब्बारे भरने के काम मे आने लगी। हीलियम एव आर्गन रक्षक गैसो के रूप मे भी प्रयुक्त होने लगी। इनके वातावरण मे मैग्नीशियम, एल्यूमिनियम एव बेदाग (stainless) इस्पात का सधान किया जाने लगा। निष्क्रिय गैसो के वातावरण मे उच्च ताप पर भी धातुओ का आक्सीकरण नही हो पाता था। नीआन, आर्गन और क्रिप्टान का प्रतिदीप्त लैपो मे और नीआन चिह्नो मे प्रयोग होने लगा। नीआन और पारद के मिश्रण के अथवा क्रिप्टान की सूक्ष्म मात्राओ के विद्युत्-विसर्जन से अल्प ताप पर बडी दक्षता से बडा तीव्र प्रकाश उत्पन्न होता है।

१९०५

एडोल्फ़ फान बाएर (Adolf Von Baeyer)

(१८३५-१९१७)

"कार्बनिक रंग सामग्री (dyestuffs) की शोध एव हाइड्रोगंधित (hydroaromatic) यौगिको के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

एडोल्फ बाएर का जन्म बर्लिन मे हुआ था। आपके पिता उस समय प्रशा के जेनरल स्टाफ के कप्तान थे। बाद मे वे जेनरल हो गये और रिटायर होने के बाद प्रशा के जियोडेटिक इस्टीट्यूट के सभापति बना दिये गये। आपकी माता साहित्यिक इतिहासज्ञ एव प्रसिद्ध जूरी (Jurist) की पुत्री थी। छोटी अवस्था मे ही बाएर ने रसायन मे रुचि उत्पन्न कर ली थी। १९०० मे 'नीलसश्लेषण' पर दिये गये अपने भाषण मे आपने जिक्र किया है कि ईस्ट इडीज से आनेवाली रगसामग्री के "अद्भुत आचरण और उसकी अजीब गध" से आप उसकी ओर आकर्षित हुए। बर्लिन मे रसायन की शिक्षा के लिए कोई प्रयोगशाला नही थी, बाएर को इसलिए शिक्षा प्राप्त करने के लिए १८५६ मे बुन्शन से हाइडेलबर्ग जाना पडा। वहाँ आप फ्रीडरिश केकुले (१८२९-१८९६) से मिले और १८५८ मे वहाँ से आप स्नातक हुए। आपकी खोज का विषय "आर्सेनिक के कार्बनिक यौगिक" था। इसके पश्चात् आप केकुले के साथ घेट, बेल्जियम गये। बाएर अपने को स्व-शिक्षित रसायनज्ञ मानते थे, यद्यपि आपको बुन्सन से प्रयोगशाला का और केकुले से सैद्धातिक प्रशिक्षण मिला था।

१८६० मे आपको वाणिज्य अकादमी (गेवर्बे इस्टीट्यूट) बर्लिन मे छोटी-सी नौकरी मिल गयी। यहाँ आपकी शोध का मुख्य विषय यूरिक अम्ल बन गया। आपने इससे एक मनोरजक अम्ल प्राप्त किया और उसको बारबिट्यूरिक (barbituric) अम्ल नाम दिया, क्योकि बारबेरा नामक लडकी से आपकी सबसे घनी मित्रता थी। बारबिट्यूरिक अम्ल और यूरिक अम्ल के आक्सीकरण से प्राप्त अन्य अम्ल आपके लिए

उदाहरण सिद्ध हुए जिनसे नील से प्राप्त यौगिको को पहचाना जा सकता था। रग सामग्रियो मे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण रग—नील—मे आक्सिजन होती है। अत इसको बाएर ने किसी मातृ-पदार्थ का आक्सीकृत यौगिक समझा। यह यौगिक ऐनिलिन से मिलता-जुलता था और इसको बाएर ने इन्डोल कहा। इन्डोल को आक्सीकृत करके आक्सीन्डोल एव आक्सीनोल को और अधिक आक्सीकृत करके ईसाटीन ,नील द्वारा सरलता से प्राप्त किया जा सकता है। इन्डोल की यदि बेजीन से तुलना की जाय तो आक्सीन्डोल फिनोल के तुल्य हो जाता है, यद्यपि इनमे एक महवपूर्त्ण अतर है। फिनोल को वेजीन के ६ कार्बन परमाणुओ मे लगे ६ हाइड्रोजन परमाणुओ मे से एक हाइड्रोजन परमाणु को हाइड्राक्सिल समूह से प्रतिस्थापित करके प्राप्त किया जा सकता है। इसके पास वाला कार्बन परमाणु जिसको आर्थोस्थान (orthoposition) कहते है, इन्डोल मे प्रतिस्थापित होता है। विना नील की सहायता के भी ईसाटीन बेजीन अणु से प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए उसके अणु के एक हाइड्रोजन परमाणु को नाइट्रिक अम्ल के अवशेष (नाइट्रो समूह) से प्रतिस्थापित करना होता है, और इसके पास वाले कार्बन परमाणु के हाइड्रोजन को ऐसीटिक अम्ल अथवा उसके रासायनिक पडोसी प्रोपियोनिक अम्ल के अवशेष से प्रतिस्थापित करना होता है।

बाएर ने नील-सश्लेपण पर १८६५ से १८८३ तक कार्य किया। १८७२ से १८७५ तक आप स्ट्रासबुर्ग के नवसघटित विश्वविद्यालय मे रहे और १८७५ के पश्चात् आप लीबिग के उत्तराधिकारी होकर म्यूनिख मे रहे। आप ८० वर्प की अवस्था तक पढाते रहे और प्रयोग करते रहे। रसायन आपके लिए एक अति सरल यत्र परख-नली-से प्रयोग करना मात्र था। रिचर्ड विल्सटैटर एक कहानी सुनाया करते थे। एक बार एमिल फिशर ने एक आश्चर्यजनक यत्र के निरीक्षण के लिए सबको आमन्त्रित किया। यह यत्र था बुन्सन ज्वालक पर रखी हुई परखनली, जो अकुडे (Clamp) द्वारा एक घानी मे लगी हुई थी। इसी यत्र की सहायता से बाएर महोदय ने बेजीन और टर्पीनो (हाइड्रोगधित यौगिको) की रग-सामग्रियो के साथ सबध स्पष्ट किया। आपने यौगिको का एक नया वर्ग भी निकाला। इसमे आक्सिजन की सयोजकता साधारण रूप से २ न होकर ४ थी।

बाएर को मूलत सिद्धात बनाने से चिढ थी। तब भी आपने दो बहुत अधिक उपयोगी प्रत्ययो (concepts) का विकास किया जो थोडे सूक्ष्म परिवर्त्तनो के बाद आज भी माने जाते है। एक प्रत्यय मे पौधे की उन आधारभूत प्रतिक्रियाओ का

वर्णन है जिनसे कार्बन-डाइ-आक्साइड और जल, माडी एव शर्कराओ मे परिवर्त्तित होते है। दूसरा प्रत्यय वैट हाफ के उस सिद्धात से निकला है जिसमे कार्बन की चनु सयोजकता को स्पष्ट करने के लिए चतुष्फलक नमूना माना गया था। जब कार्बन परमाणु घेरा (ring) बनाने के लिए जुडते है तो, बाएर के सिद्धात के अनुसार, इन सयोजकताओ का कोण कुछ झुक-सा जाता है। इससे अणु पर जोर पडता है और इसी झुकाव पर इन यौगिको का स्थायित्व निर्भर है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

[1]"नील का मातृ-पदार्थ प्राप्त करने के लिए मैने आक्सीन्डोल से आरम्भ किया। इसमे केवल एक आक्सिजन परमाणु है और यह फिनोल की भाँति काम करता है। इसमे इन्डोल प्राप्त करने की समस्या फिनोल को बेजीन मे परिवर्त्तित करने के समान हो गयी। यह उपमा अधिक काम मे नही आयी क्योकि यह परिवर्त्तन उन्ही विधियो से, जो सिद्धात मे सरल मालूम होती है, हो सकता है जो आसानी से राल (resin) बन जा सकने वाले आक्सीन्डोल के लिए वर्जित है। ६ मास तक निष्फल कार्य करने के पश्चात् मैने अपनी समस्या पर अपने साथी स्टालश्मिड्ट (Stahlschtmidt) से बातचीत की,जो उस समय वाणिज्य अकादमी मे टेक्निकल रसायन पर भाषण करते थे। मुझे उनसे पता चला कि यशद रज को, जो पहले रग बनाने के काम मे आती थी, व्यापारिक रूप से अवकारक की भाँति प्रयुक्त किया जाने लगा था। मैने फौरन एक प्रयोग किया, किन्तु आक्सीन्डोल पर कुछ बस न चला। हताश होकर यशद रज के साथ मैने दहन-नली मे उसे चमकते अगारो के ताप तक गरम किया। अततोगत्वा अब (१८६६ मे) नील का मातृपदार्थ मेरे हाथ मे था। मै भी उसी प्रकार प्रसन्न हुआ जिस प्रकार एमिल फिशर १५ वर्षो के कार्य के पश्चात् प्यूरीन को प्राप्त करके प्रसन्न हुए होगे।

"१८७० मे पहली बार कृत्रिम नील का सश्लेपण हुआ, जब मैने अपने विद्यार्थी एमरलिंग के साथ फास्फोरस युक्त फास्फोरस-त्रि-क्लोराइड की ईसाटीन पर प्रतिक्रिया की। ईसाटीन उस समय केवल नील से प्राप्त की जा सकती थी। अत सश्लेपण

१ आपके "भाषण नीलसश्लेषण के इतिहास" (Uber Die Geschichte der Indigo Synthese) से। यह Berichte der Deutschen Chemischen Gesellschaft (1900) में दिया हुआ है। यह Gesammelte Werke(Braunschweig Friedr Vieweg und Sohn, 1905), Vol 11 में भी छपा है।

की पूर्ति तब हुई जब मैने कृत्रिम रूप से फिनाइल–ऐसीटिक अम्ल को ६ जून १८७८ मे ईसाटीन मे परिवर्त्तित किया।

"१८७८ और १८७९ मे मैने ईसाटीन से नील-सश्लेषण की विधि को और अधिक विकसित किया। मैने मालूम किया कि यह सश्लेषण ईसाटीन क्लोराइड पर आधारित था, जो पहले बनती थी। इस विधि से प्रतिस्थापित नीलो—जैसे द्विब्रोमो, त्रिब्रोमो, द्विनाइट्रो, द्विएमीडो—का भी उत्पादन सभव हो सका। चतुर्ब्रोमो नील विशेष रूप से सबसे अधिक मात्रा मे बन सका।

"आर्थो–नाइट्रो–फिनाइल–ऐसीटैल्डीहाइड को बनाने के प्रयोगो के दौरान मे मैने आर्थो-नाइट्रो-सिनैमिक अम्ल की ब्रोमाइड को क्षारो के साथ उबाला। मैने देखा कि इसमे कुछ नील बन जाता था। इस अन्वेषण पर और अधिक काम करके आर्थो–नाइट्रो–फिनाइल–प्रोपियोलिक अम्ल का आविष्कार हुआ और इससे नील का उत्पादन हो सका। मैने इस नयी खोज का पेटेंट १९ मार्च १८८० को कराया और उसी वर्ष के दिसबर मे इस पर पहला वैज्ञानिक लेख प्रकाशित हुआ।"

सिद्धांत और व्यवहार पर प्रभाव

नील-सश्लेषण और उसकी रचना पर बाएर के लम्बे, क्रमबद्ध कार्य का आरम्भ एक विधि की अचानक खोज से हुआ। इस विधि से कुछ यौगिको के मुख्य अश का पता चल सकता है। यशद रज के साथ यौगिको को गरम करने की विधि बडी महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई। बाएर के कहने पर, कार्ल ग्रायबे ने इस विधि को लाल रग सामग्री ऐलीजरीन के साथ प्रयुक्त किया, इससे ऐलीजरीन का रासायनिक ढॉचा ज्ञात हुआ। थोडे ही समय मे इस प्रयोगशाला से ऐलीजरीन के उत्पादन के लिए एक नये उद्योग का जन्म हुआ। इस उद्योग की सफलता से रासायनिक उत्पादको को बडी प्रेरणा मिली और वह नील के मँहगे सश्लेषण पर बराबर कार्य करते रहे। उसकी सब विधियो को मानकर नही प्रत्युत बाएर के कार्य के आधार पर नील को ऐनिलिन और ऐसीटिक अम्ल से प्राप्त किया गया। इसका असर व्यापार और खेती दोनो पर ही ससार भर मे हुआ। बगाल मे लगभग ५ लाख एकड भूमि नील के उत्पादन मे प्रयुक्त होती थी। उन्नीसवी शताब्दी के अत मे नील की रासायनिक फैक्टरी नील की खेती का स्थान लेती गयी और शीघ्र ही जर्मनी के रासायनिक उद्योग ने जिसमे बाएर से रासायनिक प्रशिक्षण पाये हुए कार्यकर्त्ता थे, नील की खेती से बाजी मार ली।

१८८३ में बाएर ने घोषणा की कि आपने नील के अणु के प्रत्येक परमाणु के स्थान

को ज्ञात कर लिया है। ४० वर्ष बाद इसमे कुछ सुधार की आवश्यकता पडी। अन्य रसायनज्ञो द्वारा कुछ बदले जानेपर, नील के अणु की स्पष्ट अणु-रचना से उससे सबधित अनेक अन्य रग-सामग्रियो का बनाना सम्भव हुआ। इन रगसामग्रियो मे से दो ब्रोमीन परमाणुओ से युक्त यौगिक का रग एक घोघे (म्यूरक्स ब्रैडरिस) द्वारा निकाले गये बैजनी रग से मिलता था। इसी बैजनी रग का प्राचीन काल मे प्रयोग होता था।

१९०६

हेनरी मोआयसां (Henri Moissan)

(१८५२ – १९०७)

"तत्त्व फ्लोरीन को पृथक् करने की शोध के लिए और अपने नामवाली विद्युत भ्राष्ट्र (furnacc) को विज्ञान की सेवा में लाने के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

हेनरी मोआयसाँ का जन्म पेरिस मे हुआ था। आपने एक औषधालय मे काम करते हुए रसायन का अध्ययन किया। आपके रसायन के आचार्य देहेरायँ (Deherain) ने आपको विश्वास दिलाया कि आपका क्षेत्र शुद्ध विज्ञान था। 'पत्तियो के अधेरे में श्वसन' पर थीसिस प्रकाशित करके आप १८७६ मे अकार्बनिक रसायन की ओर मुडे। रसायन के इस विषय की ओर उस समय के लोगो का ध्यान अपेक्षाकृत कम था। पहले आपने लोह के एक अद्भुत प्रकार का अन्वेषण किया। यह बहुत बारीक चूर्ण था, जो सरलता से प्रज्वलित हो जाने के कारण, अग्निजन लोह कहलाता है। ४ वर्ष के कार्य के पचात् २० जून १८८८ को आपने तत्त्व फ्लोरीन के पृथक् हो जाने की घोषणा की। विशेष रूप से सक्रिय और विषालु तत्त्व पर आपकी शोध का यह आरम्भ था। आपने इस तत्त्व के कार्बनिक यौगिको——मिथाइल फ्लोराइड से लेकर कार्बन-चतुर्फ्लोराइड तक——का अन्वेषण किया और आपने दिखाया कि गधक का षष्ठ फ्लोराइड नाइट्रोजन की भाँति स्थायी और निष्क्रिय है।

यह सब प्रयोगशाला की थोडी सुविधाओ में किया गया था। इसमे कोई आश्चर्य नही है कि बाद मे आपने घोषणा की कि फ्लोरीन ने उनके जीवन को सम्भवत १० वर्ष कम कर दिया था। बाद मे (१९०० से और उसके बाद) पेरिस विश्वविद्यालय में विज्ञानो की फैकल्टी के आचार्य पद पर पहुँच कर आपको अधिक अच्छी सुविधाएँ प्राप्त हुई।

१८९२ मे मोआयसा ने विद्युत ऊष्मक के लिए विशेष रूप से व्यावहारिक बदोबस्तों

को मालूम किया। इसमे आप कैलसियम कार्बाइड बनाते थे। इसके औद्योगिक उपयोग पर आपने कदाचित् विचार ही नही किया। टगस्टन धातु और एक प्रकार का इस्पात, जिसमे कार्बन के स्थान पर बोरान का उपयोग होता था, भी इसी ऊष्मक मे बनाये गये।

मोआयसा ने भूगर्भ-अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला कि हीरा एक द्रव अथवा किसी लेई-जैसे पदार्थ से बना होगा। "यह कार्बन बडे ऊचे दाब पर केलासित हुआ होगा, लोह द्रव दशा मे था और किसी कारण अचानक ठडे होने से उसकी सहति मे एक दम सकोच हुआ होगा, इस प्रक्रिया मे कार्बन की घनता २ से ३ ५ हो गयी होगी और इस प्रकार हीरा बन गया होगा।"

मोआयसा ने बाद के वर्षो मे अपना अधिक समय अकार्बनिक रसायन की पुस्तक पर लगाया, इसमे पॉच बडी-बडी जिल्दे है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

हमारे विद्युत्-भ्राष्ट्र का पहला नमूना, जो दिसम्बर १८९२ मे विज्ञानो की अकादमी को दिखाया गया था, कली चूने का बना था। यह भली प्रकार से बनाये गये चूने के दो कुन्दो (blocks) से बना था जो एक दूसरे पर रखे हुए थे। नीचे वाले टुकडे मे एक लम्बाकार नाली (groove) थी। इसमे से होकर दो विद्युदग्र निकलते थे। बीच मे खोखला स्थान था जो घडिया का काम करता था। इस खोखले स्थान की गहराई को बदला जा सकता था। इसमे कई सेटीमीटर मोटी तह उस पदार्थ की होती थी जिसको चाप द्वारा गरम करना होता है। इस खोखले स्थान मे एक कार्बन की घडिया को भी, जिसमे गरम किया जाने वाला पदार्थ रहता है, रखा जा सकता है। ऊपर का कुन्दा उस भाग मे कुछ खोखला रहता है, जो चाप के सीधे ऊपर रहता है। जैसे-जैसे विद्युत-धारा के अत्यधिक ताप से चूने की सतह पिघलती है और उसको खूब चमक दे देती है, इसके बीच मे एक गुम्बद ऐसा बन जाता है। इससे भ्राष्ट्र के बीच मे रखी घडिया पर पडने वाली सारी ऊष्मा का पता चलता है।

"यह यत्र एक प्रतिक्षेपक (Reverberatory) विद्युत् भाष्ट्र है, जिसके

१. पहला अश विक्टर लेनहर द्वारा अनूदित 'The Electric Furnace (Easton, Pa The Chemical Publishing Co , 1904) के पृष्ठ ५ और २१ से लिया गया है। दूसरा Smithsonian Institution Reports—१८९७-के पृष्ठ २६८ और बाद के पृष्ठों से उद्धृत है।

विद्युदग्र हिलाये-डुलाये जा सकते है। यह बात बहुत जरूरी है क्योकि विद्युदग्रो के हिलाने से चाप शीघ्र ही बन जाता है और उसको इच्छानुसार छोटा या लबा किया जा सकता है, सक्षेप मे यह प्रयोग को चलाना सरल बना देता है।

"अब तक बहुत-से प्रायोगिक कार्यकर्त्ताओ ने चाप द्वारा उच्च ताप प्राप्त किया है, किन्तु मुझसे पूर्व किसी ने भी धारा की विद्युतीय एव ऊष्मीय क्रियाओ को पृथक् नही किया।

"भ्राष्ट्रा के इन नमूनो से लगभग ३५०० ° से० तक का ताप सरलता से प्राप्त किया जा सकता है।

"सश्लिष्ट हीरे —२०० ग्राम स्वीडेन के मृदु लोह के १ से दो सेटीमीटर लम्बे एव एक सेटीमीटर व्यास वाले सिलेडर काट कर एक कार्बन घडिया मे रखे गये और उसको शर्करा से प्राप्त कार्बन से पूर्णरूप से ढक दिया गया। ३५ से ६० वोल्ट की धारा से उसको ३ से लेकर ६ मिनट तक गरम किया गया। भ्राष्ट्र के ढक्कन को उठा करके कपडे से लिपटे हाथ मे पकडे चिमटे से घडिया के किनारो को पकडा गया और उसको उठाकर ठडे पानी भरे पात्र मे एकदम डुबो दिया गया। घडिया और उसके पदार्थ कई मिनट तक लाल तपे रहे, उसमे से गैस के छोटे छोटे बुलबुले भी निकले जो सतह पर आकर बिना जले ही टूट गये। ताप जल्दी गिर गया, प्रकाश कम हो गया और इस प्रकार प्रयोग भी समाप्त हो गया।

× × ×

"मैने सबसे पहले अजल हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल तैयार किया और ज्ञात किया, जैसा कि फैरेडे और गोरे पहले ही दिखा चुके थे कि यह अचालक था।

"अम्ल को चालक बनाने के लिए प्रयोग के पहले उसमे २ से १० घन सेटीमीटर तक शुष्क किया एव पिघलाया हुआ पोटैसियम फ्लोराइड का द्रव फ्लोहाइड्रेट मिलाया गया। इन परिस्थितियो मे अम्ल का विच्छेदन बराबर होता जाता है और हमको ऋण विद्युदग्र पर एक ऐसी गैस मिलती है जो जलने पर रगहीन ज्वाला देती है और जिसमे हाइड्रोजन के सब लक्षण होते है। धन विद्युदग्र की ओर निकलने वाली गैस हाइड्रोक्लोरस अम्ल से मिलती है और इसकी गध बडी भेदक और बुरी लगने वाली होती है। यह गले और नेत्रो की झिल्ली को भी प्रभावित करती है। नयी गैस मे बडे ऊर्जात्मक गुण होते है। उदाहरणतया गधक उसके सपर्क मे आने पर जलने लगता है।

"केलासित सिलिकन, ठडा होने पर भी, इस गैस के सपर्क मे दहकने लगता है और बहुत तीव्र प्रकाश के साथ, कभी-कभी चिनगारियाँ देता हुआ, जलने लगता है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

मोआयसा की सफलताओ मे सबसे अधिक आकर्षक हीरो के कृत्रिम उत्पादन की थी। आपने एक ऐसी विधि का विकास किया जिसका, अनुमान के अनुसार, प्रकृति मे भी उपयोग हो सकता है। कार्बन मिले गले हुए लोह को अचानक ठडा करने पर बाहर एक कडी पर्त बन जाती थी, किन्तु इसके अन्दर द्रव लोह ठडा होते समय बडे ऊँचे दाब पर रहता था। आपका यह कार्य दिलचस्प था, किन्तु व्यावहारिक दृष्टिकोण से कैलसियम कार्बाईड और फ्लोरीन पर आपका कार्य बडा महत्त्वपूर्ण था। आपके मरने के साल, १९०७, मे १,६५,००० टन कैलसियम कार्बाईड का उत्पादन होता था। बीस वर्ष बाद इसकी उत्पादन-मात्रा चौगुनी हो गयी और विद्युत्-भ्राष्ट्र से बनने वाले पदार्थो मे कई और पदार्थ, जैसे एल्युमिनियम, फास्फोरस, मिश्र धातुएँ और सिलिकन कार्बाईड (कार्बोरडम) आदि जुड गये।

रासायनिक कच्चे पदार्थ के रूप मे फ्लोरीन का विकास अपेक्षाकृत बहुत धीमा हुआ। एथिलीन के फ्लोरीन युक्त पालीमर (polymers) १९३९ मे उपयोग मे आये। टेफ्लान, जो एक चतुर्फ्लोरो एथिलीन प्लास्टिक है, शीघ्र ही इस देश मे काम मे आने लगा। क्लोरीन और फ्लोरीन द्वारा प्रतिक्रिया की हुई मेथेन का प्रशीतक (refrigerant) फ्रीआन के रूप मे बहुत अधिक उपयोग हुआ। फ्लोरीन युक्त ऐसीटिक अम्ल, जो आतरिक रूप से बडा घातक विष है, चूहे मारने वाले पदार्थ का आधार है।

१९०७

एडुअर्ड बुख्नेर (Eduard Buchner)

(१८६०-१९१७)

"जीव-रसायन पर शोध एव कोशिका-रहित किण्वन की खोज के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

एडुअर्ड बुख्नेर ने रसायन का अध्ययन अपनी जन्मभूमि म्यूनिख मे आरम्भ किया, किन्तु बीच मे आर्थिक कष्टो के कारण आपको पढना छोडना पडा। आपके बडे भाई हन्स ने १८८४ मे आपको विज्ञान पढने के लिए सहायता दी। बाएर की सरक्षता मे रसायन और कार्ल फान नेगेली की सरक्षता मे वनस्पति-विज्ञान आपके मुख्य विषय थे। हस ने आपको किण्वन मे होने वाली प्रतिक्रियाओ की ओर आकर्षित किया। बुख्नेर ने अपने पहले लेख मे जो, १८८५ मे प्रकाशित हुआ था, किण्वन पर आक्सिजन के प्रभाव की चर्चा की। १८८८ मे आपको डाक्टर की उपाधि मिली और बाद मे ५ वर्ष तक आप बाएर की सरक्षता मे काम करते रहे। किण्वन अब भी आपका प्रिय विषय था। आप यीस्ट को पीस करके कोशिकाओ के नष्ट होने का किण्वन पर प्रभाव देखना चाहते थे। आपसे बडे सभी लोगो ने कहा कि इस प्रकार कार्य करके किसी नयी बात का पता नही चल सकता। हन्स बुख्नेर उस समय क्षारो के साथ जीवाणुओ को पचा (digest) करके औषध रूप मे उपयोगी प्रोटीन प्राप्त करना चाहते थे, फलत. जीवाणुओ अथवा यीस्ट को पीस करके निकाले गये कोशिका रस मे भी आपको दिलचस्पी थी। ट्वीबिन्गेन मे विश्लेषक एव औषध रसायन पढाने से प्राप्त अवकाश मे एडुअर्ड बुख्नेर ऐसे ही रसो के साथ प्रयोग करते गये। १८९६ मे आपने एक मौलिक परीक्षण किया। आपने यीस्ट को पीस करके निकाले गये रसो को स्थायी बनाने के लिए शर्करा के साद्र घोलो का प्रयोग किया। आपने देखा कि किण्वन धीरे-धीरे आरम्भ हो गया था, शीघ्र ही आपने निश्चित रूप से सिद्ध किया कि इस किण्वन में कोई कोशिकाए उपस्थित नही थी और ऐलकोहल तथा ऐसीटोन द्वारा मारी गयी यीस्ट भी शर्कराओ मे

किण्वन आरम्भ कर सकती थी। इस मत के लिए आपको बडे विरोध का सामना करना पडा। १८९८ मे एग्रीकल्चरल कालेज, बर्लिन में आपको आचार्य पद मिला। इससे आप जीव-रसायन पर अपना कार्य विस्तृत करने मे समर्थ हो सके। बुख्नेर की मृत्यु रूमानिया मे जर्मन सेना के एक मेजर के रूप मे हुई।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"यीस्ट कोशिकाओ को एक अपेक्षाकृत सख्त झिल्ली से घिरे हुए छोटे बुलबुले समझना चाहिए जिनमे अर्धद्रव पदार्थ—प्रोटोप्लाज्म रहता है।

"जहाँ तक सूक्ष्मदर्शी से दिखाई देता है, ये झिल्लियाँ एकरूप की होती है, तथापि इनमे कुछ महीन छिद्र होने चाहिए जिनके द्वारा खाद्य पदार्थ कोशिकाओ मे पहुँचता है और कुछ पदार्थ उससे बाहर निकलते है।

"कोशिका के पदार्थों के अन्वेषण के लिए, झिल्ली और प्लाज्मा नली को हटाना आवश्यक था। रासायनिक रूप से सक्रिय विलायक और उच्च तापो के प्रयोग को बचाना आवश्यक था। इस प्रक्रिया को कम-से-कम समय मे भी करना आवश्यक था जिससे प्रक्रिया मे परिवर्तन न हो सके।

"मेरी फान मनासाई (Marie Von Manassein) ने जो वियेना मे वीजनेर के इस्टीट्यूट मे काम करती थी, कदाचित् पहली बार १८७२ मे यह दिखाया कि यीस्ट को पीसते समय जो कठिनाइयाँ होती है, उनको स्फटिक अथवा बालू के मिलाने से बचाया जा सकता है। तब मूसल को ऐसे बिंदु मिल जाते है जिन पर पीसना सरल हो जाता है। इस प्रकार मेरे प्रयोग करने के पहले एडोल्फ माएर, ए० फर्नबाख (A. Fernbach) तथा एमथर द्वारा ये सूक्ष्म जीवाणु पीसे गये।

जब यीस्ट को उसके समान भार स्फटिक बालू और उसके भार के ५ वे भाग कीसेल-गुह् र के साथ मिला दिया जाता है तो बडे खरल मे रख कर रज-जैसे शुष्क इस मिश्रण को लबे बट्टे से पाँच मिनट मे पीस लिया जाता है। पीसने के बाद मिश्रण काला भूरा और सने आटे की भाँति सुघट हो जाता है।

"जब इस मोटे मिश्रण को मोटे कपडे मे रखकर द्रवचालित प्रेस से दबाया जाता है तो उसमे से द्रव-रस दाब के कारण निकलने लगता है। दाब को ९० kg प्रति वर्ग सेटीमीटर (लगभग १२५० पौड प्रति वर्ग इच) तक क्रमश बढाना पडता है। कुछ

1. Les Prix Nobel en 1907 से अनूदित।

ही घटो मे ५०० घन सेंटीमीटर द्रव को लगभग १००० ग्राम यीस्ट से प्राप्त किया जा सकता है। इससे स्पष्ट है कि कोशिका का आधे से अधिक भाग दबकर निकल आता है।

"मेरे सब प्रयोगो का सक्षेप यह कि जीवित यीस्ट की कोशिकाओ से किण्व करने वाले सक्रिय द्रव को पृथक् किया जा सकना है।

"पौधो आर जानवरो की कोशिकाएँ अब वर्तमान स्पष्ट रूप से उन फैक्ट्रियो की भाँति मालूम होती है जहा पृथक् कार्यशालाओ मे सब प्रकार के पदार्थो का उत्पादन होता है। इस कार्य मे सबसे प्रमुख है ऐंजाइम।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

रसायन मे किण्वन का सदैव प्रमुख स्थान रहा है। थोडा-सा "किण्व" जिस प्रकार पौधो के बहुत अधिक पदार्थो का परिवर्त्तन कर सकता है उसी प्रकार, प्राचीन कीमियागरो के अनुसार, छोटा पारस पत्थर धातु पर जादू की प्रतिक्रिया कर सकता है। उन्नीसवी शताब्दी मे इस बात का पता चला कि किण्वन जीवाणु की सहायता से होता है। इस खोज से निकले जीवन सिद्धातो (vitatistic theories) के अनुसार किण्वन एक ऐसी शक्ति का रूप था जो जीवन-शक्ति से सबधित थी। इसके विरोध मे यात्रिकी सिद्धातो (mechanistic theories) के अनुसार किण्वन जीवाणुओ के विच्छेदन के साथ होने वाले कम्पनो द्वारा शर्कराओ के अणुओ के टूटने से होता था। इन दोनो सिद्धातो के दोनो सिरो को जोडना असम्भव प्रतीत होता था। इन दोनो सिद्धातो मे मतभेद क्रमश कम होता गया, जब यह दिखाया गया कि जब तक समस्या का आपेक्षिक सबध स्पष्ट रूप से नही बताया जाता तब तक न जीवन का महत्त्व है और न यात्रिक सिद्धात का। जब बुख्नेर ने यह घोषणा की कि वे जीवित कोशिकाओ के बिना ही किण्वन कर सकते थे तो उन्होने समझा कि वे जीवन-सिद्धातो को काट रहे है। परिस्थिति लगभग ६० वर्ष पुरानी परिस्थिति के समान थी जब जर्मन रसायनज्ञ वोहलर ने कहा कि वह जीवाणु के बिना ही यूरिया बना सकते थे। जीवन-सिद्धात के प्रतिपादक न उस समय और न इस समय बुख्नेर के सामने से अपने स्थान से हटे। मैक्स रुबनेर (Max Rubner) ने जो उस समय के प्रख्यात कायिकीज्ञ थे, सीधे प्रमाणो द्वारा स्पष्ट करने का दावा किया कि किण्वन जीवन की प्रक्रिया है (ऐंजाइम की प्रतिक्रिया नही)। आपका प्रमाण यह था—टैनिन, रस अथवा पिसी हुई कोशिकाओं द्वारा किण्वन को रोक सकता है, किंतु कोशिकाओ द्वारा होने वाले किण्वन को नही। एडुअर्ड बुख्नेर के लिए इसकी व्याख्या सरल थी। जिस ऐंजाइम (ज़ाइमेज) द्वारा

किण्वन होता है वह जीवित कोशिकाओ से नही निकलता और फलत टैनिन द्वारा नष्ट नही किया जा सकता। जब कोशिकाओ को मार अथवा उनकी झिल्लियो को फाड दिया जाता है तो टैनिन उस पर प्रतिक्रिया कर सकता है।

किण्वन ऐंजाइम-प्रक्रिया का रूप है---इस नये प्रत्यय से यीस्ट और ऐलकोहल के उत्पादन मे वृद्धि हुई। यह बात समझने मे बडी सुविधा हुई कि पौष्टिक पदार्थ--जैसे अमोनिया लवण, पेप्टोन और फास्फोरिक अम्ल के लवण भी---जाइमेज के बनाने मे सहायता देते है। इसलिए इस उपयोगी ऐंजाइम की पाचक ऐंजाइम, पेप्टेज, द्वारा विनाश से रक्षा की जानी चाहिए। यीस्ट की प्रक्रिया को समझने का लाभ किण्वन प्रक्रियाओ के नियत्रण का हुआ है। इस पर होने वाले और अन्वेषण से ज्ञात हुआ कि प्रक्रियाओ तथा प्रसाधनो (factors) की सख्या उनकी अनुमानित सख्या से कही अधिक थी।

१९०८

अरनेस्ट रदरफोर्ड (E1nest Rutherford)

(१८७१--१९३७)

"तत्त्वों के विघटन एवं रेडियमधर्मी पदार्थों के रसायन-संबंधी अन्वेषण के लिए ।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

अग्रेज माता-पिता से अरनेस्ट रदरफोर्ड का जन्म नेल्सन, न्यूज़ीलैड मे हुआ था। स्कूल मे अद्‌भुत योग्यता प्रदर्शित करने के कारण आपको न्यूजीलैड विश्वविद्यालय से एक छात्रवृत्ति मिली। इस विश्वविद्यालय मे उस समय ७ आचार्य और लगभग १५० विद्यार्थी थे। अपनी बी० एस-सी० उपाधि के लिए १८९४ मे आपने अपने अन्वेषणों को 'लोह् का उच्च आवृत्ति-विसर्जन द्वारा चुबकन' शीर्षक प्रबन्ध मे प्रकाशित किया। हर्ट्‌ज महोदय की खोजो से इस कार्य के लिए आपको प्रेरणा मिली थी। रदरफोर्ड ने अन्य बातो के साथ यह भी दिखाया कि चुबकन केवल ऊपरी सतह् पर होता है और लोह् की चुबकित सुई से अम्ल द्वारा घोल कर उसको हटाया जा सकता है। कैम्ब्रिज मे जे० जे० टामसन की प्रयोगशाला मे अपने दोलको और परिचायको के कारण आपको ख्याति प्राप्त हुई। यहाँ आपने १८९५ मे कार्य करना आरम्भ किया था। ३ वर्ष बाद जे० जे० टामसन ने मैक्गिल विश्वविद्यालय, मान्ट्रियल के आचार्य पद के लिए आपकी सिफारिश की। रेडियमधर्मी विघटनो पर कार्य करने के लिए यहाँ फ्रेडरिक साडी आपके पास आये। १९०७ के बाद आप मैन्चेस्टर विश्वविद्यालय मे आचार्य बने। लन्दन के रैमजे महोदय से आपकी कभी-कभी जोरदार प्रतियोगिता होती थी। प्रथम विश्व-युद्ध के समय आपने अपने दोलको एव परिचायको का उपयोग पनडुब्बियो के पता लगाने मे किया। १९१९ मे नाइट्रोजन के 'कृत्रिम विघटन' की आपने खोज की, अल्फा विकिरण के प्रभाव से नाइट्रोजन, तत्त्व होते हुए भी, विघटित हो जाती है और हाइड्रोजन बन जाती है।

रदरफोर्ड की दृढ धारणा थी कि आचार्यो को कार्य करने की अपेक्षा सोचने मे अधिक समय बिताना चाहिए। फलत आपने अपने साथियो से 'अपने कामो मे दिलचस्पी लेकर अपने सब कामो के प्रशासन के लिए' अनुरोध किया। आपका विचार था, 'यदि ऐसा नही होगा, तो सिविल शासको को वैज्ञानिको के प्रशासन मे हस्तक्षेप करना पडेगा और तब केवल भगवान् ही सहायक हो सकेगे।'

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"अल्फा-किरणो के अध्ययन से रेडियम-धर्मिता का पर्याप्त विकास हुआ है और इससे अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्यो एव उनके सबधो का पता चल सका है।

"यद्यपि सारा प्रमाण इसी ओर था कि अल्फा-कण हीलियम का परमाणु है तथापि इसको निश्चित रूप से सिद्ध करने के लिए कोई प्रयोग कर दिखाना अत्यधिक कठिन ज्ञात हुआ। यदि किसी प्रकार प्रयोग द्वारा यह दिखाया जा सकता कि अल्फा-कण पर वस्तुत दो इकाई चार्ज होता है तो अल्फा-कण और हीलियम परमाणु के सबध को और अधिक पुष्ट किया जा सकता था। इस कार्य के लिए रदरफोर्ड और गाइगर ने मिलकर रेडियमधर्मी पदार्थ से निकलने वाले अल्फा-कणो को सीधे गिनने के लिए एक वैद्युत विधि निकाली। एक अल्फा-कण द्वारा गैस मे उत्पादित आयनीकरण बहुत ही कम होता है और इसका विद्युत्-परिचय किसी अत्यत सूक्ष्म विधि के बिना नही किया जा सकता है। फलत, अल्फ़ा-कण द्वारा उत्पादित आयनीकरण का आवर्धन करना आवश्यक प्रतीत हुआ। इसके लिए अल्फा-कणो को एक छोटे छिद्र से निकालने की व्यवस्था की गयी। ये कण रेडियमधर्मी पदार्थ से निकलकर एक पात्र मे आते थे जिसमे चिनगारी मान (sparking value) वाले विद्युत् क्षेत्र मे अनावृत (exposed) वायु या और कोई गैस रहती थी। इन परिस्थितियो मे अल्फा-कणो के गैस मे टक्कर खाने पर बहुत अधिक सख्या मे और आयन उत्पन्न होते थे। इस प्रकार, अल्फा-कण के विद्युत्-प्रभाव मे कई हजार गुना आवर्धन किया जाना सम्भव हुआ।

"परख-पात्र मे छोटे छिद्र द्वारा ज्ञात समय मे आये अल्फा-कणो की सख्या की यथार्थ गणना की विधि इसी प्रकार विकसित की गयी। इससे किसी भी रेडियमधर्मी पदार्थ की पतली फिल्म द्वारा प्रति सेकड निकले अल्फाकणो की सख्या जानी जा सकती थी। इसी विधि से दिखाया गया कि एक ग्राम रेडियम से और उसकी अल्फा-

1. Les Prix Nobel en 1908 से अनूदित।

किरणो से निकले पदार्थो के उसके साथ सतुलन से ३ ४ x $१०^{१०}$ अल्फ़ा-कण प्रति सेकड निकलते है।

"हम यह देख चुके हैं कि यह मानने के लिए अनेक कारण है कि कई रेडियमधर्मी पदार्थो से निकले अल्फा-कण सहति (mass) और रचना (constitution) मे विद्युत्मय होते है और हीलियम परमाणु से बने होते है। फलत हमे यह निष्कर्ष निकालने के लिए बाध्य होना पडता है कि यूरेनियम और थोरियम-जैसे रेडियमधर्मी पदार्थो के मूल परमाणुओ को कम-से-कम आशिक रूप मे, हीलियम परमाणुओ से मिलकर बनना चाहिए। ये रेडियमधर्मी रूपान्तर के समय निश्चित क्रम मे ऐसी गति (rate) से निकलते है जिसको प्रयोगशाला की विधियो से नियत्रित नही किया जा सकता।

"यह बात बडी महत्त्वपूर्ण है कि हीलियम-जैसे रासायनिक रूप से अक्रिय तत्त्व, यूरेनियम, थोरियम एव रेडियम की परमाणु-रचना मे इतना महत्त्वपूर्ण भाग लेते है। यह हो सकता है कि हीलयम का जटिल परमाणुओ को बनानेवाला यह गुण-धर्म किसी प्रकार से अन्य परमाणुओ के साथ सयोग को रोककर उसको अक्रिय बना देता हो।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

एक समय मे, पदार्थ के सूक्ष्मतम कणो को, जिनका और विभाजन नही हो सकता था, ठोस गेद से व्यक्त किया जाता था। यह नमूना देखने और तोले जा सकने वाले पदार्थों को देखकर बनाया गया था और कुछ रासायनिक प्रतिक्रियाओ की व्याख्या के लिए उपयोगी भी था। जब इनके प्रकाश एव विद्युत्-धर्मो पर विचार किया गया तो इससे बिलकुल पृथक् नमूने के बनाने की आवश्यकता पडी। सर्वप्रथम, परमाणु को धनात्मक एव ऋणात्मक चार्ज युक्त भागो मे तोडना था। इसके पश्चात्, जैसा टामसन ने किया था, ऋणात्मक चार्ज की व्याख्या छोटे-छोटे बिन्दुओ को मानकर करनी थी। रेडियमधर्मी तत्त्वो के विघटन पर विचार करते समय रदरफोर्ड को परमाणु के किसी निश्चित नमूने के बनाने की आवश्यकता पडी। तत्त्वो के विघटन के साथ-साथ धनात्मक चार्ज युक्त हीलियम परमाणु और इनके अपेक्षाकृत लगभग भाररहित कण, इलेक्ट्रान निकलते हैं। फलत रदरफोर्ड ने निष्कर्ष निकाला कि परमाणु पदार्थ की अतिम इकाई नही है। वह परमाणु से भी सूक्ष्म कणो की व्यवस्था से बना हुआ है। रेडियमधर्मी तत्त्वो मे यह व्यवस्था अस्थायी होती है। अस्थायी परमाणु उन कणो को मुक्त करके, जिनसे दूसरे तत्त्व बन सकते है, स्थायी हो जाता है। ये कण धनात्मक नाभिक

(nucleus) मे से, जिसमे परमाणु की सहति केन्द्रित होती है, निकलते है। इस केन्द्र के चारो ओर इलेक्ट्रान का वातावरण रहता है। ये इलेक्ट्रान नाभिक से विभिन्न छदो (shells) पर रहते है। ये छद नाभिक के आकार की अपेक्षा नाभिक से बहुत अधिक दूरी पर रहते है।

रदरफोर्ड महोदय ने एच० गाइगर (H Geiger) के साथ अल्फा-कणो की गणना के लिए जिस यत्र का विकास किया था, उससे तत्वो के विघटन की प्रक्रिया के लिए गणितसूत्रो का निकालना सभव हुआ। रेडियमधर्मी विघटन के लिए रासायनिक प्रतिक्रियाओ की भाँति इस कल्पना (assumption) की आवश्यकता पड़ी—'समय की इकाई (सेकड अथवा मिनट) मे प्रतिक्रिया करनेवाले अथवा विघटित होने-वाले परमाणुओ का उस समय के सारे परमाणुओ के साथ निश्चित अनुपात होता है।'

परमाणु सबधी रदरफोर्ड के विचारो का नील्स ब्होर और अन्य वैज्ञानिको ने विकास किया। विकसित विचार इस प्रकार है—परमाणु मे एक छोटा किन्तु बहुत भारी नाभिक होता है और इससे बहुत दूर विशिष्ट छदो पर इलेक्ट्रान घूमते रहते है। यह नाभिकीय भौतिकी का आधारभूत प्रत्यय (concept) है। परमाणुओ के विघटन के लिए गणितसूत्रो को निकालने से बहुत ही अधिक सूक्ष्म मात्रा मे पाये जाने वाले पदार्थो को, जिनका परिचय (identification) अन्य विधियो से नही हो सकता था, उनके विशिष्ट विकिरणो के कारण पहचाना जा सका। जितने समय मे किसी रेडियमधर्मी तत्त्व के परमाणुओ की सख्या पहले की अपेक्षा आधी हो जाती है, उसको अर्ध-जीवन (half-life) कहते है और इसको गणितसूत्रो से सरलतापूर्वक जाना जा सकता है।

१९०९

विल्हेल्म आस्ट्वल्ड (Wilhelm Ostwald)

(१८५३–१९३२)

"उत्प्रेरण पर कार्य के लिए और रासायनिक संतुलन की परिस्थितियों एवं रासायनिक प्रतिक्रियाओं के वेगो को ज्ञात करने के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

छोटी अवस्था मे ही विल्हेल्म आस्ट्वल्ड को रसायन के प्रयोगो मे रुचि हो गयी। ११ वर्ष की अवस्था मे ही आप आतशबाजी और पारदर्शक चित्र दिखाने के लिए विशेष-यत्र (contraptions) स्वय ही बना लेते थे। डोरपट विश्वविद्यालय मे आपने जूलियस टामसेन (Julius Thomsen) द्वारा ज्ञात की गयी रासायनिक प्रतिक्रियाओ की ऊष्मा के सबध मे पढा। अचानक ही आपको यह विचार सूझा कि जलीय विलयन मे कोई भी दूसरा गुणधर्म पदार्थ की वास्तविक परिस्थितियो पर प्रकाश डाल सकता है। अपनी यात्रिक सुविधाओ मे आपको सबसे सरल गुणधर्म घनत्व प्रतीत हुआ। इस विधि के व्यापक महत्त्व पर आप इतने दृढ थे कि ताप-रसायन के समान इस क्षेत्र को बनाने के लिए आपने इसको 'आयतन रसायन' का नाम दिया।

इन अन्वेषणो और दूसरे भौतिक गुणधर्म-प्रकाशवर्तन (optical refraction) के मापन से डाक्टर की उपाधि के लिए आपकी थीसिस (१८७८) मे पूरी हुई। आपका मुख्य ध्येय रासायनिक बधुत्व के बारे मे और अधिक ज्ञान प्राप्त करना था। रीगा मे १८८२ से लेकर आप आचार्य रहे। वहाँ आपने उपर्युक्त प्रश्न के लिए रासायनिक गतिविज्ञान तक, जिसमे रासायनिक परिवर्तन के वेग को मापा जाता है, अपने अन्वेषणो का विस्तार किया। जिस वेग से अम्ल, एस्टर को ऐलकोहल और कार्बनिक अम्लो मे तोडता है, उससे आपने आपेक्षिक बधुता की गणना की। आयतन-मितीय (volumetric) विधियो से भी आपेक्षिक बधुता का यही मान आ चुका था।

व्यापक व्याख्या निकालने के हेतु ये विशेष अन्वेषण किये जा रहे थे। इनसे सम्पूर्ण रसायन का एक नया आधार बन रहा था, अत उसके अनेक भागों को फिर से लिखने की आवश्यकता थी। आस्ट्वल्ड ने १८८३ मे नयी पाठ्य पुस्तक लिखना आरम्भ ही किया था कि स्वान्ते एर्हीनियस (Svante Arıhenıus) के विद्युत्-चालकता और बन्धुता पर तथा वैट हाफ के गैसो एव विलयनो की उपमाओ सबधी विचारो से नवीन क्षेत्रो का उद्घाटन हुआ। आस्ट्वल्ड ने उत्साहपूर्वक इनका स्वागत किया।

लाइपजिग विश्वविद्यालय मे, जहाँ आपने (१८८७ मे) दो विद्यार्थियो के साथ कार्य करना आरम्भ किया था, आस्ट्वल्ड ने शीघ्र ही भौतिक रसायन के लिए एक नये मुख्य ध्येय की रचना की। रसायन के पाठ्य-क्रम मे भौतिक रसायन के प्रयोगो को एक निश्चित स्थान दिया गया। १८९३ मे अपनी पुस्तक मे आस्ट्वल्ड ने विश्लेषक रसायन की व्याख्या नवीन दृष्टिकोण से धाराप्रवाह रूप मे की। इससे ६० वर्ष पूर्व बर्जीलियस (Berzelıus) ने पदार्थो की उस प्रक्रिया को उत्प्रेरण की सज्ञा दी थी, जिसमे कुछ पदार्थ बिना प्रतिक्रिया मे भाग लिये ही उसके वेग पर प्रभाव डालते थे। आस्ट्वल्ड के कार्य से इस प्रक्रिया को मापा और उसका बधुता से सबध बनाया जा सकता था। व्यापारिक रूप से इसका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण फल तब हुआ जब १९०१ मे आस्ट्वल्ड ने अमोनिया को प्लैटिनम की उपस्थिति मे जलाकर नाइट्रिक अम्ल बनाया।

लाइपजिग विश्वविद्यालय के व्यवस्थापक तथा साथियो से आस्ट्वल्ड के सबध धीरे-धीरे खराब होते गये। १९०६ मे आपने आचार्य पद से त्यागपत्र दे दिया। इससे आप अपनी व्यापक रुचियो—रगो को मापना और पोतना, ऊर्जा ("ऊर्जा ही सब कुछ है") का विशिष्ट कार्य, विज्ञान और अतर्देशीय सहयोग का सघटन और सार्वभौमिक जीवन की अद्वैत रचना—की ओर अधिक ध्यान दे सके। कई वर्ष तक आप प्रत्येक रविवार को रविवारीय अद्वैतवादी उपदेश प्रकाशित करते रहे।

सब प्रकाशनो मे आस्ट्वल्ड को विद्युत् रसायन पर अपनी पुस्तक (१८९५) सबसे अधिक प्रिय थी, यही आपकी एक ऐसी पुस्तक थी जिसका केवल एक ही सस्करण निकला था।

जीवन के आरम्भिक वर्षो मे किसी ने आपको परामर्श दिया था कि किसी सिद्धात को शीघ्रता से व्यापक न बनाना चाहिए। आपने इस पर कभी ध्यान नही दिया। रसायन मे एक नये क्रम को निकालने के लिए और अन्य दृष्टिकोणो के लिए भी आस्ट्वल्ड को जर्मनी का लावाशिये (Lavoısıer) मानना चाहिए।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य' का विवरण

"सबसे पहले मै केवल रासायनिक बधुता के प्रत्यय मापन के कठिन कार्य मे व्यस्त था। यह बहुत महत्त्वपूर्ण प्रत्यय है, किन्तु उस समय तक अनिश्चित था। मैने स्थिर अथवा सतुलन दोनो विधियो एव प्रतिक्रियाओ के वेगो के मापन पर आधारित गतिविज्ञान की विधियो के उपयोग पर विचार किया।

"कार्बनिक रसायन मे से, जिसको मुझे पढाने के लिए पढना पडता था, मुझे कई उदाहरण याद थे जिनमे एस्टर तीव्र अम्लो, जैसे हाइड्रोक्लोरिक अथवा सल्फ्यूरिक अम्ल द्वारा अम्ल और ऐलकोहल के साद्र रूप मे टूट जाता था। जलीय विलयनो पर कार्य कर सकने के लिए मैने उन एस्टरो पर अपना ध्यान जमाया जो जल मे काफी विलेय है। मुझे आज भी उस प्रसन्नतामय उत्साह की याद है जब मैने साधारण ऐसीटिक ईथर मे हाइड्रोक्लोरिक अम्ल को मिलाकर बढती हुई अम्लता ज्ञात की थी (१८८३)।

"बधुता की समस्या और विशेष कर अम्लो की तीव्रता—(strength) के मापन के, जो उस समय मेरे अन्वेषण के मुख्य ध्येय थे, वर्णन के लिए यह उपयुक्त स्थान नही है। इतना ही कहना काफी होगा कि स्थिर एव गतिशील (dynamic) विधियो के सबध पर प्रकाश पडा और प्रतिक्रिया की प्रकृति से स्वतत्र तीव्रता को विशिष्ट अम्लो का व्यापक गुणधर्म माना गया। शीघ्र ही शर्करा के अपवर्तन (inversion) पर इसी दृष्टिकोण से अन्वेषण किया गया। इसका अचानक फल यह हुआ कि पहले के प्रयोगो के फल से जैसी आशा की जाती थी—ठीक उसी प्रकार अम्लो के उसी गुणधर्म से इस महत्त्वपूर्ण प्रतिक्रिया का परिमाणात्मक निर्धारण (Quantitative determination) किया जा सका।

"इस प्रकार अम्लो की तीव्रता और उनकी उत्प्रेरक क्रिया का घनिष्ठ सबध निर्विवाद रूप से सामने आया। इस सबध के व्यापक अध्ययन के लिए मैने दूसरे अम्ल-उत्प्रेरणो की खोज की। पूर्व प्रयोगो के विरुद्ध, इन प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थ बिना किसी बाहरी पदार्थ को डाले ही मापे जा सकने वाले वेग के साथ एक दूसरे पर प्रतिक्रिया करते है। आज तो यह कहा जा सकता है कि प्रतिक्रिया करने वाले पदार्थों मे पहले से ही उपस्थित हाइड्रोजन आयन प्रतिक्रिया के वेग मे वृद्धि कर देते थे; उस समय इस प्रकार की व्याख्या सभव न थी, क्योकि यह कार्य १८८७ मे किया गया था जब कि स्वतत्र आयनो का सिद्धात ससार को ज्ञात नही था। इस प्रकार, मुझे यह निष्कर्ष निकालने के लिए बाध्य होना पडा कि उत्प्रेरण के मूल को प्रतिक्रिया के

1 Les prix Nobel en 1909 से अनूदित।

आरम्भ मे नही प्रत्युत उसके वेग की वृद्धि मे खोजना चाहिए। १८८८ के प्रकाशन मे मैने इसके लिए स्पष्ट रूप से गणित-सूत्र दिये; वे कदाचित् १८८३ के मेथिल ऐसिटेट वाले प्रबन्ध मे अस्पस्ट रूप से विद्यमान है।"

सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रभाव

शर्करा का प्रतिलोमन सैकरोज (चुकन्दर अथवा इक्षुशर्करा) का, अम्लो के थोडे परिमाण के प्रभाव से होने वाला परिवर्तन है। इस प्रतिक्रिया मे प्रकाशघूर्णन (rotation) पलट जाता है और केलासीय (crystallizable) शर्करा अकेलासीय फलशर्करा एव द्राक्षा-शर्करा मे परिवर्तित हो जाती है। केलास शर्करा बनाने वाले इस प्रतिक्रिया से डरते थे, किन्तु कृत्रिम शहद के उत्पादक जान-बूझकर इस प्रतिक्रिया को करते थे। आस्ट्वल्ड के उत्प्रेरण पर कार्य से ज्ञात हुआ कि शर्करा की उच्च सान्द्रता पर कम-से-कम अम्ल द्वारा प्रतिलोमन किया जा सकता है।

आस्ट्वल्ड ने उत्प्रेरण को दुबारा खोजा और उसकी दूसरी परिभाषा दी। यद्यपि आप मौलिक रूप से विशुद्ध एव व्यापक विज्ञान की भावना से ही इस कार्य की ओर झुके थे, तथापि आपने इसके टेक्निकल उपयोगो के बडे महत्त्व को पहले से ही देख लिया था। आप अमोनिया को उसके तत्त्वो—नाइट्रोजन और हाइड्रोजन—द्वारा उत्प्रेरक क्रिया से बनाने मे असफल रहे, किन्तु अमोनिया के उत्प्रेरक आक्सीकरण से नाइट्रिक अम्ल बनाने मे सफल हुए। तदुपरात शीघ्र ही अमोनिया का उत्प्रेरक-सश्लेषण भी सभव हुआ। नाइट्रिक अम्ल के उत्पादन के लिए इस प्रकार पर्याप्त अमोनिया प्राप्त की जा सकी। प्रथम विश्वयुद्ध का इतना भयानक होना और इतने दिनो तक चलना असभव था, यदि सब प्रकार के विस्फोटको के बनाने मे काम आनेवाले इस मूल पदार्थ के उत्पादन के लिए इस विधि का आविष्कार न किया गया होता।

उत्प्रेरण मे रसायनज्ञो की रुचि मे आस्ट्वल्ड ने जो वृद्धि की उससे रासायनिक उद्योगो को बडा प्रोत्साहन मिला। उत्प्रेरक विधियो द्वारा ही खनिज तेल को मोटर-ईंधन मे और 'नेचुरल-गैस' को अनेक रस द्रव्यो मे परिवर्तित किया जा सकता है। सश्लेषित मेथेनाल के, जिसको आस्ट्वल्ड के विद्यार्थियो की सहायता से कार्बन मोनो आक्साइड और हाइड्रोजन द्वारा मिलाकर बनाया गया था, उत्पादन से लकडी के आसवन-उद्योग पर बडे प्रभाव पडे।

रासायनिक प्रतिक्रियाएँ किस वेग से और किस सीमा तक होती है इसको भौतिक गुणधर्मो के मापन से जाना जा सका है। औद्योगिक उत्पादन के लिए यह ज्ञान आधार-स्वरूप है।

१६१०

आटो वालाख (Otto Wallach)

(१८४७-१६३१)

"एलीचक्रीय पदार्थों के क्षेत्र में कार्य आरम्भ करने के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

आटो वालाख का जन्म पूर्वी प्रशा के कोएनिग्सबर्ग मे हुआ था। १८६९ में गाटिन्गेन विश्वविद्यालय से आपको डाक्टर की उपाधि मिली। यहाँ से आप बॉन (Bonn) गये जहाँ केकुले (Kekule) ने "वैज्ञानिक कलाकार का जीवन" आपको प्रदान किया। आपके लिए बॉन मे सुविधा यह थी कि हालैंड और बेल्जियम दोनो के कला-कोषो के आप निकट थे। रासायनिक उद्योग मे थोडे दिन कार्य करके आप बॉन लौट आये, वहाँ आपको विशेष आचार्य का पद १८७६ मे प्राप्त हुआ। १८७९ के उपरात आप औषध-रसायन के प्रशिक्षण के प्रधान बने।

प्रशिक्षण कार्य मे वालाख को ईथरीय तैलो पर भाषण करना पडता था और इस कारण आप इस विषय की ओर आकर्षित हुए। केकुले ने बताया कि ये तैल ऐसे मिश्रण है, जिनके अवयवो के पृथक् करने की समस्या को कोई रसायनज्ञ नही सुलझा सकता तब भी वालाख ने औषध रूप मे प्रयुक्त इन तैलो का क्रमबद्ध अध्ययन आरम्भ किया। ये तैल साधारण रूप से चुनी हुई पत्तियो, पँखुडियो, छालो और फलो के आसवन से प्राप्त किये जाते थे। आपने सावधानी से बार-बार आसवन करके उनमे से शुद्ध पदार्थो को पृथक् किया और उनके भौतिक गुणधर्मों द्वारा या उनके रूपान्तरो द्वारा उनको पहचाना। इनमे से अनेक पदार्थों की रासायनिक रचना मूलत एक प्रकार की होती है—६ कार्बन परमाणुओ का घेरा जो अधिक हाइड्रोजन परमाणुओ के होने के कारण बेंजीन से भिन्न होता है। अधिकतर इन "टर्पीनो" का घेरा, अथवा चक्र, सतृप्त कार्बन परमाणुओ के मिलने से बनता है। ऐसे कार्बन परमाणु "वसीय" अथवा ऐलीफैटिक पदार्थों मे होते है। फलत. उनको "ऐलीचक्रीय" कहा गया। गाटिन्गेन मे १८८९–१९१५ तक

आपने अपना शोध-कार्य जारी रखा। १९१५ मे केवल कला मे अधिक समय देने के लिए आपने अवकाश प्राप्त किया।

"वालाख का उच्चतम आदर्श न सिद्धात था और न सूत्र, प्रयोग को सावधानी और विश्वसनीय विधि से करना ही आपका ध्येय था।"[1]

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[2] का विवरण

"हाइड्रोकार्बनो के आक्सिजन युक्त यौगिको मे एव आक्सिजन युक्त यौगिको के हाइड्रोकार्बनो मे उपयुक्त रूपान्तर द्वारा टर्पीन-जैसे अनेक पदार्थो मे (जो ईथरीय तैलो मे पाये जाते है) सबध और इन यौगिको के वर्ग-सबधो को स्थापित करने मे हम सफल होते है।

"लगभग २५ वर्ष पूर्व ईथरीय तैलो के उत्पादन मे केवल अनुभव से ही काम चलता था। पौधो के सुगधित अवयवो का केवल आसवन करके आसुत (distillate) को बाजार मे बेचा जाता था। इस प्रक्रिया मे प्राप्त पदार्थो की बौद्धिक रूप से रक्षा नही की जाती थी और उनकी रासायनिक रचना के ज्ञान के अभाव मे किसी प्रकार की भी भूल सम्भव थी। और जब यह भूल चतुरता से जान-बूझकर की जाती थी तो उपभोक्ता इसके विरुद्ध कुछ नही कर सकता था।

"अब इस स्थिति मे पर्याप्त परिवर्तन हो चुका है। सौभाग्यवश, हम ईथरीय तैलो के प्रत्येक अवयव को स्पष्ट रूप से पहचानने मे सफल हुए और अब इन मिलावटो को जानने और इनसे रक्षा करने के लिए हमे पर्याप्त रूप से विकसित विश्लेषक विधि ज्ञात है। शुद्ध रासायनिक विधियो के अतिरिक्त इनके परीक्षण के लिए कार्बनो पर कार्य करते समय अत्यत सावधानी से ज्ञात किये गये क्वथनाक, घनत्व, वर्तन (refraction) एव प्रकाशघूर्णन आदि भौतिक गुणधर्मों का भी उपयोग किया जा सकता है।

"नये ज्ञान के आधार पर तैलो के प्रत्येक भाग का ठीक से मूल्याकन भी हम सीख गये है। यह इस दिशा मे दूसरी प्रगति है।

"वे तैल जो सुगधित होने के कारण विशेष रूप से पसद किये जाते है, उन पदार्थों के मिश्रण से बनते है जो इस प्रभाव के उत्पादन मे सहयोग देते है। अप्रत्याशित रूप से, यह ज्ञात किया गया कि विशेष रूप से सुगधित कुछ तैलो मे, सूक्ष्म मात्रा मे बड़े बदबूदार

१ लियोपाल्ड रुज़िका द्वारा Journal of the Chemical Society (London) १९३२, पृ० १५९६ में लिखी गयी वालाख की जीवनी से।

2 Les prix Nobel en 1910 से अनूदित।

पदार्थ भी होते है और सुगधि उत्पादन के लिए इनका विशेष महत्त्व है। ये पौधो की प्रोटीन के टूटने से बनते है। ये प्रोटीन, जतुओ की उन प्रोटीनो से मिलती-जुलती है जो पाचन के समय बनती है और मल की विरक्तिकर (repugnant) दुर्गध के लिए उत्तरदायी है। इन पदार्थो मे इन्डोल भी है। उदाहरणतया, जैसा कि डाक्टर आलब्रेख्त हेसे (Dr Albıecht Hesse) ने सिद्ध किया है, यह चमेली के तेल का खास अवयव है।

"इस और इसी प्रकार की सूक्ष्म दृष्टि का, जो केवल वैज्ञानिक शोध की प्रगति से ही प्राप्त हो सकती है, विशेष उपयोग सुगधित द्रव्यो के कृत्रिम निर्माण वाले उद्योग मे किया गया है।

"अब हम उस स्तर तक पहुँच चुके है जहाँ से प्राकृतिक सुगधित द्रव्यो के तुल्यरूपो (analogues) का निर्माण सम्भव है। अब हम (कुछ सीमाओ मे) यह पहले से ही बता सकते है कि इस प्रकार की अणु-रचना वाले पदार्थ के सश्लेषण से पिपरमिंट, कपूर अथवा गुल्म (lılac) की गध प्राप्त होगी।

"हम कपूर के रासायनिक सश्लेषण मे पूर्ण रूप से सफल हो चुके है। इसके लिए अब तक फारमोसा द्वीप पर इसके उत्पादन एव जापानियो की इच्छा पर ही हमे निर्भर रहना पडता था।

"यह सोचा जा सकता है कि एक ही जीनस (Genus) वाले सब पौधे एक अथवा एक ही प्रकार के तैलो का उत्पादन करते है, किन्तु यह बात बिलकुल गलत है।

"इस प्रकार, वनस्पति-विज्ञान की दृष्टि से काफी मिलते-जुलते पौधे बिलकुल विभिन्न द्रव्यो का निर्माण करते है। इसका उलटा भी ठीक है। विभिन्न पौधे कभी-कभी एक ही प्रकार के द्रव्यो का निर्माण करते है।"

सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रभाव

वालाख ने ईथरीय पौधो के आसुत से शुद्ध पदार्थो को पृथक् करके एव उनमे सबध स्थापित करके ऐसी कठिन समस्या का हल किया जिसको केकुले प्राय असभव समझते थे। रासायनिक रचना के व्यापक सिद्धात की इस प्रकार खोज हुई। प्राकृतिक रबर की बहुअशता (पुरुभाजता—polymeıısm) के विनाश से प्राप्त आइसोप्रीन का सबध तारपीन मे पाये जाने वाले पदार्थों से जोडा गया। इस प्रकार प्रकृतिरूपी भवन मे रसद्रव्यो रूपी ईटो की एकता का सिद्धात स्पष्ट हो गया। बाद के अन्वेषक, जैसे लियोपाल्ड रुजिका (Leopold Ruzıcka) (१९३९ का विवरण देखिए) भी इस ओर आर्कषित हुए।

वालाख ने सश्लेषणो पर अपने निष्कर्षो को आधारित नही किया, जैसा कि टीमाँ और सेमलर (Tiemann and Semmler) ने किया था। आपने अपनी वैज्ञानिक खोजो के औद्योगिक उपयोग पर ध्यान नही दिया। आपके पहले के विद्यार्थियो ने सुगधित द्रव्यो के उद्योग का वैज्ञानिक आधार बनाया। ऊपरी तौर से बिलकुल असबधित इस क्षेत्र मे वालाख द्वारा किये गये टर्पीनो के स्पष्टीकरण सें बडी सहायता मिली। जीवरसायन के दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण कैरोहिन्वायड के जटिल अणु मे टर्पीन-जैसी रचना पायी गयी।

१६११

मेरी स्क्लोडोउस्का क्यूरी (Marie Sklodowska Curie)
(१८६७-१६३४)

"रेडियम और पलोनियम तत्त्वो की खोज के लिए तथा रेडियम को पृथक् करके इस अपूर्व तत्त्व के गुणो एवं यौगिको के अध्ययन द्वारा रसायन-ज्ञान की वृद्धि के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

मेरी स्क्लोडोउस्का का जन्म वारसा मे हुआ था जो उस समय रूस के अधीनस्थ भाग वाले पोलैंड की राजधानी था। विज्ञान की अधिकतर शिक्षा आपको अपने पिता द्वारा प्राप्त हुई। १८९१ मे आपको अपनी बडी बहिन द्वारा पेरिस आकर अध्ययन जारी रखने का निमत्रण मिला। आप पियरे क्यूरी (Pierre Curie) से, जो उस समय सारबाने के भौतिकी स्कूल के आचार्य थे, १८९४ मे मिली और इसके दूसरे वर्ष आपने उनसे विवाह कर लिया। १८९८ के आरम्भ मे आपने विकिरण के मापन से यह निष्कर्ष निकाला कि पिचब्लेड खनिज मे यूरेनियम की अपेक्षा काफी अधिक रेडियमधर्मी एक और तत्त्व होना चाहिए। अपने पति एव आन्द्रे देबियर्न (Andre Debierne) के साथ आपने इस तत्त्व की क्रमबद्ध खोज आरम्भ की। १९०२ मे शुद्ध लवण के रूप मे रेडियम तैयार किया गया। इसके दूसरे वर्ष आपको सारबाने से डाक्टर की उपाधि प्राप्त हुई और पति के साथ भौतिकी मे नोबेल पुरस्कार का आधा भाग मिला।

१९०६ मे गाडी से दुर्घटना होने के कारण पियरे क्यूरी की मृत्यु हो गयी। मादाम क्यूरी को आपका (पियरे क्यूरी का) पद प्रदान किया गया। आपके कार्य के लिए १९१४ मे रेडियम इस्टीट्यूट का सघटन किया गया। प्रथम विश्वयुद्ध मे आप अस्पताल के कार्य एव नर्सों के प्रशिक्षण मे सलग्न रही।

जब १९२१ मे आपको अमेरिका की स्त्रियो द्वारा १ ग्राम रेडियम भेट मे मिला था, उसके पूर्व से ही आप रेडियम किरणो के खुलाव (exposure) के प्रभाव से बीमार थी। क्रमश. आपके स्नायुओ एव आपके रक्त पर भी किरणो का प्रभाव हुआ।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"हम लोगो ने नये तत्त्वो की खोज के लिए एक नवीन विधि का विकास किया। इस विधि का आधार रेडियमधर्मिता को पदार्थ का परमाणवीय गुण मानकर बनाया गया था। प्रत्येक रासायनिक पृथक्ककरण से प्राप्त पदार्थ की रेडियमधर्मिता का मापन करना होता था। इससे पता चलता है कि रासायनिक दृष्टिकोण से रेडियमधर्मी पदार्थ किस प्रकार प्रक्रिया करता है। इस विधि का व्यापक उपयोग हुआ है, यह विधि कुछ-कुछ वर्णक्रम-विश्लेषण से मिलती है। अनेक प्रकार के विकिरणो के उत्सर्जन के कारण-इस विधि का शोधन और विस्तार होना चाहिए, जिससे रेडियमधर्मी पदार्थो की खोज के साथ-साथ उनका एक दूसरे से निश्चयात्मक परिचय भी हो सके।

"उपर्युक्त विधि को काम मे लाकर यह निश्चित किया जा सका है कि रासायनिक प्रक्रियाओ द्वारा रेडियमधर्मिता को साद्र बनाया जा सकता है। हम लोगो ने यह निर्णय किया है कि पिचब्लेड मे कम-से-कम दो रेडियमधर्मी पदार्थ है, उनमे से एक का नाम, जो बिस्मथ के साथ रहता है, पोलोनियम रखा गया है, दूसरे को, जो बेरियम के साथ रहता है, रेडियम कहा गया है।

"हम लोगो का दृढ विश्वास था कि जिन पदार्थो को हमने ज्ञात किया, वे नये तत्त्व थे। यह विश्वास रेडियमधर्मिता के परमाणवीय लक्षणो पर आधारित था। रासायनिक दृष्टिकोण से पहले तो ऐसा पता चलता था कि हमारे नये पदार्थ क्रमश. शुद्ध बिस्मथ और शुद्ध बेरियम है। यह दिखाना आवश्यक था कि रेडियमधर्मिता उन तत्त्वो की अति सूक्ष्म मात्राओ मे भी होती है जो न बिस्मथ है और न रेडियम।

"फलत इन दोनो नये अनुमानित तत्त्वो को पृथक् करना पडा। कई वर्षों के लगातार प्रयास से रेडियम को पूर्ण रूप से पृथक् किया जा सका है। आज कल तो रेडियम का शुद्ध लवण रूप मे उत्पादन एक व्यवसाय बन चुका है। अन्य किसी भी रेडियमधर्मी पदार्थ से इतने निश्चित फल अभी तक प्राप्त नही हुए है।

"शुद्ध लवण रूप मे रेडियम की रेडियमधर्मिता उतने ही भार वाले यूरेनियम की अपेक्षा लगभग ५० लाख गुनी होती है। इतनी अधिक रेडियमधर्मिता के कारण लवणो मे से अपने आप चमक निकलती है। मै यह भी बताना चाहती हूँ कि रेडियम मे से सदैव ऊर्जा निकलती है और यह एक ग्राम रेडियम द्वारा दी गयी ११८ कलरी प्रति घटे के बराबर होती है।

1. Les Prix Nobel en 1911 से अनूदित।

"अब हमे उन पदार्थों के साथ काम करने की आदत पड गयी है जिनके अस्तित्व का ज्ञान रेडियमधर्मिता के गुणधर्म के कारण ही हो सकता है। हम उनकी रेडियमधर्मिता का मापन कर सकते है, उनको घोल सकते है, और विलयनो मे से उनका दुबारा अवक्षेपण या विद्युत्-विश्लेपण द्वारा उनको एकत्र कर सकते है। यह रसायन का नया विभाग है। इसमे तुला का नही, प्रत्युत विद्युन्मापी (lectiometer) का, साधारण यत्र रूप मे प्रयोग करते है, इसलिए इसको निर्भार वस्तु का सूक्ष्म रसायन कहा जा सकता है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

रेडियम का आविष्कार आक्सिजन के बाद अन्य तत्त्वो की अपेक्षा सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। तत्त्व के प्रत्यय मे ही परिवर्तन करना पडा और पदार्थ के एक नये बल (force) को स्वीकार करना पडा। रेडियम के अस्तित्व का ज्ञान उसको घेरे हुई वायु मे वर्धमान विद्युत्-चालकता से होता है। इसी विशेष लक्षण की सहायता से मेरी क्यूरी पिचब्लेड मे से अन्य साधारण पदार्थों को पृथक् कर सकी और इस प्रकार रेडियमधर्मी पदार्थ तैयार किया गया। रेडियम की उपस्थिति का इस प्रकार परिचय प्रकाश-वर्णक्रम विश्लेषण के समान है, जिसमे पदार्थ का सूक्ष्मतम भाग भी अपने गुणधर्म का परिचय देता है। प्रकाश-विश्लेषण के लिए पदार्थ को उच्च ताप तक गरम करना पडता था, जिससे ऊष्मा का कुछ भाग उत्सर्जित (emitted) प्रकाश मे परिवर्तित हो जाय। रेडियम की विद्युत्-सक्रियता सब तापो पर होती है। द्रव वायु के ताप पर भी उसमे कोई कमी नही होती। यह ऊर्जा का एक स्रोत है जो ऊष्मा के निकास के साथ-साथ ठडी चमक के रूप मे सदैव दिखाई देता है। रेडियम द्वारा उत्सर्जित ऊर्जा धीरे-धीरे कम होती जाती है। इसके कम होने का वेग ज्ञात है। इस वेग के अनुसार २४५० वर्षो मे रेडियम का दो तिहाई भाग नष्ट हो जाता है।

यद्यपि एक टन पिचब्लेड से शुद्ध क्लोराइड लवण रूप मे केवल ० १ ग्राम रेडियम प्राप्त होता है, तथापि सूक्ष्म मात्रा में रेडियम बहुत-से खनिजो मे पाया जाता है। यह ऊर्जा के एक और अधिक शक्तिशाली विकिरक पोलोनियम के साथ पाया जाता है। इस तत्त्व का यह नाम मेरी क्यूरी और ए० देबियर्न ने पोलैंड के सम्मानार्थ रखा था। इन तत्त्वो द्वारा उत्सर्जित विकिरण का जीवित प्राणियो पर तेज प्रभाव होता है और इसी कारण इनका औषधीय महत्त्व है। रेडियम के आविष्कार के पश्चात् रेडियमधर्मी पदार्थों के अधिक सक्रिय रूपो का औषध की भाँति प्रयोग होने लगा। इसके विरुद्ध, इस विषय के अन्वेपक, विकिरण की अनियत्रित खुराको के प्रभाव से बीमार रहने लगे। रटजन किरणो (Rontgen rays) पर कार्य करने वालो को भी इसी प्रकार भुगतना पडा था।

१९१२

विक्तर ग्रिनयार्ड (Victor Grignard)

(१८७१–१९३५)

"तथा-कथित ग्रिनयार्ड प्रतिकर्मक (reagent) की खोज के लिए; इसने पिछले वर्षों में कार्बनिक रसायन के विकास में बड़ी सहायता दी है।"

(१९१२ का पुरस्कार पाल सबैशिए के साथ दिया गया था, आगे देखिए पृ० ४९)

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

फ्रैन्क्वाय आगस्त विक्तर ग्रिनयार्ड का जन्म शेरबुर्ग मे हुआ था, जहाँ आपके पिता जहाज के पाल बनाने का काम करते थे। आपके पिता अधिक व्यावहारिक बुद्धि एव मस्तिष्क वाले सीधे-सादे आदमी थे। ग्रिनयार्ड ने विद्यार्थी-जीवन मे अच्छी तरक्की की, किन्तु रसायन आपको एक दूसरे से असबधित ऐसे तथ्यो का समूह दिखाई देता था, जिनको एक-एक करके याद करना पडता था। तब भी, लियन्स विश्वविद्यालय मे अपने अध्ययन काल मे आप रसायन के प्रयोगो के सौंदर्य से शीघ्र ही प्रभावित हुए। आपके रसायन के आचार्य फिलिप आन्त्वायन बारबिए (Philippe Antoine Barbier) (१८४८–१९२२) ऐसी प्रतिक्रियाओं पर कार्य कर रहे थे, जिनके द्वारा कार्बनिक यौगिको मे मेथिल समूह—CH_3—जोडा जाता है। ऐसी प्रतिक्रियाएँ मेथेन पर आयोडीन की प्रतिक्रिया से बने मेथिल आयोडाइड (CH_3I) से की जाती थीं। जिक से बडे ही सक्रिय कार्बनिक यौगिक बनते थे और इस धातु को मेथिलीकरण (methylation) की प्रतिक्रिया होते समय छोड दिया जाता था। बारबिए ने इस धातु के स्थान पर मैग्नीशियम का प्रयोग किया। फल सतोषजनक थे और आपने ग्रिनयार्ड से इस शोध कार्य का विस्तार करने के लिए कहा। ग्रिनयार्ड ने यह देखा कि ईथर डाले जाने के बाद मैग्नीशियम, मेथिल आयोडाइड से खूब अच्छी तरह प्रतिक्रिया करता है, इस प्रक्रिया मे जल के सूक्ष्माशो को भी हटाना पडता है। एक बार यौगिक

बन जाने के बाद आपने ईथरीय विलयनो से बिना पृथक् किये हुए ही उसका अन्य प्रतिक्रियाओ के लिए फौरन प्रयोग किया ।

१९०१ मे डाक्टर की उपाधि के लिए लिखी गयी थीसिस मे आपने अपने अन्वेषणो को प्रकाशित किया । इस नयी विधि मे अनेक लोगो ने बडी रुचि दिखायी । कार्बनिक मैग्नीशियम पर शीघ्र ही अनेक प्रकाशन निकले, १९०५ मे ही प्रकाशनो की सख्या लगभग २०० थी और ग्रिनयार्ड की मृत्यु तक तो यह सख्या ६००० हो गयी । आप लियन्स मे १९०६ मे आचार्य हो गये, उसके बाद नैन्सी मे आप आचार्य हुए और युद्ध-काल मे कभी रहे और कभी नही रहे । प्रशासन सबधी अधिक कार्य होने पर भी आपने युद्ध-काल मे भारी तैलो के भजन से टालुईन (toluene) के उत्पादन पर कार्य किया ।

ग्रिनयार्ड नोबुल पुरस्कार समिति के निर्णय से बिलकुल सतुष्ट नही थे, आपके अनुसार सबैशिएको सेन्डर्न्स (पृ० ५०) के साथ पुरस्कार मिलना चाहिए था और उसके बाद वाला पुरस्कार आपमे और आपके पूर्व अध्यापक बारबिए मे बँटना चाहिए था ।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"कार्बनिक मैग्नीशियम ईथरो की तैयारी साधारण रूप से बडी सरल है। गोल पेदी वाले फ्लास्क एक अच्छे उठाऊ (ascending) धारित्र (condenser) से ओर रोधनी (stopcock) युक्त पृथक्कारी कीप से जुडा होता है। बस, इतना ही यत्र काफी है, किन्तु इसके बिलकुल शुष्क हुए बिना काम नही चल सकता ।

"महीन रेतन के रूप मे मैग्नीशियम के एक परमाणु-भार को फ्लास्क मे रख दिया जाता है। दूसरी ओर, उपयोग मे आनेवाले हेलोजनयुक्त हाइड्रोकार्बन—उदाहरणतया मेथिल आयोडाइड—के एक अणु-भार को उतने ही आयतन के पूर्णरूप से शुष्क ईथर मे घोल लिया जाता है। यह २५–३० घन-सेटीमीटर मिश्रण मैग्नीशियम पर डाला जाता है। तब २५०–३०० घ० से० ईथर डाल दिया जाता है और प्रतिक्रिया उपर्युक्त मिश्रण के बूँद-बूँद गिरते रहने से चलती रहती है। आवश्यकता पडने पर थोडा गरम करके प्रतिक्रिया की पूर्ति की जाती है। इन परिस्थितियो मे मैग्नीशियम पूर्ण रूप से गायब हो जाता है। साधारण रीति से, स्पष्ट अथवा थोडा रगीन विलयन प्राप्त होता है। मैग्नीशियम मे अशुद्धि रूप मे उपस्थित लोह के बहुत महीन कण क्षण भर के लिए इसमे स्लेटी रग के बादल-से बनाते है ।

1 "Le magnesium en Chimie Organique" Bulletin de la Societe Chemique de France Vol XIII. (1913) के पृष्ठ १ से अनूदित ।

"इस प्रकार बनाये गये यौगिक मे कार्बनिक-धातु के यौगिक के सब लक्षण दिखाई देते है; वह शीघ्र ही हवा मे बदल जाता है, आक्सिजन और कार्बन-द्वि-आक्साइड का अवशोषण करता है, जल द्वारा शीघ्र ही विच्छेदित हो जाता है और लगभग सभी क्रियाशील समूहो के साथ प्रतिक्रिया करता है। ये सब प्रक्रियाएँ साधारणतया बिना किसी यत्र-परिवर्त्तन के ही की जा सकती है। पृथक्कारी कीप द्वारा प्रतिक्रिया करने वाले यौगिक को जल की उपयुक्त मात्रा मे घोल करके डालने से सब काम चल जाते है। इस प्रकार या तो विलयन या तेलीय पदार्थ या केलास प्राप्त होते है। प्रति-क्रिया को आवश्यकता पडने पर कभी-कभी देर तक गरम करके पूरा किया जाता है। इसके बाद यौगिक का केवल जल-विश्लेषण करना पडता है।"

पाल सबैशिए (Paul Sabatier)

(१८५४–१९४१)

"कार्बनिक यौगिको के अति महीन कणो वाली धातुओ की उपस्थिति मे हाइड्रोजनीकरण के लिए।"

(१९१२ का पुरस्कार विक्तर ग्रिनियार्ड के साथ दिया गया था, पीछे देखिए पृ० ४७)

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

दक्षिणी फ्रास मे कारकेसाने मे पाल सबैशिए का जन्म हुआ था। प्रसिद्ध इकोल नार्मालि से आप स्नातक हुए। यहाँ आपने भौतिकी का अध्ययन किया था। स्नातक होने के बाद पेरिस मे आप मार्सेलिन बर्थेलो (Marcelın Beıthelot) के उप-सहकारी हो गये। डाक्टर की उपाधि के लिए लिखी गयी आपकी थीसिस मे धातुओ के गधक यौगिको की चर्चा थी। आप तूलूस मे आचार्य होकर अकार्बनिक रसायन पर कार्य करते रहे। पहले वहाँ आप भौतिकी पर भाषण करते थे। भौतिकी और रसायन के मिलेजुले क्षेत्र मे आपकी बडी रुचि थी। रासायनिक प्रतिक्रियाओ से सबधित ऊष्मा पर आपने जो अन्वेषण किये है उनमे पुराने अध्यापक बर्थेलो का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। ऐसा कार्य आपकी हाइड्रोजन की प्रतिक्रिया सबधी शोध मे भी पाया जाता है। बर्थेलो ने ज्ञात किया कि ऐलकोहल का वाष्प, लोह की रक्त ऊष्मित सतह से प्रतिक्रिया करके स्थायी रूप से एक गैस बनाता है। इसका नाम आपने ऐसिटिलीन रखा था। इसमे केवल दो हाइड्रोजन परमाणु, दो कार्बन परमाणुओं

के साथ होते है। जब कार्बन को रासायनिक रूप से हाइड्रोजन द्वारा सपृक्त कर दिया जाता है तो एक कार्बन परमाणु चार हाइड्रोजन परमाणुओ से सयोग करता है, जैसा मेथेन, CH_4, मे होता हे। जब दो कार्बन परमाणु जुडते है, जैसा एथेन (ethane) मे होता है तो हाइड्रोजन परमाणुओ की सख्या ६ होती है, जैसे C_2H_6 । ऐसिटिलीन इस प्रकार पर्याप्त रूप से असतृप्त है जैसा कि सूत्र C_2H_2 से दिखाई देता है। इसमे हाइड्रोजनीकरण नामक प्रतिक्रिया से हाइड्रोजन जोड कर एथेन बनाया जा सकता हे, इसके बीच मे आशिक रूप से सतृप्त यौगिक एथिलीन, C_2H_4 बनती है। १८९७ में सबैशिए और आपके साथी आबे जीन-बापटिस्टे सेन्डर्न्स (Abbe Jean Baptiste Senderens) १८५६–१९३६) ने यह देखा कि अति सूक्ष्म कण रूप मे धातु, असतृप्त यौगिको की हाइड्रोजन से प्रतिक्रिया को बढाती है। धातु को उसकी आक्साइड अथवा उसके लवण से ताजा तैयार करना पडता है, क्योकि धातु की सतह का विशेष प्रभाव दिखाई देता था। इस प्रकार की प्रतिक्रियाओ मे बेजीन पर हाइड्रोजन का प्रभाव बडा रोचक है। बेजीन मेथेन श्रेणियो से भिन्न है। इसमे ६ कार्बन परमाणु षड्भुज रूप मे एक दूसरे से जुडे हुए है और प्रत्येक कार्बन परमाणु एक हाइड्रोजन परमाणु से जुडा हुआ है। हाइड्रोजनीकरण से निकल (Nickel) की उपस्थिति मे बेजीन के ६ कार्बन परमाणुओ मे ६ और हाइड्रोजन परमाणु जुड जाते है और कार्बन-कार्बन परमाणुओ के बधक टूटते अथवा खुलते नही है।

सबैशिए ने मोआयसाँ के उत्तराधिकारी बन कर सारबाने जाने से इनकार कर दिया। आप तूलूस मे रहे और आपने कार्बनिक रसायन मे उत्प्रेरण एव कृषि-रसायन पर पुस्तके प्रकाशित की।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का विवरण[1]

"मोआयसा (पीछे देखिए) और मेरो (Moureu) ने ज्ञात किया था कि फौरन अवकृत निकल, कोबाल्ट, लोह अथवा प्लैटिनम की उपस्थिति मे ऐसिटिलीन तापोज्ज्वलित होने लगती थी। उसके विच्छेदन से कार्बन बनता था और एक गैस बनती थी जिसको मोआयसाँ हाइड्रोजन समझते थे, तथा बेजीन एव अन्य गधित पदार्थयुक्त द्रव सघनत (condensate) बनता था।

"मैंने विचार किया और मेरा अब भी विचार है कि सरन्ध्र प्लैटिनम की उत्प्रेरण-क्रिया का वास्तविक कारण भौतिक सघनन (condensation) की सरल

1 Les Prix Nobel en 1912 से अनूदित।

प्रक्रिया नही है, जिससे उस स्थान पर ताप मे वृद्धि होती है। यह वस्तुत स्वतत्र गैस के साथ रासायनिक सयोग के कारण होती है।

"धातु की बधुता या तो स्वय ऐसिटिलीन से हो सकती है या उसके अवयवो—कार्बन और हाइड्रोजन—से, जो इस ऊष्माशोषक यौगिक से आसानी से टूट सकते है। मोआयसा और मूरो के प्रयोग मे मैंने ऐसिटिलीन के विच्छेदन का यही कारण बताया।

"जब मुझे यह निश्चित रूप से ज्ञात हुआ कि मोआयसा इस प्रतिक्रिया का और अध्ययन नही करना चाहते तो मैंने स्वय इसका अध्ययन आरम्भ किया। सबसे पहले मैंने सेन्डर्न्स के साथ एथिलीन का इसी प्रकार प्रयोग किया।

"तत्काल अवकृत एव लगभग ३००° से० ताप पर रखे हुए निकल, कोबाल्ट अथवा लोह के ऊपर जब एथिलीन की धारा प्रवाहित की जाती है तो धातु की दीप्ति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इसके साथ-साथ एथिलीन के विनाश से बहुत अधिक मात्रा मे कालिख जमने लगती है। यत्र के बाहर जो गैस निकलती है, वह हाइड्रोजन नही होती, अधिकतर इसमे एथेन होती है।

"एथेन केवल अविनष्ट एथिलीन के हाइड्रोजनीकरण से बन सकती है और निर्विवाद रूप से यह हाइड्रोजनीकरण धातु के कारण हुआ था।

"फलत एथिलीन और हाइड्रोजन के मिश्रण को यदि अवकृत निकल के स्तभ से चलाया जाय तो एथिलीन एथेन मे परिवर्तित हो जाती है, धातु अनिश्चित काल तक इस परिवर्तन मे सहायक हो सकती है (जून १८९७)।

"१९०० के अत मे निश्चित सफलता प्राप्त हुई। मैंने सेन्डर्न्स के साथ यह देखा कि १८०° से० पर रखे निकल के सस्पर्श से बेंजीन का साइक्लोहेक्सेन (Cyclo-hexane) मे पूर्ण परिवर्तन किया जा सकता है। तब से इस विधि की व्यापकता मे मेरा पूर्ण विश्वास हो गया है। इस विधि के इस सिद्धात की घोषणा १९०१ मे की गयी। अधिक हाइड्रोजन के साथ पदार्थ के वाष्प को तत्काल अवकृत एव सुगम ताप (१५०—२००° से०) पर रखे गये निकल पर चलाओ।

"वसीय अम्लो (ओलीक अम्ल) के द्रव के बाष्प के इस प्रकार सीधे हाइड्रोजनीकरण से ठोस अम्ल (stearic acid) प्राप्त हो सकते है। यह भी ज्ञात किया गया है कि यह प्रतिक्रिया सीधे तैलो के साथ भी उत्प्रेरक धातु को आलम्बित (suspension) अवस्था मे रखकर हाइड्रोजन गैस की उपस्थिति मे की जा सकती है, इससे द्रव-तैल ठोस मे परिवर्तित हो जाते है। इसका वस्तुत इग्लैण्ड और जर्मनी के बडे व्यवसायो मे उपयोग हो रहा है।"

सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रभाव

ग्रिनयार्ड और सबैशिए दोनो की विधियो मे जो अब लगभग ५० वर्ष पुरानी हो गयी है, कार्बनिक यौगिको की प्रतिक्रिया के लिए धातु का प्रयोग होता है। ग्रिनयार्ड की विधि मे मैग्नीशियम हेलोजनयुक्त कार्बनिक यौगिक से सयुक्त होता है। धातु, जिसकी क्लोरीन, ब्रोमीन अथवा आयोडीन से काफी बधुता होती है और जो उसके साथ जुडे होते है, कुछ अनिच्छापूर्वक कार्बनिक मूलक को स्वीकार करती है। ईथर की उपस्थिति से यह प्रतिक्रिया सरल हो जाती है क्योकि मैग्नीशियम को ईथर के ऑक्सिजन के साथ जुडने का अवसर मिलता है, यद्यपि यह आक्सिजन-परमाणु ईथर के अणु मे कार्बन के परमाणुओ से मजबूती से जुडा होता हे। जब अधिक सक्रिय आक्सिजन परमाणु मिलता है तो ग्रिनयार्ड प्रतिकर्मक का मैग्नीशियम यौगिक शीघ्रता से उससे मिल जाता हे, इस प्रक्रिया मे कार्बनिक मूलक बच जाता है जो अब दूसरी प्रतिक्रियाओ म भाग ले सकता है। इस प्रकार, मैग्नीशियम—कार्बनिक यौगिक पदार्थों की उपस्थिति मे कार्बन परमाणुओ की अनेक प्रकार की बधकताओ के सयोग सभव हो जाते है। कार्बन-द्वि-आक्साइड एक हाइड्रोकार्बन मे शीघ्र ही प्रवेश कर जाती है और उसका अनुरूप अम्ल बनाती है। दूसरी ओर वसाओ के कार्बनिक अम्लो को जो ग्लिसरीन से सयुक्त अवस्था मे रहते है अवकृत करके ऐलकोहल बना लिया जाता है। जब इन अनेक सयोगो के नियम बने तो बनने वाले पदार्थो की रचना को पहले से ही बताकर अनेक नये पदार्थो का उत्पादन सभव हो सका। नये पदार्थो मे औषधियाँ थी, सुगधित द्रव्य थे और परिमार्जक थे।

सबैशिए की विधि मे हाइड्रोजन और असतृप्त पदार्थ का निकल के साथ अस्थायी सबध हो जाता है, इसके फलस्वरूप हाइड्रोजन स्थायी बधक प्राप्त कर लेता है। इस खोज के बाद शीघ्र ही कम क्वथनाक वाली वसाओ का अधिक सतृप्त, उच्चतर क्वथनाक वाले और इस प्रकार सख्त किये गये पदार्थो के बनाने मे उपयोग किया गया। इस प्रकार ये पदार्थ मक्खन का काम दे सके।

मैग्नीशियम और निकल ही इन दोनो विधियो मे प्रमुख रहे है, यद्यपि यह प्रश्न कई बार उठ चुका है कि क्या दूसरी धातुएँ कुछ दशाओ मे विशिष्ट उपयोगी नही सिद्ध हो सकती। मैग्नीशियम के स्थान पर लिथियम के प्रतिस्थापन से वही प्रभाव होते है। निकल की मिश्रधातुएँ और सिलिसिक कैरियरो (Silicic carriers) के विभाजन मे मिश्रण का टेक्निकल उपयोग होने लगा है। ग्रिनयार्ड और सबैशिए, दोनो प्रतिक्रियाओ का शोध-कार्य तथा औद्योगिक उत्पादन दोनो मे, खूब उपयोग होता है।

१९१३

आल्फ्रेड वर्नर (Alfred Werner)

(१८६६-१९१९)

"अणुओ में परमाणुओ की कडियो (links) पर किये गये कार्य की प्रशंसा में यह पुरस्कार दिया गया; इससे पुरानी समस्याओ पर नवीन प्रकाश पडा और शोध-कार्य के, विशेषकर अकार्बनिक रसायन के, नये क्षेत्र खुल गये।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

आल्फ्रेड वर्नर ने आस्ट्वल्ड और बाएर की भाँति आरभिक अवस्था से ही रासायनिक प्रयोग मे विशेष रुचि उत्पन्न कर ली थी। अपने माता-पिता की जायदाद मे मिले म्हूलहाउजेन (अलसास) के अन्न-भण्डार मे ही आपने अपनी प्रयोगशाला का निर्माण किया। आपका रसायन का अध्ययन कार्ल्सरुहे मे आरम्भ हुआ और जूरिख मे चलता रहा। वहाँ आर्थर हाट्ज्श (Arthur Hantzsch) ने कुछ नाइट्रोजन-युक्त कार्बनिक यौगिक निकाले थे, जिनके विश्लेषण से रचना एक ही प्रकार की मालूम पडती थी, किन्तु उनके गुणधर्मो मे विभिन्नता थी। डाक्टर उपाधि के लिए लिखी गयी अपनी थीसिस (१८९०) मे वर्नर ने इस प्रकार की विशिष्ट समावयवता (isomerism) की व्याख्या का विकास किया था। आपने वैट हाफ के चतुष्फलकीय (terrahedral) कार्बन परमाणु वाले सिद्धात का विस्तार किया, नाइट्रोजन के लिए उसमे थोडा परिवर्तन करना पडा।

वर्नर के "अकार्बनिक यौगिको के रचना सबधी प्रकाशनो" का आरम्भ १८९३ मे हुआ। आपने इस पर लगभग २० प्रबध प्रकाशित किये। सकुल (complex) यौगिको के भौतिक मापन से उनके प्रकाश एव विद्युत् अतरो का पता चला और इससे उन अणुओ की आतरिक रचना स्पष्ट हुई। इन बनावटो का मानसिक चित्र बनाने के लिए ज्यामितीय नमूने (models) उस समय भी सहायक सिद्ध हुए, यद्यपि ये

नमूने पहले की अपेक्षा काफी कठिन थे। वर्नर को इन नमूनो की आवश्यकता नही थी। आप इन पदार्थो की रचना मे इतना मग्न रहते थे कि उनके सबधो और उनकी प्रकृति को आप केवल देख कर कर ही समझ लेते थे।

कुछ धातुओ, जैसे कोबाल्ट (Co) क्रोमियम (Cr) अथवा र्‌होडियम (Rh) के आक्सैलिक अम्ल के अवशेप (C_2O_4) के साथ सकुल यौगिको के दर्पण प्रतिबिम्बो को एक प्रकार का नही होना चाहिए। इन पदार्थो का असममित होना इनका विशेप लक्षण था। वैट हाफ ने इन यौगिको द्वारा ध्रुवीयित (polarized) प्रकाश के तल मे परिवर्तन का यही कारण बताया था। जब वर्नर ने प्रकाश-सक्रिय सकुल यौगिको को, जिनमे उपर्युक्त तत्त्वो मे से एक तत्त्व केन्द्र मे रहता था, ज्ञात किया, तो आपका सिद्धात अद्‌भुत रूप से दृढ हो गया।

३० वर्ष की अवस्था के पहले ही (१८९५ मे) वर्नर पूर्ण रूप से आचार्य पद पर पहुँच गये। डाक्टर की उपाधि पाने के लिए, आपकी सरक्षता मे कभी-कभी २५ विद्यार्थी तक आपकी छोटी प्रयोगशाला मे काम करते थे। १९०९ मे जूरिख मे आपके लिए एक नये रसायन इस्टीट्‌यूट का निर्माण किया गया। घातक रोग के लक्षण प्रकट होने के पूर्व आप १९१५ तक वही पढाते और कार्य करते रहे।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"सयोजकता के पुराने सिद्धात के दृष्टिकोण से सतृप्त तत्त्वो के परमाणुओ मे दूसरे परमाणुओ अथवा परमाणु-समूहो के साथ जो स्वय सतृप्त प्रतीत होते है, बधकता बनाने की काफी क्षमता रहती है। इस प्रकार नये परमाणुओ सेनि श्चित प्रकार के अन्य यौगिक बनते है। बहुत-से आणव (molecular) यौगिको पर प्रयोग करके यह नियम अब इतना दृढ हो गया है कि आगे के शोध-कार्य के लिए इसको आधार बनाया जा सकता है।

"इस सम्बन्ध मे सबसे पहला प्रश्न यह उठता है कि सकुल यौगिक के केन्द्र वाले धातु परमाणु मे सीधे बँध जा सकने वाले परमाणुओ की सख्या कितनी है। यह देखा गया है कि यह सख्या सयोग करने वाले तात्त्विक परमाणुओ की प्रकृति पर निर्भर होती है। इसको अधिकतम समपदस्थापन (coordination) सख्या की सज्ञा दी गयी है। अब तक यह सख्या ४, ६ और ८ पायी गयी है। सैद्धातिक रूप से सममित व्यवस्था बनाने के लिए (जिसमे केन्द्रीय परमाणु से वे सब बिन्दु एक ही दूरी पर

1 Les Prix Nobel en 1913 से अनूदित।

रहे) जिस सख्या की आवश्यकता होती है उससे यह सख्या मिलती है। तब भी सकुल रासायनिक यौगिको की रचना सदैव इस प्रकार की नही होती, जिससे अधिकतम समपदस्थापन सख्या मेल खा सके क्योकि जिस प्रकार सयोजकता-असतृप्त परमाणु होते है, उसी प्रकार समपदस्थापन-असतृप्त परमाणु भी होते है।

"हाल के ही अन्वेषणो से ज्ञात हुआ है कि मुख्य सयोजकता principal valences (जिससे प्रथम श्रेणी के बधक बनते है) और सहायक सयोजकता (auxiliary valences) मे (मेरे द्वारा रखा गया सकुल यौगिको को बनाने वाली सयोजकता का नाम) कोई विशेष भेद नही होता। अणु मे जिस मजबूती से परमाणु जुडे होते है, उसके लिए इन दोनो सयोजकताओ का महत्त्व बिलकुल एक है।

"अभी तक हमने सकुल यौगिक के परमाणुओ की बधुता के सबधो पर विचार किया है, अणुओ मे इन परमाणुओ के सापेक्ष स्थान पर अभी विचार नही किया गया है। प्रश्न यह है कि ६ समूह (क) केन्द्रीय धातु परमाणु (धा) से (देश मे) किस प्रकार की व्यवस्था करके सकुल मूलक धा का ६ बनाते है। इस प्रश्न का उत्तर वस्तुत पायी गयी समावयवताओ (isomerisms) की विभिन्न देशीय व्यवस्थाओ की तुलना करके प्रायोगिक विधि से दिया गया है।

"समावयवता पहले प्लैटिनम श्रेणी मे पायी गयी और बाद मे कोबाल्ट श्रेणी में। समावयवता की व्याख्या के लिए कई वर्षों तक कार्य करना पडा। आज हमे समावयवता के वर्णन सहित कोबाल्ट की २० विभिन्न श्रेणियाँ ज्ञात है। क्रोमियम के लिए इसी प्रकार की समावयवता पी० फाइफर द्वारा सिद्ध की गयी है। समावयव यौगिको के गुण-धर्मों मे विभिन्नता इतनी अधिक है कि कभी-कभी उनको केवल देखकर ही पहचाना जा सकता है।

"यदि केन्द्रीय धातु परमाणु से सयोग करने वाले ६ समूह एक से नही होते तो दर्पण-प्रतिबिब से न मिलने वाली विभिन्न आणव रचनाओ को बनाया जा सकता है। इन रचनाओ को देखकर यह आशा की जा सकती है कि इन समावयवो को प्रकाश-सक्रिय दर्पण प्रतिबिंब रूप मे मिलना चाहिए।

"फलत हमने ऐसे यौगिको को प्रकाश-सक्रिय समावयवो मे पृथक् करने का प्रयास किया। कई दशाओ मे वस्तुत ऐसा किया जा सका। अभी हाल मे ही हमने सक्रिय रूपो को पृथक् किया और इस प्रकार धातु-तृ-आक्सैलिक अम्लो के साधारण सूत्रो को निश्चित रूप से सिद्ध कर दिया—

$[Co(C_2O_4)_3]\ R_3$, $[Cr\ (C_2O_4)_3]\ R_3$, $[Rh\ (C_2O_4)_3]\ R_3$"
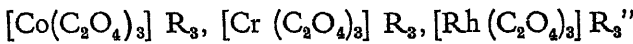
सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

रसायन के कुछ प्रत्यय बडे दृढ वन चुके थे। वर्नर के सिद्धातो ने इनसे ऊपर उठकर रसायन-ज्ञान मे वृद्धि की। कुछ परिस्थितियो मे, जैसा आपने प्राथमिक एव सहायक सयोजकता के भेद करने मे किया, आपको समझौता करना पडा। जब आपने रूढि अनुसार एक सयोजक हाइड्रोजन परमाणु की कई सयोजकताएँ मानी तो उस समय के केवल इने-गिने रसायनज्ञ ही आपकी बात मानने को तैयार थे। हाल के अन्वेषणो से वर्नर का सिद्धात एक दूसरी दिशा से सिद्ध हुआ है। लाइनस पाउलिग (Linus Pauling) के शब्दो मे—"हाल के कुछ वर्षो मे यह ज्ञात हुआ है कि कुछ परिस्थितियो मे हाइड्रोजन का एक परमाणु एक परमाणु नही, प्रत्युत दो परमाणुओ की ओर तीव्र बल से आकृष्ट होता है। इसलिए इसको दोनो परमाणुओ का बधक समझना चाहिए। यह 'हाइड्रोजन' बधक कहलाता है।

"अकार्बनिक रसायन के ढाँचे पर ही कार्बनिक रसायन का विकास हुआ है। उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ मे अकार्बनिक रसायन मे जो विशेष रुचि दिखायी जाती थी वह शताब्दी के अत तक प्राय. समाप्त हो चुकी थी। वर्नर के कार्य से इस क्षेत्र मे नये कार्य के लिए काफी प्रेरणा मिली और शीघ्र ही कार्बनिक रसायन ने अपनी बहिन अकार्बनिक रसायन की सहायता की। अतरिक्ष (space) मे रखे अणु मे परमाणुओ की व्यवस्था विन्यास समावयवता (stereochemistry) का विषय है। अकार्बनिक रसायन मे यह एक नया विभाग बन गया।

नये प्रायोगिक अनुभव से अनेक खनिजो मे सकुल यौगिक पाये गये। अकर्बनिक रसायन मे नये प्रत्ययो के विकास द्वारा खनिजो से तत्त्वो को निकालने की नयी विधियो को ज्ञात किया गया। स्वर्ण और प्लैटिनम धातुओ को बनाने की विधियो मे भी सशो-धन हुआ।

१९१४

थियोडोर विलियम रिचर्ड्स (Theodore William Richards)
(१८६८-१९२८)

"अनेक रासायनिक तत्त्वों के बिलकुल ठीक परमाणु-भार को ज्ञात करने के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

थियोडोर विलियम रिचर्ड्स का जन्म जर्मन टाउन पा मे हुआ था। आपके पिता चित्रकार थे और आपकी माता कवयित्री। बालक शीघ्र ही रासायनिक प्रयोगो का चित्रकार सिद्ध हुआ। आपने हार्वर्ड मे अध्ययन किया, जहाँ प्रोफेसर जोसियाह् पार्सन्स कुक (Josiah Parsons Cooke) ने आक्सिजन का परमाणु-भार फिर से ज्ञात करने का सूक्ष्म एव कठिन कार्य आपको सौपा। आपने इसके लिए १५ ८६९ का मान निकाला, इसमे हाइड्रोजन को इकाई मानने पर धन अथवा ऋण ० ००१७ की त्रुटि हो सकती थी। डाक्टर की उपाधि के लिए १८८८ मे लिखी गयी थीसिस का यही विषय था। आपने जर्मनी मे अध्ययन पूरा किया। १८९४ मे सहायक आचार्य होकर आप हार्वर्ड लौट आये। १९०१ मे गाटिन्गेन विश्वविद्यालय ने आपको आचार्य बनाना चाहा, पर आपने उसे अस्वीकार कर दिया। इस पर हार्वर्ड विश्वविद्यालय ने ही आपको आचार्य बना दिया। अब आपको अध्यापन मे कम समय देना पड़ता था।

परमाणु-भार निकालने एव दहन तथा निराकरण के उष्मा-मान को उच्चतम यथार्थता से निकालने के कारण पहले के स्वीकृत मापनो मे अनेक परिवर्तन हुए। जब म्यूनिख मे के० फाया (K Fajans) को साधारण खनिजों से एव यूरेनियम तत्त्वातरण (transformation) से प्राप्त सीसे के परमाणु-भार की तुलना की आवश्यकता पडी तो आपने (१९१३) मे रिचर्ड्स को उनके सैम्पुल (sample) भेजे। रिचर्ड्स ने इस अन्वेषण का विस्तार विभिन्न स्रोतो एव भूगर्भ की विभिन्न पृष्ठभूमि से प्राप्त तत्त्वो के परमाणु-भार को निकाल कर किया। आपके ही शब्दो मे "बिलकुल यथार्थ रासायनिक अथवा भौतिक रासायनिक मापन की सफलता के लिए

यह आवश्यक है कि पदार्थ और विधि का चयन इस प्रकार किया जाये कि (जहाँ तक सम्भव हो सके) उसी प्रकार के समान प्रयोगो को करके भौतिक अथवा रासायनिक त्रुटियो को अधिकतम बचाया जाये। ऐसा चयन करने के लिए काफी पढना पडता है और काफी दिमाग भी लगाना पडता है। सावधानियाँ भी ऐसी होनी चाहिए जिनसे कि प्रायोगिक सूक्ष्मता एक स्तर की रह सके। परिस्थितियो का सोच समझ कर ठीक चुनाव प्रयोग को यान्त्रिक विधि से करने की अपेक्षा कही अधिक आवश्यक है, यद्यपि प्रयोग करना भी बहुत महत्त्वपूर्ण है।"

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"जलयोजित केलासो के अवस्थान्तर (transition) ताप के निर्धारण के लिए सोडियम ब्रोमाइड को बहुत अधिक शुद्ध रूप मे तैयार किया गया है। यह अवस्थान्तर ताप, विशेषकर ऐसे पदार्थ का जिसकी अवस्थान्तर ऊष्मा कम है, थोडी-सी ही अशुद्धि से बहुत बदल जाता है। प्रयोगशाला के निश्चित कार्यक्रम के अनुसार इस सोडियम ब्रोमाइड का, जो बिलकुल स्थिर अवस्थान्तर बिन्दु देती थी, विश्लेषण किया गया। स्टास द्वारा दिये गये परमाणु-भार से जितनी ब्रोमीन निकलनी चाहिए थी उससे कहीं अधिक ब्रोमीन निकली। इससे मुझे बडा आश्चर्य हुआ। इसकी युक्तिसगत व्याख्या केवल एक थी और वह यह कि स्टास द्वारा दिये गये सोडियम के परमाणु-भार का मान बहुत अधिक था। इस प्रकार के क्रान्तिकारी निष्कर्ष को निकालने के पहले इस तथ्य का दूसरी विधियो से दृढ करना आवश्यक था। विशेषतया, स्टास का सोडियम क्लोराइड वाला प्रयोग अवश्य दुहराना चाहिए था, क्योकि सोडियम क्लोराइड मुख्य पदार्थ था, जिस पर आप द्वारा दिया गया सोडियम का परमाणु-भार आधारित था। इस पर शोध-कार्य सरल नही था क्योकि इसके लिए सपूर्ण रसायन क्षेत्र मे अधिकतम सावधानियो से किये गये प्रयोगो के परिणामो का बहिष्कार करना पडता था। अत अति सावधानी और असाधारण होशियारी से ये प्रयोग करने पडते थे। इसकी कहानी लम्बी है और उसको यहाँ केवल सक्षेप मे ही सुनाया जा सकता है। हमने ज्ञात किया कि केवल सोडियम के परमाणु-भार मे ही नही, प्रत्युत क्लोरीन के परमाणुभार मे भी त्रुटि थी, वस्तुत क्लोरीन की त्रुटि अशत सोडियम के कारण ही थी, क्योकि स्टास ने जिस रजत का प्रयोग किया था उसमे अप्रत्याशित रूप से कुछ अशुद्धियाँ थी। फलत: दी हुई धातु से आपको जितनी रजत क्लोराइड मिलनी चाहिए थी, उसकी

1 Les Prix Nobel en 1914-18 से अनूदित।

अपेक्षा कम मिलती थी। इससे क्लोरीन का परमाणु-भार आपने काफी कम निकाला, स्पष्ट है कि सोडियम और रजत का परमाणु-भार काफी अधिक हो गया होगा। स्टास की विधि मे रजत क्लोराइड का अवक्षेपण गलित सोडियम क्लोराइड को रजत नाइट्रेट के घोल मे रख कर किया गया था। इससे अवक्षेप मे अशुद्धि की वृद्धि हो जाती थी, अत रजत के लिए मान और बढ जाता था। किन्तु ये तो प्रयोग की सूक्ष्म बाते है दूसरों ने कई विधियो से क्लोरीन के परमाणु-भार के अधिक मान को ठीक ठहराया है।

"मेरे दूसरे कार्य की एक नयी विधि थी और समस्या भी कुछ-कुछ नयी थी। मैने लिथियम पर क्लोरेट के विश्लेषण द्वारा लिथियम और रजत की सीधे आक्सिजन से तुलना की और लिथियम क्लोराइड से रजत द्वारा सीधे रजत क्लोराइड प्राप्त की। इन दोनो प्रक्रियाओ से क्लोरीन और आक्सिजन की तुलना की नयी विधि निकली—इस विधि को ज्ञात करने की मै बडी कोशिश मे था, क्योकि अनेक परमाणु-भार रजत की सहायता से प्राप्त किये जाते है, किन्तु उनका मान आक्सिजन के सापेक्ष मानो से व्यक्त किया जाता है।

"वर्षों पूर्व मेरे साथी ग्रिगरी पी० बैक्स्टर (Gregory P Baxter) और मैने पार्थिव (terrestrial) लोह के परमाणु-भार पर कार्य किया था। उस समय हम लोगो ने इसका जो मान निकला था वह उस समय के स्वीकृत मान से कम था। हम लोग यह जानने के लिए सदैव उत्सुक रहते थे किप रमाणु-भार सदैव स्थिर होते है या नही, इस कौतूहल मे कभी कमी नही हुई। मै सोचा करता था कि उल्काओ मे पाये जाने वाले लोह का, जिसकी उत्पत्ति कदाचित् इस सौर परिवार के बाहर हुई हो, परमाणुभार यहाँ के लोह के परमाणुभार से मिलता है या नही। बैक्स्टर ने कृपा करके इस पर अन्वेषण करना स्वीकार किया। पृथ्वी पर पिघलाये लोह के परमाणु-भार निर्धारण मे काम आयी उन्ही विधियो को उल्काओ के लोहे मे लगाने से आपने बिलकुल सरलतापूर्वक दिखाया कि दोनो के परमाणु-भार बिलकुल एक होते है। इसका निष्कर्ष जो आशा के विपरीत नही है, यह है कि सारा ब्रह्माड एक है। जो इस विचार के महत्त्व को कुछ अनुभूति के साथ समझते है उनके लिए इस तथ्य का ज्ञान बडा रोचक है और इससे उनमे रोमाञ्च होने लगता है।

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

रिचर्ड्स महोदय ने विधियो को अधिक यथार्थ बनाकर तीन दशमलव तक बिलकुल ठीक परमाणु-भार ज्ञात किये। यहाँ कदाचित् यह विचित्र जान पड़े कि उपर्युक्त

१९१५

रिचर्ड विल्सटैटर (Richard Willstatter)

(१८७२–१९४२)

"वनस्पति-जगत् में रंग द्रव्यो, विशेषतया क्लोरोफिल की शोध के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

रिचर्ड विल्सटैटर का जन्म कार्ल्सरुहे, बादेन, जर्मनी मे हुआ था। आपने वही के और न्यूरेम्बर्ग के स्कूल मे शिक्षा प्राप्त की। गणित, साहित्य, भाषाओ—सब विषयो मे आप तेज थे। अपनी जीवनी मे आपने अपने बारे मे लिखा है, "एक विषय की ओर स्वाभाविक योग्यता, विशेष करके एकमुखी स्वाभाविक योग्यता की, मुझमे कमी थी, मुझे महत्वपूर्ण दशको (decades) मे एकमुख होकर कार्य करने की क्षमता का आशिक विकास करना पडा।" अध्ययन के लिए आपने रसायन-विज्ञान चुना। कायिकी और औषध-विज्ञान मे आपकी विशेष रुचि का परिचय आपके बाद के कार्य मे मिलता है। म्यूनिख मे कोर्स समाप्त करने के पश्चात् एलकेलाइड रसायन की ओर आल्फ्रेड आइनहार्न (Alfred Einhorn) द्वारा आपका ध्यान आकर्षित किया गया। बहुत वर्षो तक शोध करके विल्सटैटर ने ट्रोपीन की, जो ऐट्रोपीन के अणु का मुख्य भाग है, रासायनिक रचना को स्पष्ट किया। आपने बेजीन और नैपथलीन के यौगिको के आक्सीकरण से प्राप्त बीच के थोडी देर के लिए स्थायी यौगिको को पृथक् करने की विधियाँ ज्ञात की। इससे आप ऐनिलिन के आक्सीकरण से प्राप्त काले रग की रासायनिक व्याख्या करने मे समर्थ हुए।

१९०२ मे आप म्यूनिख मे सहायक आचार्य हुए। १९०५ मे जूरिख के आचार्य पद को स्वीकार करने के लिए आपने म्यूनिख छोड दिया। यहाँ आपने क्लोरोफिल पर कार्य करना आरम्भ किया। पहले धीरे-धीरे अम्ल द्वारा और बाद मे क्षार द्वारा इसके अणुको तोड़ना आपका मुख्य ध्येय था। इस प्रकार से बने हुए यौगिको को प्राप्त करके आप उनका परिचय प्राप्त करना चाहते थे। क्लोरोफिल मे लगभग तीन

प्रतिशत मैग्नीशियम प्राप्त हुआ। यह रासायनिक बधको से नाइट्रोजन के चार परमाणुओ से जुडा हुआ था। ये परमाणु कार्बन परमाणुओ के साथ स्वय घेरा बनाते थे। विल्सटैटर ने बाद मे ज्ञात किया कि रक्त के लाल रग द्रव्य के अणु–हीमोग्लाबिन–मे लोह परमाणु इसी प्रकार व्यवस्थित था।

यदि पौधे के सब मुख्य अवयवो का वास्तविक रासायनिक अध्ययन करना है तो जीवित पौधे को प्रयोगशाला मे लाना आवश्यक है। अन्वेषण विधियो को सूक्ष्म बनाना था जिनसे पौधे द्वारा किये गये रासायनिक परिवर्तनो की नक़ल की जा सके। विल्सटैटर ने इस सिद्धात की घोषणा की और रग द्रव्यो तथा ऐंजाइम पर किये गये अपने कार्य मे इसी का अनुसरण किया।

प्रथम विश्व-युद्ध के कारण इस कार्य मे कुछ व्याघात हुआ। १९११ में बर्लिन-डाह्लेम के विलहेल्म इस्टीट्यूट मे कैसर द्वारा बुलाये जाने पर विलसटैटर वहाँ चले गये। १९१६ मे आप म्यूनिख लौट आये। इस बीच मे आप केवल २० मास तक ही शोध-कार्य कर सके। आपने गैस से अच्छी तरह से बचने के लिए तीन पर्तों के अवशोषक वाली एक गैस नक़ाब (Gas mask) निकाली। यह १९११–१९१६ तक किये गये कार्य की अद्भुत सफलता थी।

१९१७ के बाद के शोधित विषयो मे ऐसिमिलेशन (स्वीकरण) की विधि से आपने कार्य आरम्भ किया। अब आपने एन्जाइम प्रक्रिया के रसायन को समझने का प्रयास किया। इसका क्रमबद्ध अध्ययन आपने जूरिख मे ही आरम्भ कर दिया था। शर्करा को तोडने वाला एन्जाइम–सैकेरेज–शुष्क यीस्ट, जिसमे वह पाया जाता था, की अपेक्षा ४००० गुना अधिक शुद्ध दशा मे प्राप्त किया गया। सूखे पौधे की जड से प्राप्त आक्सिजन को तोडने वाले एन्जाइम–पर–आक्सिडेज को पौधे की सक्रियता से १२००० गुना अधिक सक्रिय रूप मे प्राप्त किया गया। जीवशास्त्र के अनुसार कुछ अस्पष्ट, किन्तु प्रचलित व्याख्या का इस प्रकार का रासायनिक ज्ञान प्राप्त करना विलसटैटर की महान् सफलता थी।

१९२४ मे आचार्य पद (म्यूनिख) से आपने विश्वविद्यालय की सेमिटिक विरोधी शक्तियो के प्रतिरोध मे त्यागपत्र दे दिया। तब भी रासायनिक उद्योग सबधी शोध मे और व्यावसायिक सघटनो की सहायता मे आप सलग्न रहे। आपने औषध-उपयोगी निद्राजनक एवर्टिन को निकाला। नात्सी शासन की कठिनाइयो ने आपका हृदय विदीर्ण कर दिया और १९३९ मे आप जर्मनी छोड़ कर स्विट्जरलैंड चले गये।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"जिन लक्षणो से किसी प्रकार की पत्ती के रग-द्रव्यो की तुलना की जाती है उन्ही की सहायता से हम यह जानने मे समर्थ हुए कि प्रयोग-शाला मे बनायी गयी क्लोरोफिल के अणु मे सूक्ष्म परिवर्तन होते है या नही। अत ये लक्षण क्लोरोफिल को शुद्ध और अहानिकर रूप मे बनाने के, एव उसके विश्लेषण से प्राप्त पहले के अन्वेषणों द्वारा ज्ञात उन यौगिको के निष्कर्ष को दृढ करने के, आधार थे। कई अमिश्र्य (immiscible) विलायको जैसे पेट्रोलियम ईथर और जलीय ऐलकोहल के बीच मे वितरण (distribution) की विधियो से विलयनो की शुद्धता के अश धीरे-धीरे बढाये जाते थे और इनको जानने के लिए रगमापी (colorimetric) मापनो का विश्वास करना पडता था। इस विधि से पत्तियो के पीले रग और मिश्रित रगहीन द्रव्यो को पृथक् किया गया। ये पीले रग, जो कैरोटिन्वायड (carotinoid) कहलाते है, आक्सिजन से काफी बधुता दिखाने के कारण स्पष्ट हो जाते है। इन रगो के पत्ती के हरे रग के साथ होने से कायिकी मे इनका विशेष महत्व जान पडता है। फलत इन पीले पदार्थो को भी शुद्ध रूप मे तैयार किया गया और इनका विश्लेषण किया गया। पौधे के हर हरे भाग मे और अनेक पीले भागो मे आसानी से केलास बनने वाले नाइट्रोजन रहित दो रगद्रव्य पाये जाते है। एक तो बहुत समय से ज्ञात गाजर के कैरोटीन से मिलता है। इसका सूत्र $C_{40}H_{56}$ है। इसका साथी पर्णपीत (xanthophyll) पदार्थ रूप मे पहले ज्ञात नही था यद्यपि यह पत्तियो मे अधिकाश रूप मे पाया जाता है। रचना और गुणधर्मों के अनुसार यह कैरोटीन का आक्साइड $C_4O H_{56}O_2$ है। केवल फियोफायसी मे कैरोटीन और पर्णपीत के साथ एक तीसरा कैरोटिन्वायड, फ्यूकोजैंथिन होता है। इसके कारण पहले दो रगद्रव्य दब से जाते है। फ्यूकोजैंथिन को केलास रूप मे प्राप्त किया गया है। इसका सूत्र $C_{40}H_{56}O_6$ है।

"क्लोरोफिल के भार से ८–१५ गुना अधिक अन्य पदार्थ पौधे के सार (extract) मे होते है। किन्तु विभाजन (partition) विधियो से ७० प्रतिशत शुद्ध क्लोरोफिल वाले सार को बनाया जा सकता है। यहाँ पर एक आश्चर्यजनक परीक्षण हुआ। इससे समस्या हल करने मे सुविधा हुई। जब यह पदार्थ शुद्धता के विशेष अश तक पहुँच जाता है तो इसके सच्चे विलयन सबध प्रकट हो जाते है। ये सबध पहले के मिश्रित पदार्थों की उपस्थिति मे अस्पष्ट रहते है। शुद्ध क्लोरोफिल पेट्रोलियम ईथर मे विलेय

[1] Les Prix Nobel en 1914--1918 से अनूदित।

नही है और ऐलकोहलीय विलयन मे ऐलकोहल को धोने पर पृथक् हो जाती है। इस विधि से सूखी अथवा ताजी पत्तियो से, पौधे के अन्य पदार्थों, जैसे शर्करा अथवा ऐलके-लाइड की भाँति, शुद्ध क्लोरीफिल को काफी मात्रा मे तैयार किया जा सकता है।

"इस प्रकार प्राप्त शुद्ध क्लोरोफिल अब भी समाग (uniform) पदार्थ नही है। (इसमे नीली-हरी क्लोरोफिल–क–और पीली हरी क्लोरोफिल–ख– के क्रमशः ३ और १ अणु होते है।)

"क्लोरोफिल अर्थात् उसके दोनो अवयव कलिल (colloid) दशा मे कार्बन-द्वि-आक्साइड के साथ सयुक्त–यौगिक बनाते है। यह यौगिक विच्छेदित हो सकता है। इस परीक्षण से ऐमिमिलेशन के नये सिद्धात का आधार बन सकता है। इसके अनुसार प्रकाश अवशोषित होकर क्लोरोफिल अणु के साथ स्वय कार्य करता है, इस अणु मे कार्बन–द्वि–आक्साइड मैग्नीशियम सकुल के साथ आशिक रूप से पहले ही जुड चुकी होती है। कार्बन-द्वि-आक्साइड की सयोजकता की पुनर्व्यवस्था से रासायनिक प्रक्रिया होती है। इससे स्वत विच्छेदन होता है, यह इस प्रकार होता है जिससे कार्बन-द्वि-आक्साइड की सारी आक्सिजन, गैस रूप मे निकल आती है।

"ऐन्थोसायेनिनो का शुद्ध रूप मे पृथक्करण और उनका विश्लेषण उनकी मूल प्रकृति पर आधारित है। यह अच्छे केलासीय लवणो को हाइड्रोक्लोरिक अथवा पिक-रिक अम्ल की सहायता से तैयार करके सभव हो सका है। इसके अम्लीय यौगिक लाल होते हैं और क्षारीय यौगिक नीले। इसके बैजनी उदासीन यौगिको को उनके आतरिक लवण (inner salts) फिनोल बिटेन्स समझना चाहिए। इन्ही यौगिको के विभिन्न मात्राओ मे होने से पुष्पो के विविध रग होते है।

"ऐन्थोसायेनिन ग्लूकोसाइड सिद्ध हुए, जिनमे वास्तविक रग-द्रव्य फिनालिक हाइड्राक्सिल समूह के यौगिक एक या दो (कभी-कभी और अधिक) शर्कराओ, जैसे द्राक्षाशर्करा, गैलेक्टोज और र्‌हैमोज से जुडे होते है।"

सिद्धांत और व्यवहार पर प्रभाव

रग-द्रव्यो को पत्तियो से नयी विधियो द्वारा पृथक् किया गया। उनकी अणु-रचना के अन्वेषण से रासायनिक रचना के नये सिद्धात प्रकट हुए। इनमे से एक विधि मिखाइल स्वेट (Mikhail Tswett) के पूर्व-आविष्कार पर आधारित थी। स्वेट ने पत्ती के सार वाले विलयन को कैलसियम कार्बोनेट चूर्ण से भरी एक शीशे की नली मे से छाना और यह देखा कि छनित मे केवल कैरोटीन आये, बाकी सब विलेय पदार्थ

चूर्ण की सतह पर ही रुक गये। अधिशोषण की सूक्ष्म शक्तियो का प्रयोग करके मिश्रण के पृथक्करण के लिए यह एक नयी विधि थी। विल्सटैटर ने इस विधि को और सूक्ष्म बनाया। अधिशोषण करने वाले नये द्रव्य बनाये गये और ऐसे विलायको का चयन किया गया जिनसे सबसे अच्छे परिणाम निकलते थे। प्रयोगशाला और उत्पादन के साज-सामानो मे आज कल इस विधि—क्रोमैटोग्राफी—के बिना काम नही चलता।

क्लोरोफिल की विशिष्ट सवेदनशीलताओ (sensitivities), अशुद्धियो का उसकी विलेयता पर प्रभाव, पत्ती मे उपस्थित विशेप एन्जाइम के वातावरण मे एथिल ऐलकोहल के साथ उसकी प्रतिक्रिया, दूसरी धातुओ द्वारा मैग्नीशियम को जिस सरलता से हटाया जा सकता है और उसका प्रतिस्थापन हो सकता है—इन सवके ज्ञान से इस पदार्थ की टेक्निकल तैयारी की विधि का सशोधन किया जा सका है। इसके व्यापारिक उत्पादन के समय इस पदार्थ के विशेष उपयोगी गुणधर्मो की, जिनका औपध रूप मे बडा महत्त्व है, रक्षा की जा सकी है।

जब तक यह नही मालूम हुआ कि विटामिन ए से इसका निकट सबध है तब तक कैरोटिन्वायड प्रयोगशालाओ की केवल कौतूहलता रही। वृद्धिवर्धक इस विटामिन के बनने के पहले गाजर मे पायी जाने वाली एक कैरोटीन बनती है और मानव प्राणियो मे वृद्धि-वर्धक के रूप मे इसका प्रयोग होता है।

विलयनो की अम्लीय अथवा क्षारीय प्रकृति को बताने के लिए फूलों की पॅखुडियो के सार का रग-परिवर्तन के कारण प्रयोगशाला मे उपयोग होता था। विल्सटैटर के कार्य से इस उपयोग का रासायनिक आधार स्पष्ट हुआ और इसके साथ-साथ फूल के रगद्रव्यो—ऐन्थोसायेनिन—का व्यापक रूप भी स्पष्ट हुआ।

(१६१६-१६१७)

कोई पुरस्कार नही दिया गया

१९१८

फ्रिट्ज हाबेर (Fritz Haber)

(१८६८--१९३४)

"नाइट्रोजन और हाइड्रोजन तत्त्वों से अमोनिया के संश्लेषण के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

अपनी जन्मभूमि ब्रेसलाऊ मे अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् फ्रिट्ज हाबेर ने अपने पिता के व्यापार को चलाने का असफल प्रयास किया। तब एक मित्र के कहने पर आप कार्ल्सरूहे चले गये। वहाँ के टेक्नीशे होखशूले नामक विश्वविद्यालय मे टेक्निकल पदो के लिए विद्यार्थियो को तैयार किया जाता था। उद्योग और विज्ञान के इस सबध को आपने पसद किया। १८९३ मे आपने उच्च ताप विश्लेषण (Pyrolysis) द्वारा कार्बनिक यौगिको के विच्छेदन पर कार्य आरम्भ किया। उस समय के अग्रतम फ्रासीसी रसायनज्ञ मार्सेलिन बर्थेलो (Marcelin Berthelot) इस पर काम कर चुके थे। विशेष अध्ययन से आपने बर्थेलो के स्वेच्छाचारी (arbitrary) व्यापक सिद्धातो मे सुधार किया। उच्चताप विश्लेषण वाली प्रतिक्रियाओ पर आप जीवन-पर्यत कार्य कर सकते थे तथापि कार्बनिक पदार्थो पर विद्युत्-प्रभाव की ओर आप आकर्षित हुए। कार्य के इन दो क्षेत्रो मे गैस-प्रतिक्रियाओ और रासायनिक ऊर्जा विज्ञान (energetics) द्वारा सबध स्थापित होता था। वालथर नर्न्सट (Walther Nernst) ने उन्ही दिनो मे इस सिद्धात का विकास किया था—जब गैसे निकलती है तो वैद्युत रासायनिक चालक बल, (electrochemical driving force) विद्युदग्र (धातु जिससे विलयन मे विद्युत्-धारा प्रवेश करती है) की चारो ओर की गैस के प्रभावात्मक (effective) साद्रण पर निर्भर होता है। इस चालक बल वोल्टता, विशेषतया रासायनिक प्रतिक्रियाओ को नियमित करके यह दिखाया गया कि ये प्रतिक्रियाएँ कई क्रमो (steps) मे होती है। नाइट्रोबेजीन का ऐनिलिन मे अवकरण (reduction) जिसमे नाइट्रोबेजीन के दो आक्सीजन परमाणु दो हाइड्रोजन

परमाणुओ से क्रमश बदल जाते है, ऐसा उदाहरण है जो टेक्निकल दृष्टिकोण से उपर्युक्त प्रक्रिया का द्योतक है।

इस सफलता के पश्चात् हावेर ने टेक्निकल विद्युत्-रसायन के पूरे क्षेत्र और उसके वैज्ञानिक आधार पर एक पुस्तक लिखी। इसी प्रकार गैस प्रतिक्रियाओ मे ऊर्जा सबधो पर पुस्तक लिखकर आपने विज्ञान और टेक्निकल ज्ञान को मिलाया।

अपने कार्य की ख्याति की हावेर को बहुत समय तक प्रतीक्षा नही करनी पडी, अपने होखशूले (Hochschule) मे ही आप १९०६ मे आचार्य हो गये। इस समय तक आप उसके तत्त्वो के विश्लेषण से अमोनिया के सश्लेषण की सभावना पर कार्य आरम्भ कर चुके थे। कार्ल एग्लर ने (Karl Engler), जो उस समय के टेक्निकल रासायनिक विज्ञान के अग्रतम पुरुष थे, पास के लुडविग्सहाफेन मे स्थित बाडिशे ऐनिलिन उड सोडा फाब्रीक को (जो बाद मे आई० जी० बनी) इस विषय मे रुचि लेने को कहा। २ जुलाई १९०९ को कार्ल बाश (Carl Bosch) (दे० १९३१ का विवरण) और अल्विन मिट्टाश (Alvin Mittasch) (जन्म १८६९, बी० ए० एस० एफ० के डायरेक्टर) कार्ल्सरूहे मे हाबेर और उसके सहायको द्वारा किये गये १०० ग्राम अमोनिया के सश्लेषण को देखने आये।

जब रसायन के लिए कैसर विल्हेल्म इस्टीट्यूट स्थापित हुआ तो हाबेर उसके पहले डायरेक्टर निर्वाचित हुए। १९११ से लेकर घातक वर्ष १९३३ तक आप बर्लिन-डाह्लेम मे रह कर इस्टीट्यूट के कार्यो का विस्तार और युद्ध-वर्षो मे रासायनिक युद्ध के लिए सगठन करते रहे। १९१५ में आपने सबसे पहले गैस (जो क्लोरीन थी) के उपयोग का निर्देशन किया। उसके बाद वाले वर्ष मे फ्रासीसी सेना ने इसका जवाब मृत्युकारक फासजीन से दिया।

१९१९ मे हाबेर को याद आयी कि एर्हीनियस (Arrhenius) ने यह गणना की थी कि समुद्र से ८० खरब टन स्वर्ण प्राप्त किया जा सकता है। कुछ थोडा स्वर्ण प्राप्त करने के लिए आपने एक यात्रा की आयोजना की, आपने आशा की थी कि रसायन की सहायता से इस प्रकार जर्मनी अपनी क्षति-पूर्त्ति कर सकेगा। किन्तु नतीजा बिलकुल निराशा-जनक हुआ। हृदयविदीर्ण हाबेर ने, रिचर्ड विल्सटैटर के इस असफलता को रोचक पुस्तक मे परिवर्त्तित करने के मैत्रीपूर्ण परामर्श को भी ठुकरा दिया।

बाद में आप अपने पुराने काम पर फिर वापस आ गये। उच्चताप और उत्प्रेरकों के प्रभाव द्वारा रासायनिक क्रियाश्रृखला (chain reactions) सबधी कार्य को आपने प्रयोगो और विचारो द्वारा अधिक गहन बनाया।

विस्तृत ज्ञान, तीव्र सूक्ष्मदृष्टि और महान् विचारो के अपूर्व सम्मिलन से आप इस्टीट्यूट मे विविध प्रकार के शोध कार्य कराने मे समर्थ हुए। आप युवा वैज्ञानिको मे विशेष रुचि लेते थे, जर्मन रसायन के युद्ध पश्चात् पुनरुद्धार मे इससे बडी सहायता मिली। तब भी १९३३ के जाग्रन जर्मनी मे आपके लिए स्थान न था क्योकि आपका जन्म यहूदी वश मे हुआ था। इससे आपका स्वास्थ्य बिगड गया और आपकी आत्मा का हनन हो गया। देश-निर्वासित के रूप मे स्विट्जरलैड मे आपका देहावमान हुआ।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"तत्त्वो द्वारा अमोनिया की तैयारी मे मेरे साथियो की जो विशेप रुचि है, उसका कारण यह है कि असाधारण विधि से मरल फल की प्राप्ति होती है। अनेक लोगो की इसमे रुचि होने का कारण यह है कि यह विधि आर्थिक आवश्यकताओ की पूर्त्ति के लिए इम समय कुछ उपयोगी, वस्तुत अधिकतम उपयोगी है। जब मैने ये प्रयोग आरम्भ किये थे तो इस प्रकार की व्यावहारिक उपयोगिता पर मेरा ध्यान नही गया था। मेरा निस्सदेह विचार था कि मेरी प्रयोगशाला के कार्य से प्रयोग करने के यत्रो का ज्ञान और उसके वैज्ञानिक सिद्धातो का आधार तो प्राप्त हो सकता है, किन्तु व्यापारिक रूप मे इसको सफल बनाने के लिए इस ज्ञान मे और वृद्धि होनी चाहिए थी।

"सतुलन सबधी शोध के दौरान मे मैने अमोनिया सश्लेपण पर अपने युवा मित्र एव सहायक राबर्ट लि रोसिगनाल (Robert Le Rossignol) के साथ १९०८ मे कार्य करना आरम्भ किया। ३ वर्ष पूर्व मैने यह कार्य अधूरा छोड दिया था। इम कार्य के आरम्भ के बिलकुल पूर्व ही मै वायु के द्रवण से परिचित हो चुका था। इसके साथ-साथ मै फार्मेट उत्पादन के उद्योग से भी परिचित था, जिसमे ताप और दाब से क्षार के साथ बहती हुई कार्बन-एक-आक्साइड (Carbon monoxide) की प्रतिक्रिया होती थी। फलत उच्च दाब और उच्च ताप मे अमोनिया के सश्लेषण को मै असभव नही समझता था। इस विपय के विशेपज्ञो ने इस सबध मे उलटी सम्मति दी थी। इम कारण इस विषय मे टेक्निकल रुचि को जाग्रत करने के लिए पहले प्रभावशाली प्रगति करना आवश्यक थी।

"आरम्भ मे यह स्पष्ट था कि उच्च दाब पर प्रतिक्रिया करने से लाभ हो सकता है। इससे सतुलन मे अच्छी स्थिति हो जाती थी और इसके साथ-साथ प्रतिक्रिया के वेग मे वृद्धि भी होती थी। जो दाबक (compressor) हमारे पास था उससे

1 Les Prix Nobel en 1914--1918 से अनूदित।

गैसो का घनत्व २०० वायुमडलो तक हो जाता था। इससे यह भी पता चलता था कि प्रयोग की बडी श्रेणियो मे कितने दाब पर काम करना चाहिए। जिन धातुओ से सतुलन के मापन के समय हम परिचित हो चुके थे—पहले मैंगनीज और बाद मे लोह से—उनकी उपस्थिति मे लगभग इतने ही दाबो पर एव ७००° से० पर नाइट्रोजन और हाइड्रोजन तेजी से सयोग करते थे। इसको और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए यह आवश्यक था कि प्रतिक्रिया ५०० और ६००° से० के बीच मे की जाय। हम लोगो ने आवर्त सारणी के ६ठे, ७वे एव ८वे समूह मे से धातु-उत्प्रेरको को खोजने का विचार किया। इन समूहो के ऊपर वाले तत्त्व क्रोमियम, मैंगनीज, लोह, निकल और कोबाल्ट बडे अच्छे उत्प्रेरक है। यूरेनियम और आस्मियम मे हमको इच्छित उत्प्रेरक प्राप्त हुआ। इनकी सहायता से २०० वातावरण दाब पर उन दोनो आवश्यकताओ की पूर्ति होती थी जिनको हम टेक्निकल दृष्टिकोण से सफल प्रयोग के लिए आवश्यक समझते थे, पहली आवश्यकता का सबध अमोनिया मे (गैस की) मात्रा का था और दूसरी का सपर्क-स्थान (contact space) के प्रति घन सेटीमीटर मे प्रति घटे बनी अमोनिया की मात्रा से था। १९०५ के पुनश्चक्रीय (recycling) यत्र मे ५ प्रतिशत मात्रा रखकर केवल सयोग विधि को ही नही, अपितु अमोनिया तैयारी की एक नवीन विधि को प्रदर्शित किया जा सका। जब कई ग्राम अमोनिया प्रति घटे की तथा तापित उच्च दाब वाले कई घन सेण्टीमीटर स्थान की उत्पत्ति होती थी तो इस स्थान का विस्तार इतना कम होता था कि हम लोगो के विचार से उद्योग वालो को इस विधि मे किसी प्रकार की कमी नही दिखाई देनी चाहिए।

"अतत एक ऐसे पुनश्चक्रीय यत्र के निर्माण की आवश्यकता पडी जो टेक्निकल कार्य के लिए नमूना बन सके।

"जिन विशेषताओ को हमने अपनी प्रयोगशाला मे निकाला, उनमे से ये विशेषताएँ अब भी बडी मात्रा वाले उत्पादनो मे काम मे लायी जाती है—२०० वातावरण का कामचलाऊ दाब, ५००° से०—६००° से० तक का कामचलाऊ ताप, उच्च दाब पर ही गैस को फिर से चलाना, और काम मे आ चुकी गैस द्वारा काम मे आने वाली गैस को ताप देना।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

अठारहवी शताब्दी के अत मे जब यह ज्ञात हुआ कि अमोनिया, नाइट्रोजन और हाइड्रोजन का यौगिक है, तब से उसके सश्लेषण के लिए प्रयास किये जा रहे थे। नये

प्रयासो से भी इसमे सफलता नही मिलती, किन्तु रासायनिक प्रतिक्रियाओ मे ऊर्जा सिद्धात के ज्ञान से केवल इसके सश्लेषण की सभावना ही नही प्रकट हुई अपितु इसकी परिस्थितियो को, जिनमे यह प्रतिक्रिया हो सकती थी, पहले से बताना भी सभव हुआ। जब परिस्थितियो वाली भविष्यवाणी ठीक सिद्ध हुई तो इस सिद्धात की व्यावहारिक उपयोगिता भी स्पष्ट हो गयी। विशेष पात्रो, नलियो, वाल्वो आदि की इसके लिए आवश्यकता थी, अत ऊँचे दाब की प्रतिक्रियाओ वाली कल-निर्माण-कला (Engineering) एक महत्त्वपूर्ण विषय बन गयी।

हाबेर द्वारा १०० ग्राम सश्लेषित अमोनिया के उत्पादन का प्रदर्शन होने के ४ वर्ष पश्चात् उसका औद्योगिक उत्पादन ६५०० टन (मीटर मान) प्रति वर्ष था। प्रत्येक वर्ष यह सख्या पहले की अपेक्षा दुगुनी होती चली गयी। १९१८ मे २००, ००० टन अमोनिया बनती थी।

इस सश्लेषण विधि के विकास के आरम्भ से ही इसका दो विभिन्न दिशाओ मे उपयोग हुआ—जीवन चलाने मे और उसको नष्ट करने मे। पौधो के लिए खाद बनाने में अमोनिया का मूल रूप से प्रयोग होता था, इससे अनाज की पैदावार बढी और खाद्य-उत्पादन मे भी वृद्धि हुई। नाइट्रिक अम्ल के उत्पादन का भी यह मूल पदार्थ थी, अत सश्लेषित अमोनिया से बडे विस्फोटक पदार्थों का बडी मात्रा मे उत्पादन सभव हुआ—इन पदार्थों का उपयोग खानो के खोदने और खोजने मे हुआ, उसके साथ युद्ध-सामग्री के रूप मे इससे विनाश भी हुआ।

फ्रास, इटली और यूनाइटेड स्टेट्स मे हाबेर की विधि मे महत्त्वपूर्ण परिवर्त्तन होते रहे। इन सब विधियो की सहायता से १९४८ मे ५५ लाख टन नाइट्रोजन अमोनिया मे परिवर्तित की गयी।

१९१९

कोई पुरस्कार नहीं दिया गया।

१६२०

वाल्थर नर्न्स्ट (Walther Nernstt)

(१८६४-१६४१)

"ऊष्मा-रसायन (Thermochemistry) संबंधी कार्य के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

पश्चिमी प्रशा के ब्रीसेन नगर मे वालथर नर्न्स्ट का जन्म हुआ था। १८८७ मे वुर्जबुर्ग से स्नातक होने के पूर्व आपने भौतिकी और गणित का कई विश्वविद्यालयो मे अध्ययन किया। स्नातक होने के लिए आपने ऊष्मित धातु पट्टिकाओ पर चुबकन द्वारा उत्पादित विद्युत्चालीय (electiomotive) वल पर थीसिस लिखी। १८८७ मे ग्राज मे विलहेल्म आस्ट्रवल्ड (पृ० ३६) से मिलने के पश्चात् आपने विद्युत् एव ऊष्मीय ऊर्जा के सबध का रासायनिक वधुता तक विस्तार किया। वाद मे आप आस्ट्वल्ड के साथ ही कार्य करने लगे। १८०१ मे जब वोल्टा महोदय ने आविष्कार किया था तब से विद्युत् रासायनिक बैटरी के विद्युत्-विभव (potential) अथवा वोल्टता की किस प्रकार व्याख्या की जाय—यह एक विवादास्पद विषय था। नर्न्स्ट ने इसकी विलकुल स्पष्ट व्याख्या की। आप ने धातु विद्युदग्र को विद्युत् चार्ज युक्त धातु के परमाणुओ का, जिनको फैरड्रे ने आयन कहा था, भाण्डार (reservoir) समझा। इन आयनो पर धातु का कुछ दाब रहता है। इसको "विलीनीकरण (dissolution) का वैद्युद्विश्लेषिक दाब" कहते है। धातु के चारो ओर के विलयन मे वही आयन उपस्थित रहते है और रसाकर्षण दाब स्थापित करते है। जब धातु घुलती है तो विलीनीकरण के दाब से आयन तब तक फैलते है जब तक यह दाब विलयन मे आयनो के सान्द्रण से उत्पन्न रसाकर्षण दाब के बराबर हो जाता है। वोल्टता का यही कारण है और घुलते हुए आयनो के चार्ज से विद्युत्-धारा का प्रवाह होता है।

१८९१ मे नर्न्स्ट ने ओ० डेमर की अकार्बनिक रसायन सबधी पुस्तक की भूमिका के लिए सैद्धातिक रसायन का सर्वेक्षण या पर्यालोकन (Survey) किया। २ वर्ष बाद आपने इसका पुस्तक रूप मे विस्तार किया। पुस्तक का विशेषता सूचक

शीर्षक था—Theoretısche Chemıe von Standpunkte der Avogadıoschen Regel und der Thermodynamık (अवोगाड्रो के नियम एव ऊष्मा-गतिकी के दृष्टिकोण से सैद्धातिक रसायन) । आपका विचार था, जैसा कि आपने पुस्तक के प्राक्कथन मे लिखा है, भौतिक-रसायनज्ञ वैज्ञानिक के लिए ज्ञात अपितु सफल कार्य-सम्पादन का अब समय आ गया है, अब केवल विचार ही नही प्राप्त है, किन्तु उनसे निश्चित निष्कर्ष भी प्राप्त किये जा सकते है। इस पुस्तक के १९२१ के दसवे सस्करण मे आपने लिखा कि आपका विचार गलत नही था, "सैद्धातिक भौतिकी से एक ओर तो काफी स्थायी सामग्री मिलती है, दूसरी ओर कुछ ऐसे अनुमान होते है जिनमे एक दिन बाद भी परिवर्त्तन किया जा सकता है। मै या तो स्थायी सामग्री की प्रतीक्षा करता हूँ अथवा अनुमानो को मानने से बिलकुल इनकार कर देता हूँ।" अपनी बडी पाठ्य पुस्तक के पहले सस्करण मे आपने एम० बर्थेलो (M Berthelot) द्वारा १८६७ मे प्रतिपादित अधिकतम कार्य के सिद्धात का वर्णन किया था, "बिना बाहरी ऊर्जा की सहायता के जितनी भी रासायनिक प्रतिक्रियाएँ होती है उन सबमे ऐसे पदार्थो के उत्पादन की प्रवृत्ति होती है जिनसे ऊष्मा की अधिकतम मात्रा प्राप्त हो सके।" ऊष्मा-गतिकी के तथाकथित इस तृतीय सिद्धात को इस समीकरण द्वारा समझाया जा सकता है—यदि 'अ' अधिकतम कार्य है और 'क' प्रतिक्रिया की ऊष्मा तो अ=क। ऊर्जा के दो पुराने सिद्धातो से स्पष्ट है कि 'अ' और क्रम (system) की सपूर्ण ऊर्जा 'य' के परिवर्त्तन मे कुछ भेद अवश्य होना चाहिए और इस प्रकार य=अ—क। नर्न्स्ट ने निष्कर्ष निकाला कि बर्थेलो का सिद्धात निम्नतम सभावित ताप अर्थात् 'परम शून्य' या-२७३° से० पर ठीक प्रकार से लगता है। आपने इस सिद्धात मे एक ऐसा 'बीज' देखा, जिसके आवरण को भविष्य मे पृथक् किया जा सकता था। १३ वर्ष पश्चात् आपकी यह भविष्यवाणी ठीक सिद्ध हुई, १९०६ मे और १९०७ के सिलीमान भाषणो मे ऊष्मा के नवीन प्रमेय का विकास हुआ।

"विलयनो के रसायन सबधी शोध-कार्य सपीड्यता (compressıbılıty)" एव परमाणु-आयतन के सबध पर एव अन्य विषयो के शोध-कार्य मे आप टेक्निकल आविष्कारो की अपेक्षा अधिक सफल रहे। नर्न्स्ट लैंप मे आपने मिट्टी के पात्र का उपयोग किया था। यदि टेटेलम एव टगस्टन लैंपो का विकास न हुआ होता तो इसकी उपयोगिता बहुत अधिक होती। आपके विद्युतीय पियानो को (जिसमे रेडियो प्रवर्धक को ध्वनिपट — Soundıng board — के स्थान मे लगाया गया था) गायको ने नही पसद किया।

१९०५ से आप बर्लिन विश्वविद्यालय मे आचार्य रहे; १९२४–१९३३ तक बर्लिन के प्रायोगिक भौतिकी के इस्टीट्यूट के डायरेक्टर रहे। इन दोनो पदो पर आपने उद्योग से काफी सपर्क रखा। आप अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा से औद्योगिक विकास को भी समझने मे समर्थ होते थे। आपका विचार था कि यदि रटजन ने अपने आविष्कारों को पेटेट करा लिया होता तो उन्होने विज्ञान और उद्योग दोनो की और अधिक सेवा की होती।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"अपने शोध-कार्य मे सबसे पहले मुझे रासायनिक सतुलन की दशा एव किसी प्रतिक्रिया मे ऊष्मा उत्पादन के सबधो का स्पष्ट ज्ञान हुआ, किन्तु ये तभी सत्य होते थे जब ऐसी प्रतिक्रियाओ मे तुलना की जाती थी, जिनमे अणुओ की सख्या मे परिवर्तन नही होता। उदाहरणतया इन दो निम्नलिखित प्रतिक्रियाओ के लिए यह परिवर्तन एक प्रकार का है—

$$Cl_2+H_2=2HCl, \quad 2NO=N_2+O_2$$
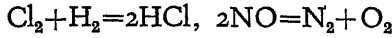
"इन दोनो प्रतिक्रियाओ मे अणुओ की सख्या मे परिवर्त्तन नही होता। सौभाग्यवश, उपर्युक्त दो प्रतिक्रियाओ मे ऊष्मा की लगभग समान मात्रा का उत्पादन होता है और इस प्रकार सतुलन की अवस्था भी लगभग एक प्रकार की होती है। जब ऐसी दो प्रतिक्रियाओ की तुलना की जाती है, जिनमे अणुओ की सख्या मे परिवर्त्तन हो जाता है, जैसे—

$$2H_2+O_2=2H_2O$$
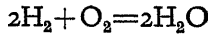
तो उपर्युक्त सबध इनमे ठीक नही ठहरते। ये सबध पुन स्थापित हो जाते है यदि जल-वाष्प के विच्छेदन की कार्बन-द्वि-आक्साइड के विच्छेदन से तुलना की जाय।

"मैने इन प्रश्नो के उत्तर के लिए लम्बी और कठिन गणनाएँ की और मेरा विचार है कि मैने "ऊष्मा मापन से रासायनिक सतुलनो की गणना (१९०६)—Calculation of Chemical Equilibria from Thermal Measurements" द्वारा उनको स्पष्ट भी किया। उस समय मैने जो सीधा नियम निकाला उसको इन शब्दो मे व्यक्त किया जा सकता है—सब दशाओ मे निम्न तापो पर बधुता और ऊष्मा-उत्पादन एक ही हो जाती है। यह ध्यान रहे कि बधुता और ऊष्मा-उत्पादन धीरे-धीरे कम होकर परम शून्य पर पहुँच कर एक मान के नही होते, प्रत्युत परम शून्य तक पहुँचने

१. Les Prix Nobel en 1920 से अनूदित।

के पहले ही वे बराबर हो जाते है, दूसरे शब्दो मे इन दोनो के वक्र परमशून्य बिन्दु के पास एक दूसरे से स्पर्श (tangential) करते है।

"इस नियम को व्यापक बनाने पर—अर्थात् रासायनिक प्रतिक्रियाओ मे ही नही, अपितु सब प्रतिक्रियाओ के लिए—हमे एक नवीन ऊष्मा प्रमेय (theorem) मिलता है, जिससे अनेक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते है—

"(१) एक प्रक्रम —process— से प्राप्त अधिकतम कार्य की गणना उस प्रक्रम मे ऊष्मा-उत्पादन से हो सकती है यदि ऊष्मा-उत्पादन का ज्ञान बहुत निम्न तापो तक है।

"(२) इसको इस प्रकार भी व्यक्त किया जा सकता है कि किसी एक ताप पर ऊष्मा-उत्पादन और बहुत निम्न तापो के परास (range) मे प्रक्रम मे काम आने वाले पदार्थो की विशिष्ट ऊष्मा का ज्ञान होना चाहिए।

"(३) विशिष्ट ऊष्माओ को निम्न तापो पर बिलकुल सकलनीय (rigorously additive) होना चाहिए, दूसरे शब्दो मे, निम्न तापो पर ऊष्मा-उत्पादन का ताप से कोई सबध नही होना चाहिए।

"प्रकृति का विधान ऐसा है कि उपर्युक्त नियम सब प्राकृतिक प्रक्रमो मे लगते है, किन्तु रासायनिक प्रतिक्रियाओ के लिए ये विशेष रूप से उपयोगी है। जैसा कि भली-भाँति मालूम है बर्थेलो ने यही पर कहा था, कि ऊष्मा-उत्पादन रासायनिक बधुता के बराबर होता है, तथापि यह कल्पना (assumption) सब जगह यथार्थ नही है यद्यपि कई दशाओ मे यह ठीक है। अब हमे उन दशाओ का स्पष्ट ज्ञान हो सकता है जिनमे बर्थेलो की कल्पना ठीक से लागू होती है। बहुत अधिक ऊष्मा मानो के लिए और केवल सघनित (condensed) अवस्था मे विशिष्ट ऊष्मा का प्रभाव अपेक्षाकृत कम हो जाता है और बर्थेलो का नियम काफी सन्निकटता के साथ लगता है, जब ताप बहुत ऊचा नही होता। यह उन प्रक्रमो मे प्राय बिलकुल नही लगता जब ऊष्मा-उत्पादन थोडा होता है—उदाहरणार्थ, पिघलने के प्रक्रम मे।

"अन्त में मै इस ओर सकेत कर देना चाहता हूँ कि एगर्ट (Eggert), साहा (Saha) और अन्य वैज्ञानिको ने नक्षत्र-भौतिकी के प्रश्नो के उत्तर निकालने मे मेरे प्रमेय को सफलतापूर्वक लगाया है।"

सिद्धांत और व्यवहार पर प्रभाव

नर्न्स्ट के प्रमेय को पढ कर ऐसा लगता है कि यह केवल उन ताप-परासो मे लगता है, जिनका प्रयोग वैज्ञानिक और औद्योगिक कार्यों मे साधारणतया नही होता।

साधारण परिस्थितियो के लिए यह अनावश्यक जान पडता है कि—२७३° से० पर प्रत्येक पदार्थ की एन्ट्रापी (entropy) शून्य होती है या आयतन एव तलतनाव (surface tension) का ताप से कोई सबध नही रहता। तथापि किसी प्रक्रम से प्राप्य अधिकतम कार्य और उस प्रक्रम मे उत्पादित ऊष्मा का सबध व्यावहारिक दृष्टिकोण से बडा महत्त्वपूर्ण है। इस बात का ज्ञान कि जैसे-जैसे ताप परम शून्य तक गिरता जाता है, वैसे-वैसे ऊष्मा-उत्पादन और कार्य के मानो मे समानता आती है—यह व्यावहारिक परिस्थितियो की सीमाओ तक लग सकता है। इसके लिए सावधानी से मान-निर्धारण करना पडता है, इसके लिए परम शून्य का उसके सापेक्ष प्रतिभाग (counterpart) मे परिवर्तन भले ही एक चाल (trick) क्यो न लगे। इस मान-निर्धारण से अमोनिया सश्लेषण (दे० पृ० ६७) के कार्य मे निश्चित सफलता मिली। पहले जो परिणाम निकले वे नये सिद्धात के दृष्टिकोण के विपरीत थे, इससे पुन परीक्षण करना पडा। इसके फलस्वरूप ऐसे अक प्राप्त हुए जो टेक्निकल दृष्टिकोण से अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते थे।

विद्युत्-रासायनिक अन्वेषणो मे भी, जो टेक्निकल प्रक्रमो के लिए मौलिक रूप से महत्त्वपूर्ण थे, नये सिद्धात और मापनो मे भेद निकला। हाइड्रोकार्बनो—उदा० गैसोलीन—के दहन से उत्पादित अधिकतम कार्य की नये सिद्धात से गणना की जा सकती थी। परमाणु की नाभि के गुणधर्मो के लिए नया सिद्धात बडे ऊँचे तापो की भविष्यवाणी करता है, इन तापो पर गुरुत्वाकर्षण और रेडियमधर्मिता दोनो ही पर ताप का प्रभाव होना चाहिए, जो साधारणतया नही होता।

ऊर्जा-विज्ञान के द्वितीय नियम मे जो अनिश्चितता है वह नर्न्स्ट के प्रमेय से दूर होती है और इस प्रकार साधारण ऊष्मा-भौतिकी का क्षेत्र विस्तृत होता है।

१९२१

फ्रेडरिक साडी (Frederick Soddy)

(१८७७--)

"रेडियमधर्मी पदार्थों के रसायन की ज्ञानवृद्धि के लिए एवं समस्थानिकों की उत्पत्ति एवं उनके स्वरूप की गवेषणा के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

ईस्टबूर्न, ससेक्स मे फ्रेडरिक साडी का जन्म हुआ था। आप १८९९ मे आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय छोडकर मान्ट्रियल चले गये, जहॉ आपने मेक्गिल विश्वविद्यालय मे अरनेस्ट रदरफोर्ड (दे० पृ० ३१) के साथ कार्य आरम्भ किया। तीन वर्षो के मिलकर सतत सफल प्रयास से रेडियमधर्मी विघटन का एक नया सिद्धात निकला। इसके अनुसार परमाणु एक धनात्मक नाभिक का बना हुआ था और इस (नाभिक) के चारो ओर ऋणात्मक इलेक्ट्रान थे। इसके अस्थायित्व के कारण ही रेडियमधर्मिता होती है।

जब आप १९०२ मे इग्लैण्ड वापस आये, तो आप मे और रदरफोर्ड मे कुछ होड-सी चल पडी, विशेषतया रेडियमधर्मी रसायन पर एक पुस्तक के प्रकाशन के सबध मे। फिर मित्रवत् समझौता हो गया और साडी ने अपनी पुस्तक तब तक नही छपायी जब तक रदरफोर्ड महोदय की पुस्तक छप न गयी।

उस समय नये रेडियमधर्मी तत्त्वो को रसायन में उपयुक्त स्थान देने के लिए काफी कार्य हो रहा था। उस समय तक ज्ञात तत्त्वो को उनके परमाणु-भार के अनुसार क्रम मे रख दिया गया था, रासायनिक समताओ के आधार पर उनके समूह भी बना दिये गये थे। इस प्रकार के क्रम आवर्त वर्गीकरण मे रेडियमधर्मी तत्त्वातरण से प्राप्त कुछ नये तत्त्वो के लिए कोई स्थान न था। इस प्रकार के नये तत्त्वो के गुणधर्म साधारण तत्त्वो के बिलकुल समान थे, अत इनको पृथक् करने की भी कोई विधि ज्ञात न थी। साडी ने निष्कर्ष निकाला कि ये तत्त्व आवर्त वर्गीकरण में पुराने तत्त्वो के स्थान

पर ही रखे जा सकते है, इस गुणधर्म के कारण इनको समस्थानिक कहा गया, जिसका अर्थ है कि उनका आवर्त-वर्गीकरण मे एक ही स्थान है।

विज्ञान के अभ्युदय के लिए साधारण परिस्थितियो मे सुधार करने मे साडी काफी रुचि रखते थे। एबर्डीन में (१९०९–१९१९) जब आप आचार्य थे तो आपने अपने भाषणो को एक पुस्तक का रूप दिया, जिसका शीर्षक 'विज्ञान और जीवन' ("Science & Life"—London 1920) है।

साड़ी १९१९ मे आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय मे आचार्य बने। इस प्रसिद्ध सस्था से आपने १९३६ मे अवकाश ग्रहण किया।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का विवरण

"आउएर फान वेल्सबाख (Auer Von Welsbach) ने १९१० मे जोशिम्स्थाल पिचब्लेड के ३०,००० किलोग्राम से रेडियम का व्यापारिक उत्पादन करते समय उसके हाइड्रेट प्रभाजन (hydrate fraction) से आयोनियम और ऐक्टीनियम को बडी सुदरता से पृथक् किया था। इस प्रकार आपने आयोनियम को एक बडे साद्र रूप मे बनाया। इसके वर्णक्रम और परमाणुभार पर बाद के शोधकर्ताओ ने काफी गवेषणा की। कई नवीन विधियो को उपयोग मे लाने पर भी आप आयोनियम को थोरियम से पृथक् करने मे असफल रहे।

"हर्शफिकेल (Herschfinkel) ने भी रेडियम डी (रेडियमधर्मी सीस) को सीसे से पृथक् करने के लिए कई विधियो का प्रयोग किया, पर आप पूर्ण असफल रहे। तीन वर्ष बाद पैनेथ (Paneth) और फान हेवेसी (Von Hevesy) ने भी लगभग २० विधियो से इनको पृथक् करने का प्रयास किया, पर आप भी असफल रहे। अपनी इस असफलता से लाभ उठाकर उन्होने बडी खूबसूरती से इन रेडियमधर्मी तत्त्वो का सूचक (indicator) के रूप मे प्रयोग किया। उदाहरणतया, इसी प्रयोग मे उन्होने सीस के काफी अविलेय यौगिको की विलेयता निकाली। रेडियम डी को इन यौगिको मे डाल दिया गया और तब रेडियमधर्मी विधियो से तोली न जा सकने वाली मात्रा मे इन यौगिको की रेडियमधर्मिता नापी गयी। इससे इनकी विलेयता ज्ञात की गयी। इस विधि का अनेक रासायनिक विधियो मे उपयोग किया गया है।

"अधिक व्यापक एव दार्शनिक दृष्टिकोण से विचार करने पर और आवर्त वर्गीकरण मे रेडियमधर्मी तत्त्वो के क्रम के लिए बिना किसी प्रकार का विस्तार किये हुए,

1 Lex Prix Nobel en 1921 से अनूदित।

मै उन्ही निष्कर्षो पर पहुँचा जिन पर स्ट्रोमहोल्म (Stromholm) और स्वेदबर्ग (Svedberg) पहले पहुँचे थे। (ये निष्कर्ष इस प्रकार थे—मेडलीफ की योजना केवल एक सन्निकट (appıroxımate) नियम है, जहॉ तक तत्त्वो के परमाणुभार का सबध है। प्राकृतिक नियम की भॉति इसमे यथार्थता नही है। फलत. हमे इस पर आश्चर्य नही होना चाहिए, यदि ये तत्त्व एक ही प्रकार के गुणधर्म वाले बिलकुल मिलते-जुलते कई समाग तत्त्वो के मिश्रण हो।)

"यह निश्चित था कि रेडियमधर्मी इन तत्त्वो के परमाणुभार पूर्णांक हो और उनके परमाणुभार का अतर भी पूर्णांक हो। इस प्रकार, मुख्य (paıcnt) तत्त्व और उसमे से अल्फाकण निकलने पर बने हुए तत्त्व—आयोनियम (२३०) एव रेडियमधर्मी थोरियम (२२८) मे क्रमश ठीक उसी प्रकार के रासायनिक थोरियम (२३२) से २ एव ४ इकाइयो का अतर होना चाहिए। एक बार एक सज्जन ने पूछा कि तत्त्वो की वास्तविक समागता का रासायनिक समागता से पृथक् एव स्पष्ट कौन-सा प्रमाण है। इससे यह स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि पूर्णांक से बदलते हुए क्रमिक परमाणुभार वाले कई तत्त्वो के निश्चित अनुपात मे मिलने से साधारण तत्त्व बनते है, अब तक के रसायनज्ञ अपनी विधियो से इन तत्त्वो को पृथक् न करने के कारण इनसे अनभिज्ञ थे।

"जब परमाणु के नाभिक मे से दो धन चार्ज अल्फाकण के रूप मे निकल जाते है और इसके पश्चात् जब दो ऋण चार्ज β–कण के रूप मे निकल जाते है, तो तत्त्व आवर्त वर्गीकरण मे अपने मौलिक स्थान पर पुन आ जाता है। इससे यह स्पष्ट है कि आवर्त वर्गीकरण में तत्त्व की स्थिति से उसके पूर्ण नाभिक चार्ज का ज्ञान होता है—यह चार्ज नाभिक मे धन एव ऋण चार्ज के अतर के बराबर होता है। इस प्रकार रासायनिक रूप से एक प्रकार के तत्त्व—अथवा समस्थानिक, जैसा कि मैने १९१३ मे सबसे पहली बार 'नेचर' (Nature) मे लिखे गये पत्र मे उनको कहा था, क्योकि आवर्त वर्गीकरण में उनका एक स्थान होता है,—ऐसे तत्त्व होते है, जिनका नाभिकीय धनात्मक चार्ज एक होता है, पर नाभिक मे धन (+) एव ऋण (—) चार्ज की सख्या भिन्न होती है। परमाणु का सान्द्र धनात्मक चार्ज परमाणु की सहति के अधिकतर भाग को बनाता है, क्योकि धनात्मक विद्युत् परमाणुभार से कम भार वाले परमाणु पर नही देखी गयी है। इस प्रकार, समस्थानिक का परमाणुभार उसके नाभिक के धनात्मक चार्ज की सपूर्ण (total) सख्या का फलन (functıon) होता है, उसके रासायनिक लक्षण वास्तविक (net) सख्या के फलन होते है।"

सिद्धात एव व्यवहार पर प्रभाव

अठारहवी शताब्दी के अत मे तत्त्वो की जिस रासायनिक परिभापा का विकास हुआ था, उसके अनुसार उनको अविनाशी एव पदार्थ की अटूट इकाई माना जाता था। पहले लक्षण को तो उन्नीसवी शताब्दी के अत मे ही छोड देना पडा था, जब कि रेडियमधर्मी विघटन के विचार का विकास हुआ था, दूसरे लक्षण मे भी समस्थानिको के ज्ञान के अनुसार बीसवी शताब्दी के आरम्भ मे परिवर्तन करना पडा। शीघ्र ही यह दिखाया गया कि समस्थानिको का अस्तित्व केवल रेडियमधर्मी विधि से प्राप्त तत्त्वो तक ही सीमित नही है। ऐस्टन (दे० पृ० ८२–८५) ने इसको भली भाँति प्रदर्शित कर दिया।

येल विश्वविद्यालय के बी० बी० बोल्टवुड (१८७०–१९२७) महोदय ने सबसे पहले यह सिद्ध किया कि आयोनियम और थोरियम को रासायनिक विधि से पृथक् नही किया जा सकता। आपने इस विचार का भी विकास किया कि इन नवीन गवेषणाओ से चट्टानो की भूगर्भीय आयु (geological age) बतायी जा सकती है। साडी ने अपनी "विज्ञान और जीवन" पुस्तक मे इसको बडे स्पष्ट ढग से बताया है—"आज हमको यह ज्ञात है कि रेडियमधर्मी खनिज वस्तुत भूगर्भीय घडियाँ (geological clocks) है। वे जिन चट्टानो मे पाये जाते है, उनकी आयु का बडी यथार्थता से रेकार्ड रखते है। अन्य किसी भी विधि से यह सम्भव नही हो पाता। उदाहरणतया, यूरेनियम खनिज मे यदि उसकी मात्रा के अनुसार १ प्रतिशत सीस पाया जाता है, तो वह ८०,०००,००० वर्षों के युग का मान कराता है। इसके विपरीत, यूरेनियम खनिज मे जब १ घन सेटीमीटर हीलियम गैस प्रतिग्राम यूरेनियम मे पायी जाती है, तो उससे ९,०००,००० वर्षों के युग का मान होता है। इस दशा मे हीलियम आरम्भ मे उपस्थित नही होती, उसकी मात्रा मे गैस निकल जाने के कारण कमी ही हो सकती है। अत इस प्रकार ज्ञात भूगर्भीय आयु कम-से-कम हो सकती है। सीस से ज्ञात भूगर्भीय आयु अधिकाधिक हो सकती है। इस विधि से कार्बोनीफेरस (Carboniferous) चट्टानो की आयु ३५०,०००,००० वर्ष की मालूम होती है और सबसे पुरानी आर्चियन (Archean) चट्टाने १,५००,०००,००० वर्षों से अधिक आयु की जान पडती है।"

६

१९२२

फ्रान्सिस विलियम ऐस्टन (Francis William Aston)

(१८७७-१९४५)

"संहति वर्णक्रम लेखक (Mass spectrograph) **की सहायता से अनेक रेडियम-विधर्मी** (non-radioactive) **तत्त्वो के समस्थानिको की खोज के लिए एवं पूर्णांक नियम** (whole number rule) **की गवेषणा के लिए।"**

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

फ्रान्सिस विलियम ऐस्टन का जन्म हार्बोर्न, इग्लैण्ड मे हुआ था। जब आपने १८९३ मे हाईस्कूल की परीक्षा पास की तो आपको गणित मे उच्चतम सम्मान मिला और विज्ञान मे आप अपनी कक्षा मे सर्वप्रथम हुए। इसके पश्चात् आप मेसन कालेज मे पढने लगे, यह उसी वर्ष बर्मिघम विश्वविद्यालय बन गया। आपने पी० एफ० फ्रैकलैड (P F Frankland) के साथ, जो बर्मिघम मे प्रोफेसर थे, सकुल कार्बनिक पदार्थो के प्रकाश-गुणधर्मो (Optical properties) पर कार्य किया और १९०१ मे अपने पहले वैज्ञानिक लेख मे उसको प्रकाशित किया। इसके पश्चात् आपने ऐलकोहल बनाने की कपनी मे नौकरी की। इस समय आपने बडी चतुरता से स्वय बनाये यत्र के साथ प्रयोग करना जारी रखा। अपने आप बनाये गये स्वचालित टापलर (Toepler) मेल के पप से निकाली गयी हवा वाली नली मे विद्युत्-विसर्जन (electrical discharge) इतना रुचिकर सिद्ध हुआ कि आप अपने अन्वेषणो पर और कार्य करने के लिए विश्वविद्यालय वापस लौट आये। १९१० मे विशेष विसर्जन नली से, जिसको टामसन महोदय ने विकसित किया था, कार्य करने के लिए आप ट्रिनिटी कालेज के जे० जे० टामसन (J J. Thomson) के पास चले गये। इस नली मे मुख्यतया एक हवा निकाला हुआ शीशे का बल्ब होता था। इसके एक ओर धनाग्र (विद्युत् का धनात्मक ध्रुव) होता था और दूसरी ओर सकीर्ण नली मे ऋणाग्र होता था। धनात्मक चार्ज वाले कण इसमे से एक चुबकीय क्षेत्र मे से होकर बहुत निम्न

दाब वाली नली मे जाते थे। यहाँ उनका पथ (path) एक फोटोग्राफिक फिल्म पर अकित हो जाता था। ऐस्टन ने इस व्यवस्था मे परिवर्तन किया। आपने ऐसी योजना की जिससे फोटोग्राफिक फिल्म पर पहुँचने वाले कण अपनी सापेक्ष सहति के अनुसार पूर्ण रूप से पृथक् हो जाते थे, जिस प्रकार प्रकाश-वर्णक्रम मे विभिन्न तरग-दैर्घ्य वाली प्रकाशकिरणे पृथक् हो जाती है। अत इस यत्र का नाम 'सहति वर्णक्रम लेखक' (Mass spectrograph) रखा गया।

युद्ध मे वायुयान इजीनियर की भाँति कार्य से छुट्टी पाकर ऐस्टन ने जो पहला यत्र बनाया उससे फौरन सफलता मिली। १९१९ मे बने इस सहति वर्णक्रम लेखक से सापेक्ष सहति को १ १००० की यथार्थता तक जाना जा सकता था, १९२७ मे बने तीसरे यत्र से यथार्थता १ १००,००० तक हो गयी। परमाणु-सहति के इस यथार्थ ज्ञान के फलस्वरूप परमाणु-नाभिक के अध्ययन करने वाले रसायनज्ञ तत्त्वो को उसी प्रकार तैयार करने लगे, जैसे अन्य रसायनज्ञ तात्त्विक पदार्थो से यौगिक तैयार करते है, ऐसी भविष्यवाणी ऐस्टन ने १९३६ मे की थी।

ऐस्टन का मनोरजन यात्रा और खेल मे होता था। सगीत मे आपकी रुचि इतनी अधिक थी कि कैम्ब्रिज रिव्यू (Cambridge Review) मे आप सगीत-आलोचक का काम करते थे। मृत्यु पश्चात् रायल सोसायटी द्वारा प्रकाशित निबध मे (रायल सोसायटी, लडन की Proceedings) आपके लिए लिखा गया—"ऐस्टन का जीवन निर्बाध सफलताओ की एक शृखला था।"

पुरस्कार-प्राप्त कार्य[1] का वर्णन

"जब नीआन को यत्र मे लाया गया, तो १०, ११, २० और २२ पर चार नयी रेखाएँ दिखाई दी। पहली दो द्वितीय श्रेणी की रेखाएँ थी और अन्य दो की तुलना मे काफी अस्पष्ट थी। चारो रेखाएँ इतनी अच्छी तरह से बनी थी कि उनकी तुलना स्टैन्डर्ड (standard) रेखाओ से की जा सकती थी। अनेक मापनो से यह ज्ञात हुआ कि १ १००० की यथार्थता मे नीआन के समस्थानिको का भार क्रमश २० और २२ था। यदि बाद वाला समस्थानिक केवल १० प्रतिशत हो, तो नीआन का परमाणुभार २० २० हो जाता है, यह स्वीकृत मान है। इस प्रकार नीआन की समस्थानिकीय (isotopic) रचना नि सदेह रूप से सिद्ध हो गयी।

"स्वभावत क्लोरीन दूसरा तत्त्व था, जिसका विश्लेषण किया गया। इसके

१. Les Prix Nobel en 1922 से अनूदित।

भिन्नात्मक परमाणु-भार की व्याख्या पहली फोटोग्राफिक फिल्म से ही की जा सकी। इसके सहति वर्णक्रम मे लाक्षणिक रूप से ४ प्रथम श्रेणी की ३५, ३६, ३७ और ३८ रेखाएँ होती है। ३५ ४६ रेखा का किसी प्रकार का भी चिह्न नही मिला। इसकी सरलतम व्याख्या यह हो सकती है कि ३५ और ३७ वाली रेखाएँ क्लोरीन के कारण थी ओर ३६ एव ३८ वाली रेखाएँ उनकी सगत (corresponding) हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के फलस्वरूप थी।

"इन मापनो का सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम यह है कि हाइड्रोजन के अतिरिक्त मापे गये सभी तत्त्वो और फलत लगभग सारे तत्त्वो के परमाणु-भार प्रायोगिक यथार्थता की सीमा मे, अर्थात् १ १००० की यथार्थता मे पूर्णांक होते है।

"इससे सहति के हमारे विचारो मे एक दम बिलकुल सरलता आ जाती है। प्राउट (Prout) ने १८१५ मे एक मौलिक अनुमान बनाया था। इसके अनुसार सारे तत्त्वो के परमाणु एक आनुमानिक तत्त्व प्रोटाइल (Protyle) से मिलकर बने होते है। आपने इस आनुमानिक तत्त्व को हाइड्रोजन सिद्ध करने का प्रयत्न किया था। यह अनुमान अब फिर से पुष्ट हो गया है। इसमे अतर केवल यह है कि मौलिक परमाणु दो प्रकार के है—प्रोटान और इलेक्ट्रान, जो धन और ऋण विद्युत् के परमाणु है।

"हमको आइस्टीन के सापेक्षवाद सिद्धात के अनुसार ज्ञात है कि सहति और ऊर्जा का एक दूसरे मे परिवर्तन किया जा सकता है और स ग स पद्धति मे सहति (म) को विश्राम के समय ऊर्जा की मात्रा मस^{2} मे लिखा जा सकता है, जहाँ स प्रकाश के वेग को व्यक्त करता है। सहति की थोडी-सी मात्रा भी अत्यधिक ऊर्जा के बराबर होती है।

"हाइड्रोजन के १ ग्राम परमाणु का उदाहरण लीजिए। इतनी हाइड्रोजन ९ धन-सेटीमीटर जल मे होती है। यदि यह पूर्ण रूप से हीलियम मे परिवर्तित हो जाय, तो ० ००७७ $\times$ ९ $\times$ १०^{२०} = ६.९३ $\times$ १०^{१८} अर्ग ऊर्जा निकलेगी। ऊष्मा के रूप मे यह १ ६६ $\times$ १०^{११} कैलरी के बराबर होगी और कार्य के रूप मे २००,००० किलोवाट घटे के बराबर होगी। इस रूप मे ऊर्जा का यह स्रोत सूर्य की ऊष्मा का कारण बताने के लिए भी पर्याप्त हो सकता है।

"यदि भावी शोध-कर्ताओ ने इसी ऊर्जा को इस प्रकार नियत्रित करने की विधि ज्ञात कर ली जिससे कि उसका जीवन मे उपयोग हो सके तो मनुष्य को ऊर्जा का ऐसा स्रोत मिल जायगा जो वैज्ञानिक कहानीकारो की सीमा के भी परे है। किन्तु इसकी सभावना मे हमको सदेह होना चाहिए, क्योकि एक बार ऊर्जा निकलने पर यह पूर्णरूप

से अनियन्त्रित होगी और इसकी तीव्र घातकता से पडोस के सभी पदार्थ नष्ट हो जायेगे। ऐसे समय ससार की सारी हाइड्रोजन कही हीलियम मे परिवर्तित न हो जाय। तब हमारे इस प्रयोग का पता सारे ब्रह्माड को लग जायगा क्योकि पृथ्वी तारा बन जायेगी।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

फोटोग्राफिक फिल्म की छोटी-सी पट्टी पर कुछ धब्बे दिखाई देते है और इनसे निष्कर्ष यह निकलता है कि हमारी पृथ्वी कही अग्नि लौ को उगलता हुआ तारा न बन जाय। इस फोटोग्राफिक पट्टी का ठीक आयोजन और उससे प्राप्त निष्कर्ष केवल कुछ दशक वर्षों के ही, रसायन, भौतिकी एव गणित के अद्भुत गवेषणाओ के फलस्वरूप हुई थी। परमाणु-भार का मापन ऐस्टन के केवल १०० वर्ष पूर्व ही आरम्भ हुआ था। ऐस्टन की विधि से विभिन्न सहति वाले परमाणुओ को इतनी यथार्थता से पहचाना जा सका कि उनसे इतने महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकले। कदाचित् ये निष्कर्ष १९२२ के रसायनज्ञो को दूर भविष्य के मालूम पडे हो, क्योकि उनका विश्वास था कि ये व्यावहारिक एव औद्योगिक रसायन को, जिनमे वे रुचि रखते थे, प्रभावित नही करते, तथापि इससे परमाणु-ऊर्जा के विकास की नीव पडी। सहति-वर्णक्रम-लेखक से क्रमश जटिल पदार्थों के विश्लेषण किये जाने लगे।

१९१८ मे ए० जे० डेम्प्स्टर (A J Demspster) महोदय ने शिकागो मे एक 'सहति-वर्णक्रम-लेखक' का विकास किया था। इसमे एक तापदीप्त प्लैटिनम प्लेट से गवेषणा किये जाने वाले लवण वाष्प मे परिवर्तित हो जाते थे और तब उनको स्थिर वैद्युत चुबकीय क्षेत्रो मे लाया जाता था। १९३५ के डेम्प्स्टर के यत्र मे विद्युत् चिनगारी से ही तत्त्वो के आयन बन जाते थे। इस विधि से १७ तत्त्वो के ३३ नये समस्थानिको का ज्ञान सम्भव हुआ। आज सहति-वर्णक्रम लेखको को यत्र-व्यापारियो से खरीदा जा सकता है और इनका अनेक प्रयोगशालाओ मे अति सूक्ष्म एव अति कुशल हथियार के रूप मे प्रयोग होता है। उदाहरणतया, इससे प्राकृतिक गैस और खनिज तैल प्रभाजनो मे पाये जाने वाले पदार्थों के जटिल मिश्रण का विश्लेषण किया जा सकता है।

१९२३

फ्रिट्ज़ प्रेग्ल (Fritz Pregl)

(१८६९–१९३०)

"कार्बनिक पदार्थों के माइक्रोविश्लेषण (microanalysis) की विधि के आविष्कार के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

फ्रिट्ज प्रेग्ल का जन्म, लाइबाख, आस्ट्रिया मे हुआ था। पहले आपकी रुचि ओषधि-विज्ञान की ओर थी और आप १८९३ मे ग्राज विश्व-विद्यालय से औषध के डाक्टर (Dr Med) हो गये। जब आप कायिकी (फिजिओलोजी) एव औतिकी (Histology) मे सहायक के पद पर कार्य कर रहे थे, तो आपने रसायन का भी अध्ययन किया। १९०४ मे आपने जर्मनी की यात्रा की। थोडा समय वहाँ आपने आस्ट्वल्ड के साथ लाइपज़िग मे बिताया, किन्तु अधिकतर समय बर्लिन मे बीता, क्योकि आप एमिल फिशर से प्रभावित हो चुके थे।

दूसरे वर्ष जब आप ग्राज लौटे तो आपने कायिकी पर शोधकार्य आरम्भ किया, विशेषतया पित्त अम्लो (bile acids) पर। शुद्ध पदार्थ इतनी कम मात्रा मे बनते थे कि आपको यह सोचना पडा कि प्रयोग बहुत अधिक मात्रा मे पदार्थो को लेकर आरम्भ किया जाय अथवा बने हुए इन बहुमूल्य पदार्थो की सूक्ष्म मात्राओ का ही विश्लेषण किया जाय। आपने सूक्ष्म मात्रा मे विश्लेषण के लिए निश्चय किया।

१९००–१३ के बीच मे जब आप इन्सब्रुक मे प्रोफेसर थे तब आपने कार्बनिक पदार्थो की सूक्ष्म मात्राओ का होशियारी से दहन करके कार्बन, हाइड्रोजन और नाइट्रोजन के निर्धारण (determination) की विधि को यत्न द्वारा सम्पादित किया। १९१३ से लेकर मृत्यु के समय तक आप ग्राज विश्वविद्यालय मे ही रहे, क्योकि आप इसे वियना के बड़े विश्वविद्यालय की अपेक्षा अधिक पसद करते थे। आप अपनी विधि की बारीकियो का क्रमश. सस्कार करते रहे और बाद मे आप दहन को स्वत.चालित बनाने

मे सफल हुए। आपने इस माइक्रोविश्लेषण विधि का अपने एन्जाइम, जलवत् भाग (Sera) एव पित्त अम्ल सम्बन्धी कार्य मे खूब उपयोग किया। आपने अपनी इस विधि का महत्त्व फारेन्जिक (Forensic) विश्लेषण मे भी दिखाया जिसमे जहरीले ऐलकेलाइडो की न्यूनातिन्यून मात्राओ का सापेक्ष सरलता से मापन किया जा सकता था।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का विवरण[1]

"कार्बनिक पदार्थ के अणु मे तत्त्वो की समानुपातिक मात्रा को जानने के लिए उसका ऐसी परिस्थितियो मे दहन किया जाता है, जिससे उसका सारा कार्बन कार्बन डाइ-आक्साइड मे, और सारा हाइड्रोजन जल मे परिवर्तित हो जाय। कार्बन डाइ आक्साइड को पोटासियम हाइड्राक्साइड अथवा चूने एव सोडे के मिश्रण मे और जल का कैलसियम क्लोराइड मे पूर्ण अवशोषण कर लिया जाता है। अवशोषक पदार्थो के भार मे जो वृद्धि होती है उसके द्वारा दहन से बने पदार्थों की मात्रा ज्ञात हो जाती है और इससे विश्लेषित पदार्थ मे कार्बन और हाइड्रोजन का अनुपात ज्ञात किया जा सकता है। दहन एक ऊँचे ताप पर पिघलने वाले शीशे की नली मे किया जाता है। उसकी लम्बाई इतनी होती है जिससे उसमे विश्लेषण किये जाने वाले पदार्थ के साथ ताम्र आक्साइड एव दहन को पूर्ण करने वाले अन्य पदार्थ रखे जा सके। जहाँ पर अवशोषण होता है, वहाँ जल एव कार्बन डाइ आक्साइड के अतिरिक्त और कोई पदार्थ नही जाने दिया जाता। जब पदार्थ मे नाइट्रोजन, गधक एव फास्फोरस भी होते है तो इनका मापन पृथक् रूप से किया जाता है। पदार्थ की तात्त्विक रचना को जान लेने के बाद तत्त्वो के समूहो का निर्धारण होता है—जैसे, कार्बाक्सिल समूह, जो पदार्थ के अम्लीय लक्षणों के लिए उत्तरदायी होता है, अथवा मेथाक्सिल समूह, जो मेथेनाल का अवशेष होता है और अपने आक्सिजन परमाणु की सहायता से अणु मे जुडा होता है, अथवा मेथिल-इमाइड, जिसमे मेथेनाल का आक्सिजन समूह अमोनिया के अवशेष से, जिसका सूत्र NH होता है, हटा दिया जाता है।

"जब विश्लेषण किये जाने वाले पदार्थ मे नाइट्रोजन, हेलोजन अथवा गधक होती है तो उसके दहन से कुछ गैसीय पदार्थ बनते है, जिनको भूल से कार्बन डाइ आक्साइड के रूप मे तोल लिया जाता है और उनकी गणना भी उसी रूप मे हो जाती है। ऐसा इसलिए होता है क्योकि ये पदार्थ कार्बन डाइआक्साइड के अवशोषक सोडे-चूने के मिश्रण

1 Lex Prix Nobel en 1923 से अनूदित।

से अवशोपित हो जाते है । इन परिस्थितियो मे इन पदार्थों को अवशोषक यत्र के पास हरगिज नही पहुँचने देना चाहिए ।

मैक्रो विश्लेपण के समय दहन नली मे विभिन्न पदार्थों के सघटन (composition) के अनुसार कई प्रकार के पदार्थ रखे जा सकते है । किन्तु मै एक ऐसे पदार्थ को निकालना चाहता था, जो कार्बन डाइ आक्साइड एव जल के अतिरिक्त सब गैसीय पदार्थों को सोख ले । मै इसको सब प्रकार के दहन मे दहन-नली मे भरा जा सकने वाला पदार्थ कहता हूँ । यह ताम्र आक्साइड और सीस-क्रोमेट का मिश्रण होता है, जिसके दोनो ओर चाँदी का भाग होता है और अत मे सीस सुपर आक्साइड और १८०° तक तपित अदह (asbestos) होता है ।

"सब परिस्थितियो पर ध्यान देने से २–४ मिलीग्राम पदार्थो से बिलकुल यथार्थ विश्लेपण किये जा सकते हैं । कम-से-कम १ मिलीग्राम पदार्थ का प्रयोग किया गया । इसमे भी जो त्रुटि हुई वह स्वीकृत त्रुटि सीमा के अदर ही थी । इस प्रकार हमने विश्लेषण के लिए आवश्यक पदार्थ की मात्रा मे अभूतपूर्व कमी कर दी है और जब हम यह विचार करते हैं कि लीबिग आधा ग्राम और कभी-कभी १ ग्राम पदार्थ को लेकर विश्लेषण करते थे तथा पिछली शताब्दी के अत मे यह मात्रा ० १५ से ० २ ग्राम तक हो गयी, तो हम यह कह सकते है कि इन दस वर्षो के भीतर ही हमने मैक्रो-विश्लेषण के लिए आवश्यक पदार्थ की मात्रा के सौवे भाग से ही माइक्रो-विश्लेषण किया है और इसमे यथार्थता की बिलकुल कमी नही हुई है । मै यह कह सकता हूँ और मै इसे अपने विद्यार्थियो के साथ देखता भी हूँ कि माइक्रोविश्लेषण विधि से अधिक यथार्थता आ सकती है, क्योकि मैक्रोविश्लेषण की अपेक्षा इसमे आवश्यक परिस्थितियाँ अधिक होती है और उनकी पूर्ति अधिक अच्छी विधि से होती है । इसके अतिरिक्त दो और लाभ भी है । एक तो इससे गैस और प्रतिकर्मक बचते है और दूसरे समय भी बचता है, जो कदाचित् अधिक महत्त्वपूर्ण है । मैक्रो-विश्लेषण की अपेक्षा तिहाई समय मे ही इससे परिणाम प्राप्त हो जाते हैं ।

"एक कार्बनिक पदार्थ मे तत्त्वो के परिमाणात्मक (Quantitative) मापन के साथ-साथ उसके कुछ तत्त्व समूहो का परिमाणात्मक निर्धारण भी बहुत आवश्यक है । फलत मैने अम्लमितीय विधि से फिनोलफ्थैलीन का सूचक रूप मे प्रयोग करके कार्बाक्सिल समूहो के मापन मे भी शोधन किया है और मेथाक्सिल तथा मेथिल इमाइड समूहों के निर्धारण पर भी ध्यान दिया है ।

"इसके साथ-साथ मैने क्वथनाक निर्धारण से अणु-भार निकालने की विधि को

माइक्रो-विश्लेषण रीति से करना बताया है। हम लोग ७ मिलीग्राम पदार्थ की मात्रा से ही विश्वसनीय मानो को बता सकते है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

बहुत सूक्ष्म मात्राओ मे पदार्थो का परिचय प्राप्त करने की विधियाँ रसायन मे नवीन नही है। लगभग एक शताब्दी पूर्व बुन्सन (Bunsen) और किरशाफ (Kirchhoff) ने गणना की थी कि वे एक मिलीग्राम के हजारवे भाग मे उपस्थित सोडियम अथवा दूसरे तत्त्वो का, जो लौ को रग देते है, परिचय प्राप्त कर सकते है। कुछ शर्कराएँ और प्रोटीन विशेष प्रतिकर्मको से रगीन विलयन बनाती है और इनकी सहायता से उनका परिचय भी प्राप्त किया जा सकता है। तथापि कुछ मिलीग्राम कार्बनिक पदार्थ को लेकर उसका विश्लेषण करना एक नवीन सफलता थी। कायिकी-रसायन पर जो शोध-कार्य हो रहा था, उसमे इससे बडी सहायता मिली। पौधे एव पशुओ मे सूक्ष्म मात्रा मे उपस्थित कार्बनिक पदार्थ जीवन-रसायन के दृष्टिकोण से बडे उपयोगी सिद्ध हुए। ये पदार्थ टनो कार्बनिक पदार्थो से केवल कुछ ग्राम की मात्रा मे बन पाते थे। रग द्रव्य, विटामिन और हार्मोन पर शोध-कार्य के लिए माइक्रो-विश्लेषण विधि की नितात आवश्यकता थी।

रेडियम-धर्मिता मापन द्वारा इनसे भी सूक्ष्म मात्रा मे पदार्थो की उपस्थिति का ज्ञान हो सकता है। अत मैक्रो से माइक्रो-विश्लेषण और अततोगत्वा अतिमाइक्रोविश्लेषण (Ultramicroanalysis) की ओर रसायन अग्रसर हो उठा।

माइक्रो मात्राओ को तोलने के लिए पहले प्राचीन सिद्धान्तो पर आधारित तुलाओ का ही प्रयोग होता था, उदाहरणतया, क्हूलमान (Kuhlaman) तुला से प्रेग्ल का कार्य सम्भव हो सका। अति-माइक्रो रूप से तोलने के लिए तुला बनाने मे अन्य सिद्धातो का उपयोग करना पडा।

१६२४

कोई पुरस्कार नहीं दिया गया

१९२५

रिचर्ड जिगमांडी (Richard Zsigmondy)

(१८६५-१९२९)

"कलिलीय (colloidal) विलयनों की विषमांग प्रकृति को स्पष्ट करने के लिए और इस संबंध में उन विधियो को निकालने के लिए, जो आधुनिक कलिल रसायन के लिए आधारस्वरूप बन गयी है।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

रिचर्ड जिगमाडी का जन्म वियेना मे हुआ था, जहाँ आपके पिता डाक्टर थे और जर्राही (surgical) यत्रो के आविष्कारक थे। रिचर्ड आरम्भ से ही भौतिकी और रसायन मे रुचि दिखाने लगे। आपने वियेना और म्यूनिख मे अध्ययन किया। जो समय आपने ए० कुन्ड्ट (A Kundt—१८३९–१८९४) के साथ उनके सहायक के रूप मे बिताया वह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। जिन विषयो पर कुन्ड्ट ने शोध-कार्य किया, उनमे से एक विषय था—अप्रकृत वर्णक्रम, जो उन पदार्थो से प्राप्त होता है जो प्रकाश का उच्च विशिष्ट अवशोषण करते है। कुन्ड्ट ने जिगमाडी का उन चमकीले रगो की ओर ध्यान आकर्षित किया जो पोर्सिलेन पर फैलाये स्वर्ण मिश्रणो के कार्बनिक पदार्थों द्वारा होता है। जो पदार्थ स्वर्ण से मिलाये जाते है उनका रगो के ऊपर विशेष प्रभाव होता है और ये रग तब बनते है जब पोर्सिलेन को गरम किया जाता है। जब जिगमाडी आस्ट्रिया लौटे और उन्होने ग्राज़ विश्वविद्यालय की फैकल्टी मे प्रवेश किया, तो आपने स्वर्ण रगो का क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने की चेष्टा की। यह एक पुराना विषय था। पहले के कीमियागर भी इस विषय मे रुचि रखते थे। १६७९ मे जोहैन कुन्कल (Johann Kunckel) ने स्वर्ण बनाना आरम्भ किया, किन्तु इसके बनाने के बजाय आप माणिक्य शीशे के आविष्कार मे सफल हुए। इसकी विधि गुप्त रखी गयी। एक दूसरे कीमियागर, एन्ड्रियास कैसियस (Andreas Cassius) ने एक आश्चर्यजनक बैंजनी रग द्रव्य निकाला। यह स्वर्ण विलयन मे स्टैनिक क्लोराइड

के विलयन को मिलाने से अवक्षेपित होता था। १८५७ मे अंग्रेज रसायनज्ञ माइकेल फैरडे ने माणिक्य शीशे की व्याख्या उसको छितरित (dispersed) स्वर्ण बता कर की। आपने स्वर्ण लवणो के साथ भी प्रयोग किया और इनमे ईथर मे विलीन फास्फोरस को डाला। इससे खूब गहरे रग वाले धातु के छितरन (dispersion) बन गये। इन सूक्ष्म छितरनो को कलिलीय कहा गया। इस शब्द का सबसे पहले प्रयोग ग्रैहम (Graham) ने उन विलयनो के लिए किया था, जो पशु से प्राप्त गोद अथवा जिलेटिन से बनते है और कहा था कि ये एक पृथक् प्रकार के विलयन है।

जिगमाडी (Zsigmondy) ने जब १८९७ मे जीना (Jena) की शीशे की फैक्टरी मे पद ग्रहण किया, तब भी आप इस विषय पर कार्य करते रहे। १९००–१९०३ तक आप अपनी व्यक्तिगत प्रयोगशाला मे भी इस पर कार्य करते रहे। जान टिंडल (John Tyndall) ने १८८१ मे अतिसूक्ष्मदर्शीय (Ultramicroscopical) रूप से छोटे कणो के देखने के लिए परीक्षण की रेखा से समकोण तल से कणोको प्रकाशित करने की बात बतायी थी। इसी को जिगमाडी ने आधार बनाया और १९०३ मे भौतिकीज्ञ सीडेनटाफ्फ (Siedentohf) के साथ अति सूक्ष्मदर्शी का आविष्कार किया। यह कलिलो के बारीक परीक्षण के लिए सब प्रकार से उपयोगी यत्र है।

१९०७ के उपरात आप गाटिन्जन (Gottingen) विश्वविद्यालय के अकार्बनिक रसायन के इस्टीट्यूट के डायरेक्टर रहे।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का विवरण

"मैंने माणिक्य-शीशे और कुछ मिट्टी सबधी रगो पर अन्वेषण किया, जो स्वर्ण की बारीकतम छितरन के फलस्वरूप बनते हैं। मुझे यह ध्यान आया कि रासायनिक रूप से एक दूसरे से मिलते-जुलते यौगिक इन रगो के उत्पादन मे काफी भिन्न प्रभाव दिखाते थे। यह परीक्षण और अधिक आश्चर्य-जनक हुआ जब हमने यह देखा कि एक दूसरे से विपरीत गुणधर्मी वाले यौगिक का बारीकतम छितरन रूप मे स्वर्ण के रगो पर प्रभाव कभी-कभी एक प्रकार का होता है।

"रसायन के पूर्व अनुभवो से यह ज्ञान पृथक् था। फलत मैंने इन परीक्षणो के कारण को उन विधियो से जानने की चेष्टा की जो शुद्ध रूप से रासायनिक नही थी। सबसे पहले मैंने कैसियस के बैंजनी रग पर विशेष रूप से कार्य किया। उस समय गहरे लाल कलिलीय स्वर्ण को बनाने की सबसे निश्चित विधि यह थी कि फार्मेल्डीहाइड (formaldehyde) का उपयोग किया जाय। इस विधि से मैंने काफी मात्रा मे

शुद्ध, गहरा लाल कलिलीय रग बना लिया। इस स्वर्ण से मैंने कैसियस के बैजनी रग के सश्लेषण की चेष्टा की और जब मुझ इस प्रयोग मे सफलता मिली तो यह विचार सिद्ध हो गया कि कैसियस का बैजनी रग बारीक रूप से बॅटे स्वर्ण और कलिलीय स्टैनिक अम्ल का मिश्रण था। किन्तु, इसके विपरीत जैसा वर्जीलियस महोदय पहले ही देख चुके थे, यह पूर्ण रूप से रासायनिक पदार्थ की भॉति कार्य करता है। इससे मुझे कलिलीय अवक्षेपणो को समझने मे बडी सहायता मिली। त्रुटियो से बचने के लिए यह आवश्यक है कि कलिलीय पद्धतियो की व्याख्या के लिए इस अनुभव पर भी विचार किया जाय। सक्षेप मे यह कहा जा सकता है कि कुछ परिस्थितियो मे कलिलीय मिश्रण एक रासायनिक यौगिक की भाँति कार्य कर सकता है और इसको भूल से यौगिक समझा जा सकता है।

"स्वर्ण की एक ही मात्रा वाले द्रव आम तौर से देखने पर विभिन्न मालूम पड सकते है, इसके विपरीत, जो विलयन साधारण रूप से देखने पर साफ मालूम पडते है उनमे प्रकाश के फैरडे—टिडल कोन (Faraday Tyndall Cone) की तीव्रता मे अन्तर हो सकता है।

"कुछ समस्याओ के लिए सूक्ष्मदर्शी के नीचे केवल प्रकाश के कोन का परीक्षण पर्याप्त नही था। फलत, मैंने अधिकतम यथार्थता से प्रकाश कोन के परीक्षण के लिए एक सूक्ष्मदर्शी का विकास किया।

"जीना मे एच० सीडेनटाप्फ (H Siedentopf) के साथ मैंने इस विधि का सस्कार किया। बडी दक्षता (efficiency) वाला एक यत्र बनाया गया। यह दीर्घ छिद्र-अति सूक्ष्मदर्शी (Slit ultramicroscope) था। इससे एक मिलीमीटर के करोडवे अश वाले स्वर्ण कण को भी सूर्य के प्रकाश मे देखा जा सकता था।

"कलिलीय विलयनो मे अनेक अनुत्क्रमणीय (irreversible) कलिलों के कणो की भॉति स्वर्ण के कणो पर ऋणात्मक विद्युत् का चार्ज होता है। उनके स्थायित्व के लिए इन कलिलो पर विद्युतीय चार्ज का होना बहुत आवश्यक है। यदि कणो पर से चार्ज हटा लिया जाय—उदाहरणतया लवण डाल करके—तो कण आपस मे फौरन जुड जाते है और कलिल मे स्कदन (coagulation) हो जाता है। कलिलीय स्वर्ण मे यह दिखाई पडता है तब उसका रग लाल से नीले मे परिवर्त्तित हो जाता है। अति सूक्ष्मदर्शी से केवल प्रत्येक कण के रग मे परिवर्त्तन ही नही दिखाई देता, अपितु उससे कणो की सख्या मे अद्भुत परिवर्त्तन होता हुआ भी दिखाई देता है।

"सरक्षक (protective) कलिलो को डाल करके स्कदन मे हस्तक्षेप किया

जा सकता है। इस प्रकार स्कदनकारी को डाल कर कुछ निश्चित समय के पश्चात् प्रत्येक बार अतिसूक्ष्मदर्शी मे दिखाई देने वाले कणो की सख्या ज्ञात की जा सकती है, और इस प्रकार स्कदन के वेग को नापा जा सकता है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

पदार्थ की तीन अवस्थाएँ बहुत पहले से मानी जाती थी—गैस, द्रव और ठोस। एक शताब्दी पूर्व चतुर्थ अवस्था ने भी अपनी ओर रसायनज्ञो का ध्यान आकर्षित कराया, यह अवस्था बारीक छितरन की थी। इस अवस्था मे पदार्थ तीन अवस्थाओ मे से किसी एक अवस्था मे हो सकता है। बहुत सारे पदार्थ इस कलिल अवस्था मे पाये जाते है। धातु, लवण, कार्बनिक पदार्थ अति बारीक छितरित रूप मे कुहरा अथवा फेन (foam) या द्रव अथवा ठोस घोल की भाँति पाये जा सकते है। वे वायुमडल मे, प्राकृतिक जलो मे, चट्टानो मे और जीवाणुओ मे पाये जाते है। उनका ओषधि रूप मे, लेप के रूप में उपयोग होता है, टेक्निकल कार्यो मे भी उनका उपयोग होता है, जैसे सिलिका जेल का। उनकी बडी सतहो पर विद्युतीय चार्ज रहता है और उन पर विशिष्ट रासायनिक क्रियाएँ हो सकती है, तथापि यह कलिलीय अवस्था काफी नाजुक होती है, जब इसमे सरक्षक कलिल नही होते, तब इसको आसानी से विनष्ट किया जा सकता है। किसी दूसरे प्रकार के कलिल को बहुत थोडी मात्रा मे मिलाने से कलिल पद्धति मे स्थायित्व आ जाता है, क्योकि वे सरक्षक का कार्य करते है, दूसरे पदार्थो का प्रभाव इसका उलटा भी हो सकता है।

जितनी टेक्निकल कार्य विधियो मे कलिलीय छितरनो को प्राप्त करने की माग होती है, लगभग उतनी ही सख्या मे ये हानिकर भी होते है। उदाहरणतया, यद्यपि अनेक प्रकार के तैल पायस (emulsions) बडे प्रयास से बनाये जाते है, तथापि तैलो का पायस मे से पृथक्करण भी प्राय आवश्यक होता है। कलिलीय छितरनो को बनाने अथवा बिगाडने मे, उनके गुणधर्मो का ज्ञान बडा सहायक होता है। फलत. अति सूक्ष्मदर्शी मे कई विधियो से सुधार किये गये है। सीडेन्टाप्फ ने हृदय रूपी सघनित्र (cardioid condenser) को उसमे जोडा, इससे वस्तु मे प्रकाश इस प्रकार के कोण पर सान्द्रित होता है, जिससे केवल कलिलीय कणो से परावर्त्तित प्रकाश ही उपनेत्र तक पहुँचता है।

१९२६

थियोडार स्वेदबर्ग (Theodor Svedberg)
(१८८४-)

"छितरित पद्धतियो (disperse systems) पर कार्य के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

थियोडार स्वेदबर्ग का जन्म वैल्बो, स्वीडेन मे हुआ था। आपने उप्पसल विश्वविद्यालय मे अध्ययन किया। डॉक्टर उपाधि प्राप्त करने के हेतु लिखी गयी थीसिस मे आपने उच्च आवृत्ति वाली विद्युत्-धाराओ के प्रभाव से धातुओ को छितरा कर कलिलीय विलयनो को बनाने की नयी विधि का वर्णन किया। जब इस प्रकार की धाराएँ स्वर्ण अथवा निकल विद्युदग्रो के बीच मे चलायी जाती है, तो धातु जल मे छितरा जाती है। अति सूक्ष्मदर्शी मे परीक्षण करने पर धातु के महीन कण दिखाई पडते है। स्नातक होने के एक वर्ष बाद १९०९ मे आपने इन विधियो का लगभग ५०० पृष्ठ वाली एक पुस्तक में वर्णन किया। सूक्ष्म रूप से छितरित कण सदैव गति अथवा कपन की दशा मे रहते है। स्काटलैंड के वनस्पति-वैज्ञानिक रा० ब्राउन (R Brown) ने इसका परीक्षण आलम्बित परागो मे किया था। स्वेदबर्ग ने इस ब्राउनीय गति (Brownian Movement) का अध्ययन किया और कुछ मोटे कलिलीय कणों पर स्वय उन अणुओ की गति के प्रभाव को देखा, जो उनसे टकराते है। इन प्रायोगिक अध्ययनो का प्रकाशन अणुओ का अस्तित्व (The existence of the Molecules) शीर्षक रूप में १९१२ मे हुआ।

उसी वर्ष उप्पसल मे स्वेदबर्ग प्रोफेसर बन गये। तब आपने अपना ध्यान कलिलीय कणो पर गुरुत्व के कर्षण (pull) मे वृद्धि पर जमाया। यह वृद्धि सेन्ट्रीफ्यूज मे उसको उच्च वेग से घुमाने पर की जा सकती है। स्वेदबर्ग ने एक अति सेन्ट्रीफ्यूज (ultra-centrifuge) का विकास किया। यह कार्य अशत उस समय हुआ जब आप मैडिसन वीस (Madison, Wis) मे १९२२–२३ तक अतिथि बनकर

शोधकर्त्ता और लेक्चरर के रूप मे रहे थे। जिन पदार्थों का अणु बहुत बडा होता है— जैसे प्रोटीन, ऐसे कार्बनिक पदार्थो के विलयनो पर शोधकार्य करने के लिए अति-सेन्ट्रीफ्यूज बनाया गया था। उप्पसल विश्वविद्यालय मे भौतिक रसायन के इस्टीट्यूट मे डायरेक्टर रह कर अब भी आप यह कार्य कर रहे हैं।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"इस विधि का आधार यह तथ्य था कि अति सूक्ष्मदर्शी मे कल्कन सतुलन (Sedimentation equilibrium) के मापन से भारी अणुओ की सहति का निर्धारण सम्भव होना चाहिए।

"जब एक बन्द पात्र मे किसी विलयन को काफी देर तक सेन्ट्रीफ्यूज किया जाता है तो अततोगत्वा एक सतुलन की अवस्था आ जाती है और तब कल्कन और विसरण (sedimentation diffusion) एक दूसरे के बराबर हो जाते है। उस समय अणु-भार के निर्धारण के लिए केवल घूर्णन केन्द्र से स$_१$ और स$_२$ सेटीमीटर दूरी पर दो बिन्दुओ पर विलयन के सान्द्रण के अनुपात के मापन की आवश्यकता होती है, ताप, सेन्ट्रीफ्यूज के वेग एव विलयशील के आशिक विशिष्ट आयतन (partial specific volume) तथा विलायक के घनत्व का भी ज्ञान होना चाहिए।

"यह सूत्र केवल तनु विलयनो के लिए लागू होता है। सान्द्र विलयनो के लिए अणुभार निकालने वाले सूत्र मे विलायक की आशिक विशिष्ट स्वतत्र ऊर्जा (partial specific free energy) का भी ध्यान रखना चाहिए।

"अध्ययन किये जाने वाले विलयन की थोडी मात्रा –० ०१ से ० २५ घन से०– को एक शीशे अथवा स्फटिक (quartz) के पात्र मे रख दिया जाता है। पात्र मे समतल समातर दीवारे होती है और उसको स्थिर ताप पर रख कर विशेष सेन्ट्रीफ्यूज मे घूर्णित किया जाता है। जब सेन्ट्रीफ्यूज का बल गुरुत्व से ५००० गुना हो जाता है, तो इस सेन्ट्रीफ्यूज का फ़ोटो ले लिया जाता है। जब सतुलन की अवस्था आ जाती है और पात्र की फोटो ले ली जाती है, तो विभिन्न सान्द्रण वाले विलयनो की श्रेणी (series) की उसी पात्र मे सेन्ट्रीफ्यूज को थोडी देर चला कर ही फोटो ले ली जाती है, अर्थात् उस समय जब कि कल्कन प्राय. आरम्भ नही होता। तब एक प्लेट

१. "A Method for the Determination of the Molecular Weight of the Proteins", Journal of the American Chemical Society, Vol. XLVIII 1926 के पृष्ठ ४३० से अनूदित।

पर विलयन की सब फोटो लगा ली जाती है—कल्कन सतुलन की ओर जाते समय की, उस अवस्था के पहुँचने के बाद की और विभिन्न साद्र वाले विलयनो की। तब स्वत. अकित माइक्रोफोटोमीटर (self registering microphotometer) की सहायता से प्लेट रिकार्ड कर ली जाती है। इस प्रकार के रेकार्ड को प्राप्त करने पर एक वक्र बनता है। इससे विलयन के साद्रण और घूर्णन केन्द्र से उसकी दूरी का सम्वन्ध सरलता से स्थापित हो जाता है।

"हेमोग्लाबिन रक्त की श्वास प्रक्रियात्मक शक्ति के सूत्र के लिए आवश्यक गुणनखड है, और इसका कायिकी-महत्त्व विख्यात है। इन कारणो से इसका अणुभार ज्ञात करना अति आवश्यक है। अणुभार ज्ञात करने के लिए हिमाक अथवा बाष्प-दाब के निर्धारण की जो साधारण विधियाँ है वे इतने अणुभार वाले पदार्थ मे स्वभावत नही लग पाती और इसीलिए हेमोग्लाबिन के अणुभार के मापन के लिए जो पहले कार्य हुआ है, उसमे अर्ध पारगम्य झिल्ली (semi permeable membrane) द्वारा उसके रसाकर्षण दाब के मापन का ही वर्णन है।

"हमने जो पहले प्रयोग किये, उनमे डायालाइज (dialyze) किये हुए आक्सी हेमोग्लाबिन के शुद्ध जलीय विलयन और १% पोटैसियम क्लोराइड विलयन का प्रयोग किया गया। इनसे हेमोग्लाबिन का जो अणुभार निकला वह उसके न्यूनातिन्यून मान–१६,७००–से ३–४ गुना अधिक था।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

गुरुत्व की प्रक्रिया से अणुओं का उनके विलयनो मे पृथक्करण, अणुभार ज्ञात करने की सबसे सीधी और सरल विधि जान पडती है। किन्तु इसमे अनेक बाते आ जाती है और उन पर विचार तथा तुलनात्मक डेटा (Data) के दृष्टिकोण से उनका मूल्याकन करना चाहिए। गुरुत्व के प्रभाव की जो गणना की जाती है उसमे अणुभार केवल एक ही गुणनखड है, पदार्थ के आकार और उसकी सापेक्ष गुरुता पर भी विचार करना चाहिए, विलायक के बधको पर भी विचार करना चाहिए और ये विलायक की अम्लीयता अथवा क्षारीयता के अश (degree) पर तथा लवणो की उपस्थिति पर आधारित होते है। घूर्णन के उच्च वेग को प्राप्त करने के लिए बनाये यत्र मे कई विधियो से परिवर्तन करना पडा। जिस पदार्थ से घूर्णक बनाया गया, उसके भार एव उसकी मजबूती के अनुसार, उसका चयन किया गया। विद्युत्-शक्ति से यत्र को नही चलाया गया। उसके स्थान पर घिर्री (Turbine) लगायी गयी। परीक्षण और कल्कन की

फोटो लेने के लिए जो प्रबन्ध किया गया उस पर भी काफी ध्यान लगाना पडा। बहुत छोटे सेन्ट्रीफ्यूजो को जिनके घूर्णक का व्यास केवल एक सेटीमीटर होता है, १० लाख घूर्णन प्रति मिनट के हिसाब से चलाया जा सका। इसके विपरीत बडे—२० सेटीमीटर तक—व्यास के घूर्णक वाले सेन्ट्रीफ्यूज से गुरुत्व से ३४,८०० गुना अधिक बल, केवल १८,००० घूर्णन प्रति मिनट के वेग से लगाया जा सका।

प्रोटीन, वायरसो और सश्लिष्ट रेजीनो के अणुभार को अति सेन्ट्रीफ्यूज से ज्ञात किया गया। उच्च रीढ जन्तुओ मे हेमोग्लाबिन का अणुभार ६८,००० होता है, कुछ जीवाणुओ मे यह ३४,००० होता है और निम्न रीढ जन्तुओ मे केवल, १७,०००। दूसरे रक्त रगद्रव्य हीमोसायेनिब का अणुभार ९० लाख निकला। मापनो की कुछ विधियो से सेल्युलोज मे फलशर्करा की २००० इकाइयाँ जान पडती हैं। अति सेन्ट्री-फ्यूज मे इससे कम आणव इकाइयों का परीक्षण हो सकता है; इनमे फलशर्करा की केवल १०० इकाइयाँ हो सकती हैं। उच्च बहुअशी (highly polymeric) सश्लिष्ट रेजीनो के व्यापारिक उत्पादन के समय सेन्ट्रीफ्यूज के बडे बल को लगाकर कल्कन पर अन्वेषण किया जा सकता है और इससे अणुओ के आकार और रूप का ज्ञान हो सकता है; यह ज्ञान बडे औद्योगिक महत्त्व का है।

१९२७

हाइनरिश वीलैंड (Heinrich Wieland)

(१८७७)

"पित्त अम्लो और उनके सदृश यौगिकों पर शोध-कार्य के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

हाइनरिश वीलैंड का जन्म प्फोरज्हाइम, बादेन मे हुआ था। आपके पिता रसायनज्ञ थे। हाइनरिश ने जर्मनी के कई विश्वविद्यालयो मे रसायन का अध्ययन किया। १९०१ मे आपने म्यूनिख विश्वविद्यालय से डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। वही १९१३ मे आप कार्बनिक रसायन के प्रोफेसर बन गये। कैसर विल्हेल्म इस्टीट्यूट मे हाबेर के के साथ १९१७–१८ तक युद्ध-कार्य करने के बाद आपने १९२१ मे फ़ाइबुर्ग मे शिक्षा सबधी कार्य एव शोध आरम्भ की। १९२६ के उपरात आपने म्यूनिख मे विल्सटैटर के उत्तराधिकारी के रूप मे कार्य किया।

इस शताब्दी के आरम्भिक वर्षों मे जीवन-रसायन का जो नवीन रूप बना था, उसकी ओर वीलैंड बहुत आकर्षित हुए। अपने प्रथम म्यूनिख काल मे आपने जीवन मे आक्सीकरण के केन्द्रीय प्रक्रम पर काफी मौलिक कार्य किया था। हम श्वास लेकर रक्त को आक्सीजन देते है, यही आक्सीजन श्वास निकालते समय कार्बन से सयोग करके कार्बन डाइ आक्साइड के रूप मे एव हाइड्रोजन से सयोग करके जल रूप मे बाहर आती है। आक्सीकरण की जो सबसे सरल व्याख्या है, वह आक्सीजन से सयोग है। किन्तु वीलैंड ने हाइड्रोजन के कार्य पर भी जोर दिया और कहा कि जो आम तौर से आक्सीकरण जान पडता है, वह महत्त्वपूर्ण दशाओ मे डिहाइड्रोजनीकरण (dehydrogenation) भी हो सकता है। जब किसी धातु का आक्सीकरण होता है—उदाहरणतया लोहे मे जग लगना—तो निश्चित रूप से आक्सीकरण की विधि में हाइड्रोजन का विनाश होता है, क्योकि धातु और जल मे एक मध्यवर्ती (intermediary) यौगिक बनता है।

$$Fe + H_2O \rightarrow Fe\,(H_2O) \rightarrow FeO + H_2$$
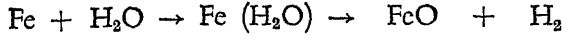
लोह जल हाइड्रेट आक्साइड हाइड्रोजन

जीवाणु मे मध्यवर्ती यौगिक के आक्सीकरण से, योगिक का हाइड्रोजन किसी हाइड्रोजन-ग्राही से सयोग करता है।

ऐलकेलाइडो, पित्त अम्लो और बडे विषैले जीवन सवधी पदार्थो पर कार्य हुआ। जब आपके मित्र विनडाउस (Windaus) (देखिए पृ०) डिजीटैलिस ग्लूकोसाइड्स (digitalis glucosides) पर कार्य कर रहे थे तो वीलैंड ने पशु-शरीर मे निर्मित हृदय के विषो की रासायनिक रचना को स्पष्ट किया, विशेप रूप से स्थल मेढक (toad, भेक) द्वारा उत्पादित एक विष का। सी० शोएप्फ (C Schopf) के साथ आपने तितलियो के परो पर रगद्रव्यो की रासायनिक रूपरेखा का विकास किया और मछली की चमडी पर उसके सदृश पदार्थो को प्राप्त किया। जिगर मे एनीमिया नाशक (anti-anemic) पदार्थो पर शोध-कार्य के लिए यह बिलकुल पृथक् विपय बडा महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

नोबेल पुरस्कार प्राप्त करते समय वीलैंड ने उस विधि का वर्णन किया जिससे आप पित्त से प्राप्त सबसे महत्त्वपूर्ण अम्ल—कोलिक अम्ल—के अणु मे आक्सिजन का उपयुक्त स्थान बताने मे समर्थ हुए थे। इस विधि मे अनेक स्थलो पर रुकना पडता था; इन विभिन्न स्थलो पर पित्त से, जो आरभिक पदार्थ था, निकले हुए विभिन्न पदार्थो को विभिन्न पित्तीय नाम देने पडते थे। एक साधारण योजना को बनाना था, २४ कार्बन परमाणुओ को निश्चित सख्या दी गयी, क्योकि ऐसा समझा जाता था कि ये परमाणु एक दूसरे के बाद आते है और चार घेरो (rings) मे तथा उनसे सयुक्त निश्चित स्थानो पर पार्श्वश्रृखला मे व्यवस्थित होते है। तब अणु को सीधा बनाकर समझना था, यह अच्छी प्रकार से नियत्रित करके अणु के आशिक विनाश से किया जाता था, अथवा कभी-कभी अणु को और अधिक जटिल बनाना पडता था—उदाहरणतया हाइड्राक्सिल समूहो की ग्रिनयार्ड प्रतिकर्मक से रक्षा करके। उस समय कुछ अनिश्चितता रह गयी, किन्तु अणु मे जो कृत्रिम परिवर्तन किये गये थे, उनसे उसकी आतरिक रचना को स्पष्ट रूप से समझने मे बडी सफलता मिली।

१. Lex Prix Nobel en 1927 से अनूदित।

"कोलिक अम्ल के सूत्र से एक ऐसे आकार का ज्ञान होता है जिसमे कार्बन के चार सघनित घेरे है और उनमे तीन पार्श्व शृखलाएँ लगी हुई होती है।

"कार्बाक्सिल समूह, जो अम्लीयता के लिए उत्तरदायी है, एक पार्श्व शृखला पर होता है। कोलिक अम्ल के और तीन आक्सिजन परमाणु ऐलकोहलीय हाइड्राक्सिल समूह के रूप मे वितरित होते है, कोलिक अम्ल मे वे तीसरे, सातवे एव बारहवे कार्बन परमाणु पर होते है। डेसाक्सीकोलिक (desoxycholic) अम्ल, C_{24} H_{40} O_4 मे १२वे कार्बन परमाणु पर हाइड्राक्सिल समूह नही होता और लिथोकोलिक (litho-cholic) मे एक हाइड्राक्सिल समूह तीसरे कार्बन परमाणु से बँधा होता है। एक कोलिक अम्ल को, C_{24} H_{20} O_4 जो डेसाक्सी-कोलिक अम्ल का समावयव है, मैंने विनडाउस के साथ कई जीवाणुओ के पित्ताशय (विशेपकर हस, ढोर (cattle) एव मनुष्य के) से पृथक् किया है। इस कोलिक अम्ल को चीनोडेसाक्सी-कोलिक (Chenodesoxy-cholic) अम्ल और ऐन्थ्रोपो-डेसाक्सीकोलिक (anthropo-desoxycholic) अम्ल कहकर व्यक्त किया जाता है। यद्यपि हम दोनो शोधकर्त्ताओ मे आपस मे बडा सामजस्य है, तथापि नामकरण के सबध मे हम लोगो मे कोई बात तय नही हो पायी है। इस अम्ल मे दो हाइड्राक्सिल समूह ७वे एव १२वे कार्बन परमाणु पर स्थापित होते है। जैसा स्पप्ट है, ये चारो कोलिक अम्ल एक दूसरे से काफ़ी मिलते-जुलते है, केवल उनका आधारभूत ढाँचा ही एक नही है, परन्तु उनमे हाइड्राक्सिल समूह का वितरण भी एक प्रकार का है।

"डेसाक्सीकोलिक अम्ल से आरम्भ करके अणु का पहला भजन किया जाता है; यह घेरे १ मे डाइकीटो अम्ल की भाँति तोडा जाता है। इस प्रकार दो समावयव डेसाक्सीबिलैनिक (desoxy-billanic) अम्ल प्राप्त होते है।

"डेसाक्सीबिलैनिक अम्ल से प्राप्त चक्रीय (cyclic) कीटोन (ketone) तोड कर खोला गया। कई मध्यवर्ती यौगिको के बनने के पश्चात् हेक्साकार्बोनिक (hexa-carbonic) अम्ल, C_{23}. H_{34}., O_{12} बनता है। इसमे एक घेरा पहले की भाँति ही रहता है और इसलिए इसको सोलनिलिक (solanellic) अम्ल कहा गया। गरम करके सोलैनिलिक अम्ल को तोड़ने पर जो विच्छेदन हुआ उससे एक नया घेरा पेंटानोन (pentanons) का बनता है। इसको और तोडने पर एक अम्ल C_{22} H_{32} O_{12} प्राप्त होता है, जिसको बिलायडानिक (biloidonic) अम्ल कहते है।

"बिलायडानिक अम्ल से आरम्भ करके अतिम घेरे मे प्रवेश करने के सारे प्रयास असफल रहे।

"यह स्पष्ट हो गया होगा कि जिन प्रयोगो का अभी तक वर्णन किया गया है इनमे बडे अणु के केवल दो परमाणुओ को स्पष्ट रीति से हटा लिया जाता है। अब तक हम लोग कदम ब कदम चल रहे थे, किन्तु उपयुक्त समय मे कार्य पूरा करने के लिए इस नियम को त्यागना पडा।

"हम लोगो ने चोलानिक अम्ल $C_{24}H_{40}O_2$ के एस्टर से आरम्भ किया। यह सारे समूह का आरभिक पदार्थ है। इसको ग्रिनयार्ड की प्रतिक्रिया से डाइफिनाइल युक्त (diphenylated) कार्बीनोल (carbinol) मे परिवर्त्तित किया गया। क्रोमिक अम्ल से इसका आक्सीकरण किया गया। इस प्रकार एक-एक करके कार्बन परमाणुओ को तोडा गया। तीसरे कार्बन परमाणु के साथ, चौथा भी टूट गया। इससे सिद्ध हुआ कि इसमे मेथिल-समूह जुडा हुआ था। $C_{20}H_{32}O_2$ अम्ल से आरम्भ करके इस प्रक्रिया मे जो नीरसता थी, उसमे एक अद्भुत परिवर्तन हुआ ......चौथे घेरे को भी खोलने मे सफलता मिली। इस चौथे घेरे मे कार्बन के केवल ५ परमाणु थे। दूसरे घेरे की पार्श्व-श्रृखला के सबध से (७वें कार्बन परमाणु के लैक्टा-नोइजेशन से एव डिहाइड्रो-अम्ल के CO-समूह के सघनन से) १८वे कार्बन परमाणु पर पार्श्व-श्रृखला की स्थिति निश्चित हो जाती है।

"कोलिक अम्ल के सूत्र का जो हमको इस समय ज्ञान है वह केवल अनुमान स्वरूप है, क्योकि अतिम दो कार्बन परमाणुओ की स्थिति को अभी निश्चयात्मक रूप से ज्ञात नही किया गया है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

कोलिक अम्ल का चित्र सामने रखने के कुछ समय पश्चात् वीलैंड को उसमे कुछ परिवर्त्तन करना पडा। नवीन रासायनिक सादृश्यो द्वारा और एक्स-किरण से प्राप्त चित्रो की सहायता से कार्बन परमाणुओ की दूरी के मापन द्वारा यह पता चला कि १ से १४ तक कार्बन परमाणु तीन बेजीन घेरो मे दो कार्बन परमाणुओ से जुडे हुए थे और उनसे ५ कार्बन परमाणुओ का केवल एक घेरा दो कार्बन परमाणुओ से जुडा हुआ था। इस ढाँचे पर विभिन्न पार्श्व-श्रृखलाओ से विभिन्न पशुओ के विभिन्न पित्तीय अम्लो के पृथक्-पृथक् गुणधर्मो का कारण स्पष्ट होता है। पौधो से प्राप्त स्टीरोल मे भी इसी प्रकार का ढाँचा था। स्थल मेढक ब्यूफो वल गेरिस (Bufo vulgaris) से प्राप्त ब्यूफो विष कुमुदिनी के वर्ग वाले स्क्विल (squill) पौधे से प्राप्त सिलारेन (scillaren) से रासायनिक रूप से सबधित था।

खाद्य पदार्थो के पाचन मे पित्तीय अम्लो का महत्त्वपूर्ण भाग होता है। उनकी रासायनिक रचना मे थोडे से अतर से ही ये उपयोगी पदार्थ कभी-कभी विष बन जाते हैं। इसी प्रकार के अन्य रासायनिक पदार्थो का बाद मे आविष्कार हुआ। ये सूक्ष्म मात्रा मे उपस्थित होकर मनुष्य और पशु की वृद्धि एव लैगिक विकास मे निश्चयात्मक प्रभाव डालते हैं। पित्तीय पदार्थो के नवीन ज्ञान से लैगिक हार्मोनो के रसायन का ज्ञान थोड ही समय मे प्राप्त हो गया।

१९२८

एडोल्फ़ विनडाउस (Adolf Windaus)

(१८७६)

"स्टीरोल की रचना के अध्ययन के लिए एवं उनका सबध विटामिनो से स्थापित करने के लिए ।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

एडोल्फ विनडाउस का जन्म बर्लिन मे हुआ था और वही आपकी आरभिक शिक्षा हुई। आपने फाइबुर्ग एव बर्लिन मे औषध का अध्ययन किया। एमिल फिशर (Emil Fischer) के व्यक्तित्व और उनके कार्य से प्रभावित होकर आप अन्य लोगो की भाँति रसायन की ओर आकृष्ट हुए। फाइबुर्ग मे रसायन को मुख्य विषय लेकर, एव भौतिकी तथा जन्तुशास्त्र को सहायक विपय लेकर आपने डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। इसके एक वर्ष बाद आप बर्लिन की फिशर कीप्र योगशाला मे वापस आ गये। इसके बाद शीघ्र ही आपने कोलस्टीरोल एव डिजीटैलिस पर कार्य आरम्भ किया।

कोलस्टीरोल शब्द दो ग्रीक शब्दो—पित्त (chole) और ठोस (stereos) से मिलकर बना है। मो० शेवरियूल (M Chevreul) ने इसकी उपस्थिति को वसा मे दर्शाया था। यह वसा का वह भाग है, जो साबुन मे सोडे अथवा पोटाश की प्रतिक्रिया से परिवर्त्तित नही हो पाता। अनेक पौधो के बीजो एव फलो से ऐसे असाबुनीकरणीय (unsaponifiable) अवशेष प्राप्त हुए, किन्तु वे कोलस्टीरोल नही थे। इन पदार्थों के पूरे समूह के वर्गीकरण के लिए जो कार्य विनडाउस ने किया, उसकी तुलना वालाख द्वारा किये गये तारपीनो पर कार्य (देखिए पृ० ४०) से की जा सकती है। कोलस्टीरोल को पित्ताशय मे पडे पत्थरो द्वारा केलासित किया जा सकता है। इसके एक अणु मे २७ कार्बन परमाणु होते हैं। हलकी विधि से आक्सीकरण करने पर इसके ८ कार्बन परमाणु अलग हो जाते हैं, ये कार्बन परमाणु, अणु

के बडे भाग मे (जिसमे कार्बन परमाणुओ के चार घेरे होते है) लगी पार्श्व-शृखला को व्यक्त करते है।

स्टीरोल और डिजीटैलिस पर शोध-कार्य का सबध इस प्रकार स्थापित हुआ—डिजीटैलिस पत्तियो मे से निकले एक पदार्थ, डिजीटोनिन (digitonin) मे कुछ स्टीरोलो के साथ सयोग करके अविलेय अवक्षेप बनाने की क्षमता होती है। विनडाउस ने इस प्रतिक्रिया का अर्गोस्टीरोल के उपविकिरण (irradiation) से प्राप्त पदार्थो को स्पष्ट रूप से पहचानने मे उपयोग किया। उस समय आप गाटिन्जेन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर थे। इन्सब्रूक मे व्यावहारिक औषध रसायन के २ वर्ष तक प्रोफेसर रहने के बाद आपने इस पद पर १९१५ से कार्यारम्भ किया था।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[१]

"स्वय कोलस्टीरोल का जीवशास्त्र मे क्या महत्त्व है? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए अनेक प्रयोगो की आयोजना की गयी है। कई अन्वेषको ने कोलस्टीरोल के भौतिक विशेषकर कलिल-रासायनिक, गुणधर्मो पर बल दिया है। वे कोलस्टीरोल की वसा के साथ पायस बनाने की, एव कोशिका मे उसकी पारगम्यता की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते है। इन सबधो का और अधिक स्पष्टीकरण होना चाहिए।

"हाल मे एक तथ्य ने रसायनज्ञो एव कायिकीज्ञो का विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट किया है और वह है स्टीरोल का रैकिटिस नाशक (antirachitic) विटामिन से सबंध। रैकिटिस के लिए काडलिवर तेल बडी अच्छी औषध है और यह विटामिन उस तेल के असाबुनीकरणीय भाग मे विशेषरूप से पाया जाता है। जहाँ तक मेरा ख्याल है, जर्मन डाक्टर हुल्डशिन्सकी (Huldschinski) पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने काडलिवर तेल के अलावा रैकिटिस के लिए अति बैजनी प्रकाश से उपविकिरण का औषध रूप मे प्रचार किया। अमरीका के दो वैज्ञानिक—हेस (Hess) और स्टीनबाक (Steenbock)—ने एक दूसरे से स्वतत्र रूप मे बाद को यह ज्ञात किया कि रोगी जीव के उपविकिरण की आवश्यकता नही है, उसको दिये जाने वाले भोजन का उपविकिरण पर्याप्त है। उन्ही वैज्ञानिको ने और लगभग उसी समय दो अग्रेजो (रोजेन हाइम–Rosenheim और वेब्स्टर–Webster) ने लडन मे यह ज्ञात किया कि प्रतिक्रिया-शील पदार्थ खाद्य द्रव्यो के असाबुनीकरणीय भाग मे होता है और वे स्टीरोल है।

१. Lex Prix Nobel en 1928 से अनूदित।

"पहले यह विश्वास किया जाता था कि पौधो, पशुओ और फफूंदी से प्राप्त सब स्टीरोलो को अति बैंजनी प्रकाश से सक्रिय बनाया जा सकता है। भौतिक मापनो और जीवशास्त्र के प्रयोगो से बाद मे यह पता चला कि कोलस्टीरोल और सिटो-स्टीरोल मे सूक्ष्म मात्रा मे एक अधिमिश्रण होता है और यह सक्रिय यौगिक के निर्माण के लिए उत्तरदायी है। कोलस्टीरोल मे से यह अशुद्धि सरलता से पृथक् की जा सकती है। यह दिखा दिया गया है कि फफूंदी से प्राप्त अर्गोस्टीरोल और यह अधिमिश्रण एक ही पदार्थ है, या यदि बिलकुल ठीक-ठीक कहा जाय तो इस अधिमिश्रण का अवशोषण वर्णक्रम और उसके कायिकी लक्षण बिलकुल अर्गोस्टीरोल की भाँति होते हैं।

"अर्गोस्टीरोल का रैकिटिस नाशक विटामिन मे परिवर्त्तन अतिबैंजनी प्रकाश के २५३–३०२ m μ इकाई के तरगदैर्घ्य के बीच मे होता है, ३१३ m μ से अधिक दीर्घ तरगदैर्घ्य वाले एव २४८ से कम तरगदैर्घ्य वाले प्रकाश से कोई विश्वसनीय प्रभाव नही होता।

"सक्रियता—१८३° से० के निम्न ताप पर भी सफल होती है। जीव-शास्त्रीय रूप से (biologically) पर्याप्त सक्रिय (लगभग १।५०,००० मिलीग्राम) मात्रा के उत्पादन के लिए ७०० से १००० अर्ग की आवश्यकता होती है। बहुत देर तक उपविकिरण से विटामिन डी नष्ट हो जाता है।

"बाद मे प्राप्त किये जा सकने वाले उपविकिरण के प्रयोगो के लिए पूर्ण रूप से आक्सिजन का हटाना (जो बहुत कठिन है) ही पर्याप्त नही है, किन्तु इसके लिए, जहाँ तक सभव हो सके सारे विलयन का एक प्रकार से (uniformly) उपविकिरण करना चाहिए। पहले हमने पारद लैंप के चारो ओर लिपटे हुए स्फटिक सर्पिल के बीच मे नाइट्रोजन दाब युक्त अर्गोस्टीरोल के ०. २५ प्रतिशत ऐलकोहलीय विलयन को सक्रिय बनाने का प्रयास किया।

"बाद मे हमने अर्गोस्टीरोल के ईथरीय विलयन को गरम किया जिसमे दुहरी दीवार वाले स्फटिक पात्र मे से शुद्ध नाइट्रोजन आती रहती थी और स्फटिक पात्र के अन्दर मैगनीशियम ध्रुवो के बीच मे विद्युत् चिनगारियो का उत्पादन होता था।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

यद्यपि विनडाउस के कोलस्टीरोल पर कार्य से लैंगिक हार्मोनो के रसायन (दे० पृ० १६३–६५) की नीव पड़ी और यद्यपि आपकी डिजीटैलिस (digitalis) सबधी शोधकार्यों से हृदय के लिए टानिकों और प्रशीतको (sedatives) की टेक्निकल तैयारी

पर प्रभाव पड़ा, तथापि विटामिन डी के उत्पादन के लिए आपकी विधियो का सर्वाधिक उपयोग हुआ। इन अन्वेषणो मे विनडाउस ने कार्बनिक रसायन की विधियो का जीव-शास्त्रीय एव भौतिक विधियो से सामजस्य स्थापित किया। अवशोषण वर्णक्रम और खिलाने के प्रयोगो का सबध शुद्ध रासायनिक प्रतिक्रियाओ से स्थापित किया गया। एक समूह रूप में कार्य करने से जो लाभ होते हैं वे सब स्पष्ट हो गये। इन सूक्ष्म शोध-कार्यो से यह ज्ञात हुआ कि उपविकिरण उपयोगी हो सकते हैं, किन्तु उनका सावधानी से नियत्रण करना चाहिए, क्योकि अधिक उपविकिरण हानिकर भी हो सकता है। अर्गोस्टीरोल के विटामिन मे परिवर्त्तन के लिए थोडी ऊर्जा पर्याप्त है, १ ग्राम पेट्रोलियम के दहन से जो ऊर्जा प्राप्त होती है वह १० ग्राम अर्गोस्टीरोल के परिवर्त्तन के लिए पर्याप्त है। जिस विशिष्ट रूप मे इस ऊर्जा का उपयोग किया जाता है, वह उत्पादित प्रभाव के लिए निश्चयात्मक होती है। बूरडिलन (Bourdillon) ने इस विटामिन को कैल्सीफेराल (calciferol) कहा। विनडाउस ने विटामिन डी के मिश्रण से पृथक् करने के लिए इसे बाद मे विटामिन डी$_2$ कहकर व्यक्त किया। शुद्ध विटामिन का एक औंस ३,००० बालको की एक वर्ष की विटामिन डी की आवश्यकता की पूर्त्ति के लिए पर्याप्त है। बाद के शोध-कार्यो मे खाद्य पदार्थों की विशेषतया दूध की—विटामिन डी की मात्राओ मे वृद्धि करने की सुरक्षापूर्ण एव कुशल विधियाँ प्रतिपादित की गयी है। इनमे उन्ही सिद्धातो का उपयोग हुआ है जिनको विनडाउस ने बताया था। दुग्ध स्टेनलेस इस्पात की नलियो मे नियत्रित धाराओ के रूप मे बहता है। नलियो के बीच मे अतिबैंजनी प्रकाश का लैंप होता है। इस प्रक्रिया मे से वायु सावधानी से हटा दी जाती है।

जिस कार्य से यह सब विकास हुआ और जिसमे वैज्ञानिक एव टेक्निकल दृष्टिकोण से उपयोगी अनेक अध्ययन हुए उसका उपयुक्त मूल्याकन कौन कर सकता है?

१६२६

आर्थर हार्डेन (Arthur Harden)

(१८६५-१६४०)

हन्स फ़ान यूलेर-चेल्पिन (Hans Von Euler Chelpin)

(१८७३)

"शर्करा के किण्वन पर एवं किण्वित एन्जाइमो के अन्वेषण के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

आर्थर हार्डेन का जन्म मैन्चेस्टर, इग्लैण्ड मे हुआ था। आपने १८८८ मे जर्मनी के एरलागेन विश्वविद्यालय से डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। ओवेन्स कालेज, मैन्चेस्टर मे (१८८८–९७) तक आप डिमान्स्ट्रेटर और लेक्चरर रहे। इस अवधि मे आप अध्यापन मे ही व्यस्त रहे। आपने हेनरी रासको (Henry Roscoe–१८३३–१९१५) के साथ पाठ्यक्रम के अनुसार एक बडी सुन्दर पुस्तक लिखी और एफ० सी० गैरेट के साथ व्यावहारिक कार्बनिक रसायन पर एक पुस्तक लिखी। सुरक्षात्मक औषध के जेनर इस्टीट्यूट मे (जो बाद मे लिस्टर इस्टीट्यूट बन गया) आपने १८९७ मे प्रवेश किया। वहाँ आपने विभिन्न जीवाणुओ मे भेद करने के लिए किण्वन की विधि का अध्ययन करना आरम्भ किया। आपने यीस्ट रसो पर भी कार्य किया। जब यीस्ट को गरम जगह मे रखा जाता है तो उसके किण्वो से कोशिकाओ के पदार्थ द्रवित हो जाते है। स्वय-पाचित अथवा आत्म-उत्प्रेरित (autolyzed) यीस्ट रस मे तब भी किण्व का एक एन्जाइम-सकुल (enzyme complex) होता है, जिसे जाइमेज (zymase) कहते है। आत्म-उत्प्रेरित यीस्ट को उबालने से किण्व की सक्रियता नष्ट हो जानी चाहिए, तथापि हार्डेन ने देखा कि उबाली हुई आत्म-उत्प्रेरित यीस्ट को डालने से किण्वन की गति मे काफी वृद्धि हो जाती है। इस सक्रियता-कारक किण्व मे, जिसे हार्डेन ने सह-जाइमेज (Co-zymase) कहा, फास्फोरिक

अम्ल और उसके लवण होते है। क्या सक्रियता उनके कारण होती है? आपने बुख्नेर रस (दे० १९०७ का विवरण) एव शर्करा के मिश्रण मे पोटैसियम फास्फेट डाला और देखा कि कार्बन डाइ-आक्साइड की मात्रा मे बडी वृद्धि हो जाती है। प्रयोगो को और अधिक सूक्ष्म बारीकी से करने पर CO_2 और फास्फेट के सबध को दिखाया जा सका। बाद मे शर्करा (हेक्सोज) और फास्फेट के एक यौगिक का पता चला। स्पष्ट रूप से, अब यह मान लेना चाहिए कि यहाँ कोई विशेष एन्जाइम कार्य कर रहा था। क्योकि उसकी प्रतिक्रिया फास्फेट पर होती थी, अत उसको फास्फेटेज का नाम दिया गया। बाद के शोध-कार्य से पता चला कि इस प्रक्रिया मे कई यौगिक बनते है, इनमे शर्करा ऐलकोहल की भाँति कार्य करती है। जिस प्रकार ऐलकोहल और अम्लो के मिलने से यौगिक, जिनको साधारणतया एस्टर कहा जाता है, बनते है उसी प्रकार ये शर्करा-फास्फेटेज बनते थे।

हार्डेन ने १९३० मे लिस्टर इस्टीट्यूट के जीवन-रसायन भाग के अध्यक्ष पद से अवकाश प्राप्त किया।

अपने व्यावहारिक क्षेत्र मे हार्डेन प्राय अकेले रहते थे, किन्तु बायोकेमिकल जर्नल (Biochemical Journal) के सपादक एव पुस्तको के रचयिता के रूप मे आप वैज्ञानिक जगत् को काफी देते रहे।

यूलेर-चेल्पिन

हन्स फान यूलेर चेल्पिन का जन्म आग्सबर्ग, बवेरिया मे हुआ था। पहले आप कलाकार बनना चाहते थे, विशेषतया, आपने चित्रकला का अध्ययन किया। बाद मे रगो मे अधिक रुचि होने के कारण आप भौतिकी एव रसायन की ओर आकृष्ट हुए। १८९५ मे बर्लिन विश्वविद्यालय से स्नातक होने के बाद आपने नर्न्स्ट (Nernst) की प्रयोगशाला मे भौतिक-रसायन सबधी कार्य आरम्भ किया। १८९७ मे आप एर्‌ही-नियस (Arrhenius) के भौतिकी मे सहायक हो गये। दो ग्रीष्म ऋतुएँ आपने वैट हाफ़ (Vant Hoff) के साथ बितायी—(१८९९ और १९००)। १९०० तक आप स्टॉकहोम मे भौतिक रसायन के लिए निपुण कार्यकर्ता बन चुके थे। १९०६ मे साधारण एव कार्बनिक रसायन के आप वही प्रोफेसर बन गये।

भौतिक रसायन की पृष्ठभूमि मे आपने जीवन-रसायन सबधी कार्य किया, जैसा एरहीनियस महोदय ने किया था। जब रासायनिक परिवर्तन के मार्ग (course) सबधी साधारण नियमो का, एव एक-एक विशिष्ट गुणधर्म के मापन के लिए भौतिक

सिद्धातो तथा यत्रो का जीव मे होने वाले और उनके द्वारा किये गये रासायनिक परिवर्त्तनो की जटिलता और उनके रहस्य को समझने मे उपयोग किया गया, तो नवीन क्षेत्र खुले। इस प्रकार किण्वन एव एन्जाइम रसायन का सबध साधारण रसायन से स्थापित किया जा सका। यूलेर ने इसप द्धति का अपनी पुस्तक (Chemie der Enzyme) 'एन्ज़ाइम का रसायन' मे वर्णन किया है। यह १९१० मे प्रकाशित हुई थी और बाद मे इसके कई सस्करण निकले।

जब यूलेर और उसके साथियो ने यह दिखाया कि एन्जाइम और प्रतिक्रिया किये जाने वाले पदार्थ-सब्स्ट्रेट (Substrate) मे जो रासायनिक बधक होता है, वह वस्तुत अम्लीय (कार्बाक्सिलिक) समूह एव क्षारीय (एमीडो) समूह का बधक होता है तो इस प्रकार की विख्यात रासायनिक बातो से किण्वो की प्रतिक्रिया का रासायनिक अधकार नष्ट हो गया। आपका विशेष ध्यान सह-एन्जाइमो की ओर गया, जो सहायक के रूप मे एन्ज़ाइम के साथ प्रतिक्रिया करते है। हार्डेन ने ऊष्मा मे स्थायी, अथवा कम-से-कम उबालने पर नष्ट न होने वाले, ज़ाइमेज़ के सहएन्ज़ाइम को पृथक् किया था। यूलेर ने इसका शुद्धीकरण किया और उसकी रासायनिक चीर-फाड की। इसका परिणाम यह हुआ कि यह स्पष्ट हो गया कि इस सह-एन्ज़ाइम मे शर्करा और फास्फोरिक अम्ल का एक विशेष एस्टर रासायनिक रूप से प्यूरीन से जुडा होता है और यह मासपेशियो मे पाये जाने वाले यौगिक से सबधित होता है। उसकी सक्रियता 'स' प्रति भार इकाई Co द्वारा आपने सह-जाइमेज (सक्षिप्त रूप Co) के शुद्ध रूप के लक्षणो का वर्णन किया।

इस सह-प्रतिक्रिया की अथवा इस तथ्य की कि जीवन सक्रिय (bioactive) पदार्थ को एक सहायक की आवश्यकता होती है, तुलना रक्षा विज्ञान (immunology) से की जा सकती है। यूलेर ने इन सहायको के विपरीत उन पदार्थो को भी देखा, जो कुछ दशाओ मे एन्ज़ाइम प्रतिक्रिया मे और जहाँ एक-एक पदार्थ के रोकने की क्षमता (inhibiting force) दूसरे निरोधक (inhibitor) के डालने के बाद बिना किसी अनुपात मे बढ़ती जाती है वहाँ विष का-सा कार्य करते है। इसके विपरीत जीवनोपयोगी बडे प्रभाव वाले पदार्थों मे कुछ प्रतिरोधक (counteracting) पदार्थ भी होते है। विटामिन में विटामिन-नाशक होते है और साधारण रूप से यदि सक्रिय पदार्थों को अर्गोन (ergones) कहा जाय तो हम विशिष्ट अर्गोन-नाशक पदार्थों को जान सकते है।

इन विचारो से, जो सदैव अनेको प्रयोगो पर आधारित होते थे, यूलेर खमीर विज्ञान

(enzymology) से औषध एव आनुवशिकता के प्रश्नो पर आये। आपने एन्जाइमो के रसायन पर जो पुस्तक लिखी उसके प्रथम सस्करण के प्राक्कथन मे आपने यह विचार रखा कि इस क्षेत्र मे, अन्य क्षेत्रो की भाँति, सिद्धातो के प्रतिपादन से टेक्निकल आदमियो और डाक्टरो को सहायता मिलेगी। १९२९ मे सिद्धात-प्रतिपादन का व्यावहारिक रूप स्पष्ट हो गया, जब एक नवीन इस्टीट्यूट, स्टाकहोम विश्वविद्यालय का जीव-रासायनिक (Bio-chemical Institute) इस्टीट्यूट, आपके कार्य के लिए समर्पित कर दिया गया। तब से यूलेर उस इस्टीट्यूट के डायरेक्टर है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन

हार्डेन[1]

"यीस्ट से बने पदार्थों से जो किण्वन किया जाता है उनमे एक आकर्षक विशेषता यह है कि उनके द्वारा किये गये किण्वन का वेग उतनी ही यीस्ट द्वारा किये गये किण्वन के वेग से काफी कम होता है। इस प्रकार, बुल्नेर-रस के किण्व का किण्वन वेग, जिस यीस्ट से वह रस बना हुआ है उसके किण्वन वेग की अपेक्षा १/२०–१/४० होता है।

"जब फास्फेट को इस रस मे डाल दिया जाता है, तो किण्वन वेग १० से २० गुना तक बढ जाता है। इस तथ्य से मुझे यह स्पष्ट जान पडता है कि यीस्ट से बने पदार्थ मे किण्वन सकुल का काफी बडा भाग—लगभग आधा भाग—यीस्ट कोशिकाओ की चोट से बच जाता है, किन्तु अकार्बनिक फ़ास्फेट का काफी अश वहाँ नही पहुँच पाता। जीवित यीस्ट से किण्वन करने पर उसके वेग में फास्फेट अथवा आर्सिनेट के डालने से कोई अतर नही होता। इसका कारण यह हो सकता है कि यीस्ट कोशिकाओ मे ही अकार्बनिक फास्फ़ेट पर्याप्त मात्रा मे हो, किन्तु कुछ सदेह इसलिए हो जाता है, क्योकि यह सम्भव है कि ये पदार्थ कदाचित् कोशिकाओ की दीवार को स्वतत्रता से न भेद सके। तथापि, जैसा सम्भवत मालूम पडता है, यह सत्य है कि यीस्ट-रस इत्यादि बनाने की प्रक्रिया मे, फास्फेट के रस मे आने की विधि मे रुकावट पड़ जाती है, अब प्रश्न यह उठता है कि यह रुकावट किस प्रकार पडती है।

"जिस विधि मे वृद्धिकारक पदार्थों को निष्क्रिय बनाने की कम-से-कम सभावना है वह कदाचित् बुल्नेर द्वारा प्रयुक्त की गयी थी। किन्तु इसमे भी यह सभावना है कि वह पदार्थ, यदि उपस्थित है, तो अधिक मात्रा मे उपयुक्त कीसेलगुर द्वारा अवशोषित हो जाय और इस प्रकार निकल जाय।

1. Les Prix Nobel en 1929 से अनूदित।

"कुछ प्रयोग (अभी तक अप्रकाशित) मेरी प्रयोगशाला मे कु० मैक्फारलेन (Miss Mcfarlane) द्वारा किये गये है। इनमे यह जानने की चेष्टा की गयी है कि किस अवस्था पर यह परिवर्त्तन होता है और क्या पीसने अथवा दबाकर निकालने की विधि मे परिवर्त्तन करने से ऐसा रस प्राप्त किया जा सकता है, जिसमें फास्फेटेज अधिक मात्रा मे हो। इन प्रयोगो से जान पडता है कि पीसने की सरल विधि से ही वैसे परिवर्त्तन हो जाते है जैसे बुख्नेर के यीस्ट रस मे पाये जाते है।

"जब बुख्नेर द्वारा प्रयुक्त कीसेलगुर के स्थान पर अन्य पदार्थ लिये गये, तो कुछ थोडे अतर स्पष्ट हुए। उदाहरणतया, $CaCO_3$ के उपयोग से सबसे अधिक सक्रिय रस प्राप्त किया गया, $BaCo_3$ के उपयोग से पूर्ण रूप से निष्क्रिय रस प्राप्त हुआ।

"जब उपयुक्त परिस्थितियो मे अकार्बनिक फास्फेट को डाल कर यीस्ट से बने पदार्थो द्वारा किण्वन किया जाता है, तो ऐलकोहल और CO_2 तीव्र वेग से निकलते है और शर्करा का एक फास्फोरिक एस्टर एकत्र होता रहता है। इस रूप मे प्राप्त फास्फेट की मात्रा डाले गये फास्फेट के कारण (CO_2/PO_4) के एव ऐलकोहल तथा कार्बन डाइआक्साइड की वर्द्धित मात्रा के अनुपात से लगभग समानुपातीय होती है। (यह सत्य है कि क्लूईवेर (Kluyver) और स्ट्रुईक (Struyk) ने इससे निम्न अनुपात प्राप्त किये है, किन्तु इसमे सदेह नही है कि ० ८–१ तक के अनुपातो का प्राय परीक्षण किया गया है।)

"उत्पादित फास्फोरिक एस्टर मे मुख्यतया हेक्सोजडाइफास्फेट होता है, इसका मौलिक वर्णन सबसे पहले मेरे और यग (Young) द्वारा किया गया था। राबिन्सन और मैंने हेक्सोजमानोफास्फ़ेट का भी वर्णन किया है, बाद मे किये गये राबिन्सन के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उसमे दोनो फास्फेटो का मिश्रण हो सकता है। सूखी हुई यीस्ट से बनाये गये पदार्थो (और सभवत. अन्य विधियो से तैयार किये पदार्थो) से एक जटिलता और आ जाती है और वह यह कि डाइसैकेराइड फास्फ़ोरिक एस्टर (ट्रिहैलोज़मानोफास्फेट) भी कदाचित् उपस्थित हो सकता है।

यूलेर-चेल्पिन[1]

"एक निश्चित बधुता के कारण कोई एन्जाइम अपने मूल पदार्थ (Substrate) के साथ सयोग करता है। उदाहरणतया जब अडे की सफेदी का पाचन होता है, तो उसमे एमीनोअम्लो की लबी शृखला बन जाती है, जिनसे मिलकर वह लगभग बनी

1. Les Prix Nobel en 1929 से अनूदित।

है, इसके साथ-साथ दो और उपजात बनते है—यह दो एमीनो-अम्ल है, जो डाइपेप्टाइड कहलाते है।

"डाइपेप्टाइडो के विशेष एन्जाइम होते है—इनको डाइपेप्टीडेजेस (dipeptidases) कहते है। प्रश्न यह उठता है कि डाइपेप्टाइड के किस समूह से एन्जाइम का सबध होता है। यह साधारण तथ्य है कि एन्जाइम के टूटने से जो पदार्थ बनते है उनकी क्रिया बाधक (impeding) होती है, यहाँ यह कार्य एमीनो अम्ल करते है। अब हम लोगो को प्रयोगो द्वारा यह ज्ञात करना था कि बाधक की भाँति कार्य करने के लिए टूटे पदार्थ मे कौन समूह होना चाहिए। जोसेफसन (Josephson) ने एक विशेष डाइपेप्टीडेज के साथ कार्य किया है, उससे हम लोगो को ज्ञात हुआ कि यह समूह एमीनो अम्ल का होना चाहिए।

"जिन परिस्थितियो मे यह बाधक क्रिया होती है और जिनमे एन्जाइम डाइपेप्टीडेजेस के साथ सयोग करता है, उनके अध्ययन से ज्ञात होता है कि एन्जाइम मे जब कार्बाक्सिल समूह जुडा होता है, तो वह मूलपदार्थ से सयोग कर लेता है, इस प्रकार, निश्चित परमाणु-समूहो से एन्जाइम और मूलपदार्थ की बधकता की सर्वप्रथम व्याख्या की गयी।

"सह-एन्जाइम के शुद्धीकरण एव रासायनिक गवेषणा मे हम लोगो को जो अधिक समय और शक्ति लगानी पडी उसका कारण यह है कि सह-एन्जाइम पौधे और पशुओ दोनो मे सर्वाधिक रूप मे मिलते है और ये अधिकतम महत्त्वपूर्ण भी है। सह-जाइमेज को पृथक् करने मे जो कठिनाई है, वह उसकी बहुत अधिक तनुता की है, जिसमे वह प्राप्त होता है। यीस्ट को सबसे अधिक अच्छा पदार्थ माना जाता है, जिससे वह निकाला जा सकता है, यद्यपि इसके एक किलोग्राम मे अधिकतम २० मिलीग्राम सहजाइमेज होता है।

"अनेक शुद्धीकरण विधियो को एक साथ लगाने पर हम लोगो ने अधिकतम सक्रियता का एक पदार्थ बनाया, युक्तियुक्त इकाइयो मे व्यक्त करने पर इसकी सक्रियता 'स' Co=८५,००० है, जबकि आरम्भिक पदार्थ मे 'स' Co=२०० थी। इस पदार्थ को लवण मे परिवर्त्तित किया जा सकता था। लवण मे से जब सहजाइमेज पुनरुत्पादित होता है, तो उसकी सक्रियता मे कोई परिवर्तन नही होता। शुद्धतम पदार्थ की रचना न्यूक्लिओटाइड (nucleotide) की भाँति होती है, इसमे शर्करा का, प्यूरीन का और फास्फ़ोरिक अम्ल का एक-एक अवशेष होता है और इस प्रकार यह ऐडीनिलिक अम्ल से काफी मिलता-जुलता है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

जीवो के जीवन-प्रक्रमो मे फास्फेटो का बडा महत्त्व है। पौधो को उनकी बडी आवश्यकता होती है ओर अब वे खादो के एक महत्त्वपूर्ण अग बन गये है। प्रोटीन, जैसे केसीन, मे फास्फेट होते है और वे हड्डी तथा मूत्र मे भी पाये जाते है। यह ज्ञात था कि वे यीस्ट मे भी होते है, इसलिए उबले यीस्ट-रस मे उनका खोजना स्वाभाविक था। किन्तु इसका हार्डेन की शोध पर इतना अधिक प्रभाव हुआ कि उससे यह ज्ञात हुआ कि शर्करा, किण्वन मे सबसे पहले फास्फेट से सयोग करती है, इससे फ़ास्फेट के जीवन रसायन का स्पष्टीकरण हुआ। एन्ज़ाइम विज्ञान (enzymology) के दृष्टिकोण से यह स्पष्ट था कि मध्यवर्ती यौगिक मे किसी एक तोडने वाले एन्ज़ाइम—फास्फेटेज़—को भी होना चाहिए, किन्तु इसके पहले फास्फेट-सयोगकारक (phosphorylating) एन्ज़ाइम के प्रभाव का भी होना आवश्यक था। पशु-ततुओ मे से, यीस्ट मे से, पौधो मे से और जीवाणुओ मे से फास्फेटेज प्राप्त किया गया, यद्यपि वे इन सबमे समान नही थे। कभी-कभी ऐडीनिलिक अम्ल भी उसकी रचना मे आ जाता था। यद्यपि यह आश्चर्य-जनक प्रतीत होता है कि किण्वन की सरल प्रक्रिया में टूटने के लिए शर्करा को पहले फ़ास्फोरिक अम्ल एस्टर मे परिवर्त्तित होना पडता है, तथापि उसकी शक्ति को पाचनात्मक रूप से उपयोगी बनाने के लिए और अधिक जटिल प्रक्रियाएँ होती है। मूलपदार्थ और एन्जाइम मे फास्फोरिक अम्ल की कई बार अदला-बदली होती है, इसके बाद मासपेशियो को शर्करा से कैलरियाँ मिल पाती है।

पाचन के लिए विशेष रूप से उपयोगी बनाने मे शर्करा फास्फेटो का व्यावहारिक उपयोग हुआ। हेक्सोज़ फास्फेट के कैलसियम लवण पानी मे काफी विलेय है, अत ये शरीर को शीघ्र पाचित हो जाने वाले रूप मे कैलसियम और फ़ास्फोरस दोनो प्रदान कर सकते है।

यह विचार कि एन्ज़ाइम और मूलपदार्थ के बधक द्वारा एन्जाइम प्रतिक्रिया होती है, काफी क्षेत्रो मे मान्य है। इस बधकता की प्रकृति, जिसको यूलेर और जोसेफसन ने अपनी डाइपेप्टाइड के लिए इतनी सरलता से जान लिया था—अन्य दशाओ मे काफी अस्पष्ट है। एन्ज़ाइम से प्रभावित होने के लिए विशिष्ट रासायनिक रचना की आवश्यकता जानने के लिए इस पर और अधिक कार्य करना होगा।

१९३०

हन्स फ़िशर (Hans Fischer)

(१८८१-१९४५)

"हेमीन (Hemin) एवं पर्णहरिम की रचना की शोध के लिए; विशेष रूप से हेमीन के सश्लेषण के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

हन्स फिशर का जन्म माइन (Main) पर स्थित फ्राकफोंट के पास होल्स्ट मे हुआ था। आप औषध और रसायन दोनो मे समान रूप से रुचि रखते थे। मार्बुर्ग विश्वविद्यालय से १९०४ मे आपको रसायन मे और म्यूनिख विश्वविद्यालय से १९०८ मे औषध मे डाक्टर की उपाधि मिली। म्यूनिख मे औषध-क्षेत्र मे कार्य करने के पश्चात् बर्लिन मे एमिल फिशर के इस्टीट्यूट मे आपने रासायनिक कार्य किया। इन्सब्रुक मे आप सन् १९१६ मे औषध रसायन के प्रोफ़ेसर बन कर विनडाउस के उत्तराधिकारी हुए। १९२१ मे कार्बनिक रसायन के प्रोफेसर बन कर आप म्यूनिख लौट आये। आपने इस पद पर शिक्षक, शोध-कार्यकर्त्ता और अपने जीवन के अत मे वैज्ञानिक पत्रो के सपादक के रूप मे कार्य किया।

जब फ़िशर ने रक्त के रग-द्रव्यो पर विस्तारपूर्वक कार्यारम्भ किया तो पौधो के इसी प्रकार के हरे रग द्रव्य की रासायनिक प्रकृति काफी स्पष्ट हो चुकी थी। लाल हेमीन और हरे पर्णहरिम मे एक अजीब समानता थी, पर्णहरिम मे बडे अणु के मध्य मे मैग्नीशियम होता है, हेमीन मे इसी प्रकार से मध्य मे लोह होता है। इन दोनो पदार्थो में बाकी बचे अणु को बिना हानि पहुँचाये मध्य परमाणु को हटाया जा सकता है। हेमीन में जब इस प्रकार सूक्ष्मता से लोह हट जाता है तो उसकी रचना हेमीन के थोडे पूयन (putrefaction) से बने और पोरफ़ायरिन (porphyrin) कहलाये, पदार्थो के समान होती है। तब भी हेमीन से प्राप्त पदार्थों, उनके परिचय एव सबधो के बारे में काफी अनिश्चितता थी। फिशर ने जब पित्त (bile) मे प्राप्त

हेमीन के निम्न (degraded) पदार्थ का अन्वेषण किया, तो उससे हेमीन के रसायन मे सूक्ष्म दृष्टि डालने का पहला अवसर प्राप्त हुआ। पित्त वर्णक (pigment) मे एक बाइलीरुबिन (bilirubin) भी होता है। जैसा कि उसके नाम से स्पष्ट है—सौभाग्यवश, इस क्षेत्र मे अनेक कृत्रिम नामो के बीच मे, कुछ ऐसे अवश्य है जिनके नाम से साधारण गुणधर्मो का कम-से-कम कुछ आशिक सबध होता है—बाइली-रुबिन, यद्यपि यह एक निम्न हेमीन है, लाल होती है। जब ऐसीटिक और हाइड्रो आयोडिक अम्ल से गरम करके इसके अणु को दो टुकडो मे तोडा जाता है, तो इससे एक ऐसा अम्ल प्राप्त होता है, जिसमे हेमीन के अणु का एक भाग वैसा का वैसा ही रहता है। इसकी रचना को जानना और परिचय प्राप्त करना सरल था, यह पायरोल (pyrrole) था, जिसको पहले के रसायनज्ञो ने तैलीय और गधमय रूप मे पशु-पदार्थो को ऊँचे ताप तक गरम करके, उससे बनी तैल वाष्प को सघनित करके, प्राप्त किया था।

इसकी जानकारी डब्लू० कूईस्टर (W Kuster) ने १९१२ मे की थी। इसको आधार बना कर फिशर ने हेमीन के रसायन का अध्ययन आरम्भ किया। बाइलीरुबिन और उससे सबधित यौगिको को सरलता से सश्लेषित किया जा सकता था। चार पायरोल अणुओ की आधारभूत रचना स्पष्ट हुई। पायरोल मे चार कार्बन परमाणु होते है और इनका घेरा नाइट्रोजन परमाणु से पूर्ण होता है। मेथिल, एथिल, प्रोपियोनिक अम्ल और असतृप्त एथिल समूह को (जिसको वाइनिल–vinyl–कहते है और जो प्लास्टिक के उपयोग-कर्त्ताओ को भलीभाँति ज्ञात है) जोड कर इसमे परिवर्त्तन किया जा सकता है। इन समूहो को पायरोल घेरे मे विभिन्न सभावित प्रकार से जोड कर और जिस क्रम मे ये चारो समूह हेमीन मे जुड सकते है, उनसे उसकी क्रमश जाँच की गयी। वाइनिल समूह ने काफी परेशान किया जब तक इसमे हाइड्रोजन जोड कर इसे एथिल-समूह मे परिवर्त्तित नही कर लिया गया। पोरफायरिन में जब इस प्रकार का परिवर्त्तन किया गया, तो उसे मीजोपोरफायरिन कहा गया।

असभावित व्यवस्थाओ को क्रमश हटा कर हेमीन की एक रचना का प्रस्ताव रखा गया और ज्ञात रचना वाले कार्बनिक पदार्थो से आरम्भ करके उसके सश्लेषण को रचना की जाँच के लिए कसौटी बनाया गया।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"रक्त वर्णक हीमोग्लाबिन एक जटिल यौगिक है, इसको इसके भागो—रग-द्रव्य और प्रोटीन–मे कई विधियो से तोडा जा सकता है। रक्त पर ग्लैशियल ऐसीटिक अम्ल

1 Lex prix Nobel en 1930 से अनूदित।

और सोडियम क्लोराइड की प्रतिक्रिया होती है। टाइशमान (Teichmann) ने इस भजन को सूक्ष्मदर्शी मे सबसे पहले देखा था। शालफीफ (Schalfejeff), नेनकी (Nencki), पिलोटी (Piloty) और विल्सटैटर (Willstatter) एव अन्य लोगो ने बडी मात्रा मे इसको बनाने की विधि का विकास किया। इस प्रकार टाइशमान केलास अब किलोग्राम मात्रा मे सुलभ है। स्वीडेन के वैज्ञानिक मोएरनर (Morner) ने इस भजन प्रक्रिया को ऐलकोहलीय गधकाम्ल द्वारा करने की दूसरी विधि भी निकाली थी। इस विधि से हेमीन के एस्टर बनते है।

"हेमीन का सूत्र $C_{34}H_{32}O_4N_4FeCl$ है।
इसमे परमाणुओ का अनेक प्रकार से सयोग हो सकता है। नेनकी, कूईस्टर, पिलोटी, विल्सटैटर, एच० फिशर और उनके विद्यार्थियो ने विश्लेषक निम्नीकरण (analytical degradation) की जिस विधि का विकास किया था, उससे हेमीन की पायरोल-रचना सिद्ध हो चुकी थी। इन विधियो से हेमीन की रचना को समझने मे बडी सहायता मिली। जब हेमीन मे से लोह को हटा लिया जाता है, तो पोरफायरिन बनते है। इन पदार्थो मे (प्रकाश-रासायनिक, Photochemical) सवेदनात्मक (sensibilizing) प्रभाव होते है, जैसा हाउसमान (Hausmann) ने दिखा दिया है।

"ये पोरफायरिन प्रकृति मे काफी वितरित है। कार्य करने के लिए यह अनुमान बनाया गया कि पोरफायरिन का सबध रक्त वर्णक से है, इस अनुमान से कार्यारम्भ किया जा सका। यह आशा की जाती थी कि पोरफायरिन की रचना के निर्धारण के पश्चात् स्वय हेमीन की रचना का ज्ञान होगा, उसी प्रकार जिस प्रकार रक्त वर्णक से जीवशास्त्रीय रूप मे बनी बाइलीरुबिन के निम्नीकरण से प्राप्त पदार्थो द्वारा रक्त वर्णक की रचना का स्वय ज्ञान हुआ था। इसी कारण से मैने प्राकृतिक पोरफायरिनो का क्रमबद्ध अन्वेषण आरम्भ किया, और इसी प्रकार स्वय रक्त वर्णक का जीव-शास्त्रीय निम्नीकरण किया।

"पोरफायरीनूरिया (porphyrinuria) में जो एक साधारण बीमारी है, मनुष्य पोरफायरिन की बडी मात्रा को मूत्र रूप मे विसर्जित करता है। पहले यह समझा जाता था कि इसमे केवल हीमैटोपोरफायरिन (Hematoporphyrin) काम मे आती है, किन्तु यह विचार गलत सिद्ध हुआ। कम-से-कम दो पोरफायरिन—यूरोपोरफायरिन (Uroporphyrin) और काप्रोपोरफायरिन (Coprprphyrin) मूत्र रूप मे विसर्जित होती है, यद्यपि मूत्र मे काप्रोपोरफायरिन अधिक मात्रा मे होती है।

इनमे से एक कदाचित् काप्रोपोरफायरिन का हैमर्सटेन (Hammeraten) ने पहले ही परीक्षण किया था। मूत्र मे उपस्थित काप्रोपोरफायरिन सदैव एक नही होती। हिजमान्स फान देन बर्घ (Hijmans Van den Bergh) ने काप्रोपोरफायरिन के एक समावयव का पहले ही परीक्षण किया था, किन्तु अब तक पोरफायरीनूरिया के केवल एक रोगी मे। कदाचित् यह रोचक हो कि ट्यूरैकस (Turacus) परिवार की अफ्रीकी चिडियो के उडने वाले परो मे यूरोपोरफायरिन होती है, इनमे वह ताम्र के एक सकुल यौगिक के रूप मे होती है।

"यूरोपोरफायरिन से काफी सबधित कानकोपोरफायरिन (conchoporphyrin) होती है जो घोघो के बाह्य आवरण मे कदाचित् कैलसियम लवण के रूप मे होती है। इसकी सूक्ष्म मात्रा साधारण रूप से मूत्र मे और यीस्ट मे होती है। अपर्याप्त उत्पादन (culture) परिस्थितियो मे यीस्ट को अधिक मात्रा मे काप्रोपोरफायरिन बनाने के लिए मजबूर किया जा सकता है। इस प्रकार यीस्ट को पोरफायरीनूरिया की मानवीय दशा में लाया जा सकता है।

"एक पोरफ़ायरिन (ooporphyrin) उन चिडियो के अडे के बाह्य आवरण मे भी होती है जो खुले मे अडे देती है। रक्त वर्णक के पूयन से पोरफायरिन बनती है जो इस ऊपोरफायरिन से मिलती है और जिसको कैमरर की (Kammerer's) पोरफायरिन कहते है। जब पूयन देर तक होता है तो डायट्रो-पोरफायरिन (deuteroporphyrin) बनती है।

ऊपोरफायरिन और प्रोटोपोरफायरिन अथवा कैमरर की पोरफायरिन सब एक ही पदार्थ है। जब ऊपोरफायरिन मे लोह एक जटिल बधक द्वारा लगाया जाता है, तो हेमीन बन जाती है। जब ऊपोरफायरिन के एस्टर को हाइड्रोजन द्वारा अवकृत किया जाता है तो मीज़ोपोरफायरिन बनती है। इसी प्रकार ऊपोरफायरिन के एस्टर को टेट्रामेथिलहीमैटोपोरफायरिन और हीमैटोपोरफायरिन में परिवर्त्तित करना सभव है। निम्न चित्र से ये परिवर्त्तन स्पष्ट हो जाते है, इनमे से कुछ प्रतिवर्त्य (reversible) भी है—

मीज़ोपोरफ़ायरिन

↑

टेट्रामेथिल हीमैटोपोरफायरिन ⇄ ऊपोरफायरिन एस्टर ⇄ हीमैटोपोरफायरिन

↑ ↓

हेमीन एस्टर ,,
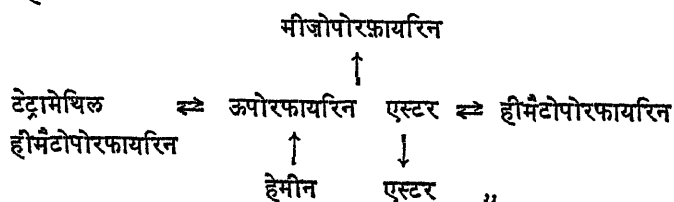
सिद्धांत और व्यवहार पर प्रभाव

हेमीन और पर्णहरिम मे काफी निकट सबध है। फिशर महोदय ने जिन्होने इस सबध की सब बारीकियो को दिखाया, हेमीन के सश्लेषण के बाद पर्णहरिम का सश्लेषण आरम्भ किया। यह कार्य आपकी मृत्यु तक लगभग पूर्ण हो गया। जिस विधि से जीव इन पदार्थों का सश्लेषण करते है, वह अब भी अस्पष्ट है, यद्यपि फिशर महोदय ने ही पायरोल को अमोनिया और ऐसीटिक अम्ल से प्राप्त किया था। हेमीन का पित्त वर्णको, यूरोबाइलिन (urobilin) और काप्रोपोरफायरिन मे निम्नीकरण और उसके रासायनिक परिणाम अब भली-भाति ज्ञात है, क्योकि हेमीन की रचना अब मालूम हो गयी है। हाल मे ही इस शोध-कार्य का जो पर्यवेक्षण (survey) हुआ है, उसका निष्कर्ष यह है,— "नि सदेह, अभी हम लोगो ने इस अध्ययन का केवल आरम्भ किया है।"

रक्त के रगद्रव्य का सश्लेषण भी, जो लबी शोध का अति महत्त्वपूर्ण परिणाम है, हेमीन और प्रोटीन पदार्थ-ग्लाबिन, जिसमे स्वय एमीनोअम्लो के ही १३६ अवशेष है, द्वारा बनाये प्राकृतिक यौगिको के अधिक ज्ञान का आरम्भ है। लाल रक्त-कोशिका मे हीमोग्लाबिन पुन अन्य पदार्थों—शर्करा, वसा, कोल स्टीरीन—के साथ होती है।

रासायनिक इकाई हेमीन जीवशास्त्रीय इकाई हीमोग्लाबिन का केवल एक छोटा भाग है।

१९३१

कार्ल बॉश (Carl Bosch)

(१८७४-१९४०)

फ्रीडरिश बार्गियस (Friedrich Bergius)

(१८८४-१९४९)

"रासायनिक उच्च दाब की विधियो के विकास एवं अन्वेषण द्वारा की गयी आपकी सेवाओ के लिए।"

बॉश

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

कार्ल बॉश को जो कोलोन, जर्मनी, के रहनेवाले थे, यौवन के आरम्भ से ही उन चीजो मे रुचि थी, जो एक आदमी कर सकता है, अथवा अपने हाथो के उपयोग से उनको बना सकता है। स्कूल मे वह अपने साथियो से गणित, भौतिकी एव रसायन मे आगे थे, किन्तु भाषाओ के अध्ययन मे आपको रुचि न थी। अपने योजनामय रासायनिक जीवन की तैयारी के लिए आपने एक वर्ष मशीनो की दुकानो पर व्यतीत किया। शारलाटेनबुर्ग के टेक्नीशे होख्शूले मे आपने मेकैनिकल इजीनियरिग का अध्ययन आरम्भ किया। आप जान विसलिसेनस (Johannes Wislicenus) के निर्देशन मे शुद्ध कार्बनिक रसायन पर शोधप्रबन्ध लिखकर लापजिग (Leipzig) से १८९८ मे स्नातकीय उपाधि प्राप्त की। १८९९ मे आपने बाडिशे ऐनिलिन अड सोडा फ़ाब्रीक (Badische Anilin und Soda Fabrik) मे अमोनिया का सश्लेषण आरम्भ किया। आप बढईगीरी एव यान्त्रिक विधियो से परिचित थे; साथ मे आप इजीनियर और प्रयोगशाला मे कार्य करने योग्य रसायनज्ञ भी थे—फलतः आप अकार्बनिक पदार्थों की तैयारी के लिए किसी भी समस्या को सुलझाने मे पूर्ण रूप से योग्य थे। भवन-निर्माण मे प्रयुक्त धातुओ एव मिश्र-धातुओ के ज्ञान से, दाब एव ताप के नियत्रण के लिए स्वचालित-सूचक यन्त्रो से एवं सुरक्षा-विधियो के विकास से

आप भली-भाँति परिचित थे। इन सबके फलस्वरूप आप फ्रिट्ज हाबेर (Fritz Haber–दे० पृ० ७१) के आविष्कार को प्रयोगशाला से निकाल कर व्यापारिक क्षेत्रो मे ला सके।

बॉश के लिए व्यापारिक सफलता प्राप्त करने के लिए ठोस वैज्ञानिक नीव का होना आवश्यक था। आपने शारलाटेनबुर्ग एव अन्य टेक्नोलाजिकल सस्थाओ मे जिन परिस्थितियो मे इजीनियरिग पढाई जाती थी और जहाँ विज्ञान को गौण स्थान देकर केवल व्यावहारिकता को प्रधानता दी जाती थी, उनकी खूब आलोचना की। आपका मत था कि शुद्ध विज्ञान को व्यवहार मे लाने के लिए कल्पना अथवा दार्शनिक शक्ति की आवश्यकता नही होती, अपितु आधारभूत तथ्यो के क्रमवद्ध एव नियमित ज्ञान की आवश्यकता होती है। उत्प्रेरको के अन्वेपण के लिए आपने सब सुलभ तत्वो और उनके यौगिको से कार्य किया। इस कार्य के लिए तथा कच्चे पदार्थो, शुद्धीकरण एव उपयोगो के अध्ययन के लिए आपने ओपाऊ मे अमोनिया प्रयोगशाला का सगठन किया, इसमे कभी-कभी शिक्षित एव दीक्षित १८० व्यक्ति एव १००० सहायक तक रहे है। मिट्टी, खाद और पौधे सबधी शोधकार्य के सहयोग के लिए आपने प्रयोग करने के लिए एक बडा प्रयोग घर (फेरजूखसन्साल्ट Versuchsanstalt) १९१५ मे खोला, इसके अतिरिक्त आपने जीवन मे नाइट्रोजन के कार्य की खोज के लिए एक "जीव-प्रयोगशाला" खोली।

बॉश ने १९२५ मे कहा कि जर्मनी के वैज्ञानिको को एक लाभ यह है, और वह लाभ अभी तक वर्त्तमान है, कि यहाँ के वैज्ञानिक की नीव काफी मजबूत और चौडी होती है, क्योकि वे अपनी शिक्षा के आरम्भ मे ही विशेष ज्ञान प्राप्त करना (specialization) आरम्भ नही कर देते। विद्यार्थियो को सहायता देने एव वैज्ञानिको को छात्रवृत्ति दिलाने के प्रयास मे आपने काफी प्रमुख भाग लिया। अब आप कैसर विलहेल्म गिजेल-शैफ्ट मे डायरेक्टर के पद पर मैक्सप्लाक के उत्तराधिकारी बने, तो आपके प्रयासो के फलस्वरूप जीव-भौतिकी (Biophysics) के इस्टीट्यूट का सगठन हुआ।

बॉश को तितलियो के पकडने का बडा शौक था। जर्मनी के आई० जी० फ़ार्बेन कपनी के महत्त्वपूर्ण व्यक्ति की हैसियत से आपका जर्मनी के उद्योग-व्यापार क्षेत्रो मे काफी प्रमुख स्थान था, तथापि आपने १९३६ मे (एक भेट मे) कहा कि जब मनुष्य प्रकृति के वैज्ञानिक सपर्क मे आता है तो, "उसे ससार की महान् हृदय-धडकन सुनाई देती है और केवल तब वह इस ब्रह्माड मे अपने को सूक्ष्मतम समझ कर विनीत बनता है।"

बर्गियस

फ्रीडरिश बर्गियस का जन्म ब्रेसलाऊ के समीप गोल्डश्मीडेन, जर्मनी मे हुआ था। यहाँ आप के पिता की एक रासायनिक फैक्टरी थी। १९०७ मे लापजिग विश्वविद्यालय मे किये गये साद्र गधकाम्ल के विलेयक रूप मे अन्वेषण पर आपको डाक्टर की उपाधि मिली। ऐसे क्षेत्र मे कार्य करने के लिए, जिससे भौतिकी और रसायन के क्षेत्रो मे सबध स्थापित होता है, आप बर्लिन में नर्न्स्ट (Nernst) महोदय के पास चले गये। इस बीच मे और कार्ल्सरूहे मे हाबेर की प्रयोगशाला मे व्यतीत थोडे समय मे आप रासायनिक प्रतिक्रियाओ मे उच्च दाब के बढते हुए महत्त्व से प्रभावित हुए। आपने सापेक्ष रूप से नवीन इस क्षेत्र मे कार्य करने का निश्चय किया। १९०९ मे चूने पर उच्च दाब वाली आक्सिजन की प्रतिक्रिया से कैलसियम सुपर आक्साइड बनाने की विधि पर आपने कार्यारम्भ किया। पहले आपने टेक्नीशे होख्शूले मे कार्य किया; इसके बाद अपनी प्रयोगशाला मे। पात्रो और वाल्वो के बनाने की टेक्निकल (प्राविधिक) समस्या को सुलझाना था। आप रासायनिक पदार्थों के उत्पादन के लिए उच्च दाब वाली विधियो का प्रयोग करने लगे। आपकी रुचि नवीन रासायनिक पदार्थों की ओर न होकर उन भली-भाँति ज्ञात रासायनिक पदार्थो की ओर थी, जो भविष्य मे अधिक मात्रा में उपयुक्त होने वाले थे। इस भावी उपयोग के पूर्व दर्शन से तथा इसको उत्पादन-क्षेत्र में लाने की योग्यता से आपको बडा लाभ हुआ।

कोयले पर जल की प्रतिक्रिया से हाइड्रोजन प्राप्त करने की विधि का भविष्य मे काफ़ी प्रयोग होने की सभावना थी। जब बर्गियस का ध्यान भारी तैलो के मोटर के इधन में परिवर्तन की ओर आकृष्ट किया गया, तब आपको यह सूझा कि इसमे उच्च दाब पर हाइड्रोजन मिलाना चाहिए। तेलो के भजन की पुरानी विधि मे जिसमे भारी तेल के अणु छोटे अणुओ मे तोडे जाते है, एक बडा दोष यह था कि भजन के फलस्वरूप एक ओर मेथेन बनती थी और दूसरी ओर कोक, इनके बीच मे इच्छित हलका तेल कम मात्रा मे ही प्राप्त होता था। हाइड्रोजन के डालने से यह दोष दूर हो गया। १९१३ मे बर्गियस महोदय अपना पहला पेटेंट कराने के लिए तैयार थे। जब १९१४ मे युद्ध आरम्भ हुआ तो व्यापारिक मात्रा में हाइड्रोजनीकरण के विकास के लिए आपने एसेन के गोल्डश्मिड्ट सघटन से अपना सबध स्थापित किया। शीघ्र ही लकडी के शर्करा में परिवर्त्तन की समस्या भी योजना में आ गयी, इससे खाद्य समस्या कुछ सुलझ सकती थी। शीघ्र ही काफी साद्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल द्वारा सेल्युलोज पर प्रतिक्रिया करने की विलसटैटर (W1llstatter) की विधि इस नवीन विकास का आधार बन गयी।

जब युद्ध समाप्त हुआ तो उपर्युक्त दोनो विधियो सबधी कार्य पूरा नही हुआ था। प्रयोगशाला एव पाइलट प्लाट (Pilot plant) मे यह जारी रहा। १९२७ मे हाइड्रोजनीकरण का पेटेट आई० जी० फार्बेन को बेच दिया गया। इसके पश्चात् बर्गियस का मुख्य ध्येय लकडी को शर्करा और इसके बाद यीस्ट, ऐलकोहल एव डेक्स्ट्रोज मे परिवर्तन करना रहा। इस कार्य के फलस्वरूप दूसरे विश्वयुद्ध के समय जर्मनी को पर्याप्त मात्रा मे कार्बोहाइड्रेट और खाद्य पदार्थ मिलते रहे।

आपने एथिलीन गैस से एथिलीन ग्लाइकाल और क्लोरीन युक्त बेजीन से फिनोल बनाने की विधियो का आविष्कार किया। बाद मे इनका व्यापारिक उत्पादन मे उपयोग हुआ; किन्तु इस कार्य से आप अलग रहे।

यद्यपि बर्गियस अपने कार्य की रासायनिक एव औद्योगिक प्रगति मे काफी रुचि लेते रहे, तथापि आपका प्रमुख काम इन योजनाओ मे धन लगाने का ही रहा। मोटर-इधन, ऐलकोहल एव खाद्य पदार्थों का बडा आर्थिक महत्त्व है। स्वार्थता से परे रहकर एव दूरदर्शी बन कर बर्गियस ने नये औद्योगिक पदार्थों को राष्ट्र मे उपयुक्त स्थान दिलाने को ही अपना लक्ष्य बनाया।

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद आप आस्ट्रिया चले गये। इसके पश्चात् विभिन्न सरकारो के निमत्रण से आप स्पेन और अर्जेन्टाइना गये और वही आपकी मृत्यु ब्यूनस-आयर्स मे हुई।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

बॉश[1]

"हम लोगो ने हाबेर द्वारा प्रयुक्त उपकरण से ही आरम्भ किया · इसमें कई दोष थे, अत इसमे अनेक परिवर्तन करने पडे। अपने नये रूप मे इस उपकरण के २४ भाग बिना किसी रुकावट के दिन-रात वर्षो तक कार्य करते रहे। इस प्रकार हमने उपकरण की दक्षता को बढाने के लिए अनेको उत्प्रेरको का उपयोग किया। प्रयोगो की सख्या क्रमश २०,००० हो गयी।

"हम लोगो ने एक उपकरण ऐसा बनाया जिसमे चक्रण पम्प (circulation pump) अमोनिया पृथक्कारी और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण एव रोचक एक संस्पर्श नली (contact tube) थी। नली की दीवार लगभग ३० मि० मी० मोटी थी।

"मनेसमान (Mannesmann) ने जो दो सस्पर्श नलियाँ बनायी थी, वे केवल

1 Les prix Nobel en 1931 से अनूदित ।

८० घटे तक कार्य कर सकती थी। इसके बाद वे फट जाती थी। यदि हम उनमे नवीन उत्प्रेरक के स्थान पर आसमियम भर देते तो अब तक हमने जितना आसमियम खरीदा है, सबका सब इसी मे लग जाता।

"जो धातु भुरभुरी बन जाती थी, उसके अन्वेषण से ज्ञात हुआ कि उसमे नाइट्रोजन की सूक्ष्मतम मात्रा भी न थी। धातु-विज्ञान शोध (metallographic research) से इसकी व्याख्या की जा सकी। उस समय तक इस शोध का महत्त्व रासायनिक इजीनियरो को प्राय अज्ञात था, किन्तु मै यह जानता था, क्योकि मैने अपना जीवन धातु-वैज्ञानिक के रूप मे आरम्भ किया था।

"हम लोगो ने लोह मे हाइड्रोजन के व्यापन (diffusion) से आरम्भ किया। इससे पर्लाइट (perlite) का विकार्बनीकरण (decarbonization) होता था, किन्तु इसमे लोह-हाइड्रोजन के बनने को रोका नही जा सकता था। अत उपकरण के निर्माण मे कुछ परिवर्त्तन ऐसा करना था जिससे यह दोष दूर हो सके। सस्पर्श नली की दीवार के दो काम होते हैं—उच्च दाब वाली गैस के दाब को सँभालना और गैस न आ जा सकने वाले स्थान को बनाना। यह कैसे सभव है यदि इन दोनो कार्यो को पृथक् कर दिया जाय, और निर्माण के लिए प्रयुक्त विभिन्न तत्त्वो को इसके लिए दोषी ठहराया जाय? किन्तु यह कार्य शीघ्र ही पूरा किया जा सका। इस सिद्धात पर बनी पहली प्रयोगात्मक ऊष्मक (तन्दूर—Oven) से ही स्पष्ट हुआ कि यह विचार सही था। पुरानी समस्या का हल इस प्रकार किया गया—दाब को सह सकने वाले आवरण के साथ नरम लोहे की एक अधिक पतली दीवार बनायी गयी। इसके फलस्वरूप हाइड्रोजन, केवल जिसका ही अधिक पतली सतह से व्यापन होता है, वह बिना किसी दाब के निकल जाती है और इस प्रकार प्रतिक्रिया के ऊँचे ताप पर इस्पात के बाहरी आवरण पर कोई प्रतिक्रिया नही हो पाती।

"आरम्भ मे ऊँचे दाब के सपीडको के लिए बडी कठिनाई का सामना करना पडा। उस समय तक केवल हवा के लिए बडे सपीडको का प्रयोग होता था। ऊँचे दाब के ये सपीडक केवल कुछ बडे आकार के ही बन पाते थे। सामग्री रखने वाले बक्सो की ओर थोड़ा ही ध्यान दिया गया था। वायु के साथ क्षरण क्रातिक नही होता था और ऐसा समझा जाता था कि कुछ देर के लिए प्रतिक्रिया का रुकना बचाया नही जा सकता था। हाइड्रोजन और कोमल सस्पर्श-विधि के साथ परिस्थिति बिलकुल भिन्न थी। बहुत सालों तक कार्य करने के बाद हम लोग इसमें सफल हुए। हम लोगो ने छोटे सपीडको से कार्य आरम्भ किया था, जो आधे दिन तक ही बिना किसी रुकावट के चलते

रहते थे। इसके बाद ३००० अश्व शक्ति वाले एकत्रण (aggiegates) हम बना सके जिन्हे विश्वसनीय रूप से ६ मास तक चलाया जा सकता था।

• "जब मैं यह कहता हूँ कि इस टेक्निकल विधि मे लाभ तभी हो सकता है, जब यह बिना किसी रुकावट के समान रूप से चलती रहे, तो इसमे कोई अतिशयोक्ति नही है। नियत्रण करने वाले यत्रो मे इस उद्देश्य-सिद्धि मे काफी सहायता मिली। हम लोगो ने आरम्भ से ही इस पर काफी ध्यान दिया था क्योकि ऊष्मक मे होने वाली प्रतिक्रियाओ को तभी जाना जा सकता था, जब वे किसी प्रकार से बाहर व्यक्त होती रहे। आज के लिए ये सब साधारण बाते हैं और इसमे प्रयुक्त बहुत-सा सामान व्यापारिक क्षेत्रो मे सुलभ है। पहले हम लोगो को स्वय इसे बनाना पडा और इसका परीक्षण भी करना पडा।"

बर्गियस[1]

"१९१० मे ही लुडविग लैंड्सबर्ग (Ludwig Landsbeig) ने मुझसे कहा था कि मैं भारी तेलो ओर तेल-अवशेषो के भजन से गैसोलीन प्राप्त करने की समस्या पर कार्य करूँ। विशेषज्ञ उस समय यह बता सकते थे कि मोटर के कार्य मे प्रगति होने से गैसोलीन की खपत मे काफी वृद्धि हो जायगी, यद्यपि उस समय यह अनुमान कोई नही कर सकता था कि यह वृद्धि कितनी होगी। उस समय की भजन-विधियो मे कोई भी दक्षता न थी।

"उच्च ताप द्वारा ढीले पडे हुए उच्च क्वथनाक वाले पेट्रोलियम की आणव रचना मे उच्च दाब वाली हाइड्रोजन को मिलाने का हमने प्रयत्न किया। पहले ऊर्ध्वाधर आटोक्लेवो (autoclaves पतीलो) मे किये गये प्रयोगो से यह स्पष्ट रूप से ज्ञात हुआ कि भजित तेलो मे हाइड्रोजन की मात्रा मे निश्चित वृद्धि हो जाती है, इस प्रक्रिया मे कोक नही बनता और जो नये हलके तेल बनते है, वे कुछ कम असतृप्त होते है।

"यह शीघ्र ही स्पष्ट हुआ कि जिन ताप परासो मे हाइड्रोजन ठीक से प्रक्रिया करती है वह काफी सकीर्ण है।

"भारी तेलो के हाइड्रोजनीकरण के लिए ताप और दाब की जो परिस्थितियाँ है, वे प्राय कोयले की भाँति है। चूँकि दोनो दशाओ मे यह आवश्यक है कि हाइड्रोजनीकरण किये जाने वाले द्रव अथवा आलम्बन का हाइड्रोजन से भली-भाँति सस्पर्श हो, अतः हम लोगों ने यह मान लिया कि तेल के हाइड्रोजनीकरण के लिए जो उपकरण उपयोगी

1. Lex Prix Nobel en 1931 से अनूदित।

है वह कुछ थोडे और यत्रो के साथ कोयले के द्रवीकरण के लिए भी उपयोगी हो सकता है। दोनो विधियो मे यह आवश्यक था कि ठोस पदार्थों को प्रतिक्रिया होने वाले कक्षो (chambers) मे डाला जाय—तेल के हाइड्रोजनीकरण मे विगधकीकरण (desulfuring) के लिए लोह आक्साइड को डाला जाता है, कोयले के हाइड्रोजनीकरण मे पूरे कच्चे पदार्थ को डालना था। यह आरम्भ से ही स्पष्ट था कि उच्च दाब कक्ष मे ठोस के डालने मे और अवशेषो के हटाने मे काफी कठिनाइयाँ सामने आयेगी। इस टेक्निकल समस्या के सतोषजनक हल के लिए कई वर्षो के कार्य की आवश्यकता थी।

"दाब-पात्र के अदर वाले भाग को गरम करने के लिए एक दूसरी दाबयुक्त नली को डालना पडा, जिसकी दीवार आपेक्षिकतया पतली थी। प्रतिक्रिया-क्षेत्र के दाब से नीचे करके गरम करने वाले माध्यम को दोनो नलियो की सँकरी जगह मे से भेजना पडा।

"नये बने पदार्थो को जितनी शीघ्रता से प्रक्रम से हटा लिया जाता है, भजन-प्रक्रिया उतनी ही शीघ्र और जल्दी होती है। इसलिए हाइड्रोजन की काफी अधिक मात्रा प्रयुक्त की गयी। हाइड्रोजन को चक्रण मे रखना था। हाइड्रोजन गैसीय एव द्रवीय पदार्थों के साथ प्रतिक्रिया पात्र से बाहर निकलती थी। जब तेलो को सघनित किया जाता था, तो वह पृथक् हो जाती थी। तेल में विलेय मेथेन के अधिकतर भाग से भी वह पृथक् होती थी। तब वह चक्रण पम्प द्वारा प्रतिक्रिया के लिए पुन वापस भेज दी जाती थी।

"औसतन, खपने वाली हाइड्रोजन का भार कोयले के भार का ५% था। और अधिक हाइड्रोजन को भेज कर आरभिक पदार्थो से अधिक प्रतिक्रिया कराने मे और इस प्रकार उच्च क्वथनाक वाले तेलो के स्थान पर निम्न क्वथनाक वाले तेलो की मात्रा को बढाने मे कोई कठिनाई न थी। आर्थिक दृष्टिकोण से विचार करने पर ज्ञात होगा कि कोयले और उसके द्रवीभूत पदार्थो के हाइड्रोजनीकरण के लिए कितनी हाइड्रोजन का उपयोग किया जाय।

"गैसीय पदार्थो—मेथेन और एथेन—से उच्च ताप पर जल-वाष्प की प्रतिक्रिया से हाइड्रोजन और कार्बन डाइ आक्साइड का उत्पादन किया जा सकता है। कुछ समय तक इस प्रतिक्रिया को हम सफल रूप से कर सके है। प्रतिक्रिया के लिए हाइड्रोजन की आवश्यक मात्रा प्राप्त करने के लिए इस विधि से मेथेन-एथेन मिश्रण के थोडे भाग का परिवर्त्तन पर्याप्त है। हाइड्रोजन से अधिमिश्रित कार्बन डाइ आक्साइड को गैसो को दबा कर उच्च दाब के जल द्वारा सरलता से पृथक् किया जा सकता है।

हाइड्रोजन-उत्पादन का यह सिद्धात, जहाँ तक मुझे मालूम है, अब अमरीका मे तेलो के हाइड्रोजनीकरण के लिए प्रयुक्त होता है।

"अकार्बनिक पदार्थो से भारी तेलो को पृथक् करने मे काफी दिक्कते आयी । जितना अधिक हाइड्रोजनीकरण हो जाता है, पृथक् करने मे उतनी ही कम कठिनाइयाँ होती है।

"कोयले के तेल के भारी भागो से अच्छे स्नेहक तेलो की तैयारी सभव हो सकी।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

नोबेल पुरस्कार-प्राप्ति के अवसर पर किये गये डा० बॉश के भाषण मे जिस टेक्निकल विकास का उल्लेख है वह अमोनिया के उत्पादन से आरम्भ होता है। बाद मे उच्च दाब प्रतिक्रियाओ के फलस्वरूप बने अन्य पदार्थो के बनाने मे भी इसका विस्तार हुआ। बराबर प्रयत्न करते रहने से विशेष धातु-मिश्रण बने और प्रतिकारक (Reactor) निर्माण का सिद्धात निकला, विशिष्ट सक्रियता वाले उत्प्रेरक बने तथा गैस सपीडको मे सुधार हुए और महत्त्वपूर्ण प्रक्रम खडो (factors) के नियत्रण के लिए सूचको और नियत्रको का एक नया विज्ञान बना। इस दिशा मे जो प्रगति हुई है, उसका पता सश्लिष्ट अमोनिया की दी हुई मात्रा में उपयुक्त इस्पात के आँकडो से लग सकता है। १९१३ मे यह सख्या २७ थी, अगले दो वर्षों मे यह गिरकर ११ और ६ रह गयी, १९२४ मे यह केवल ३ ६ थी और १९२७ मे सख्या इसकी भी आधी रह गयी।

इसी आधार पर कार्बन मोनो-आक्साइड और हाइड्रोजन से मेथेनाल का सश्लेषण सभव हुआ। १९२३ तक केवल लकडी के आसवन से ही यह ऐलकोहल प्राप्त होता था। जब आई० जी० फार्बेन कपनी ने सश्लिष्ट ऐलकोहल का निर्माण और उसको यूनाइटेड स्टट्स में भेजना आरम्भ किया, तो ऐसा ज्ञात हुआ कि लकडी के आसवन का उद्योग प्राय समाप्त हो जायगा। किन्तु यह बच गया, यद्यपि सश्लिष्ट ऐलकोहल की तुलना मे इससे केवल ३ प्रतिशत ऐलकोहल बनता था। १९३१ मे बॉश ने जर्मनी के वार्षिक ४०,००० टन के ऐलकोहलीय उत्पादन की ओर सगर्व सकेत किया। १९४६ मे इस विधि से यूनाइटेड स्टेट्स मे लगभग २,५०,००० टन मेथेनाल बना था।

इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण सश्लेषण अमोनिया और कार्बन डाइ आक्साइड द्वारा यूरिया का है। यूरिया एक सरल खाद है; इसमे नाइट्रोजन मान अधिक होता है। सश्लिष्ट रेज़ीन की तैयारी भी इसी से होती है, रेज़ीन का उपयोग ढाँचे बनाने और सरेस के रूप में काफ़ी अधिक होने लगा है।

तेल और कोयले के हाइड्रोजनीकरण पर कार्य बर्गियस सघटन मे १९१०–१९५२ तक हुआ। जब आई० जी० कपनी ने इसको हाथ मे लिया, तो उत्प्रेरक प्रभावो पर विशेष रूप से अन्वेपण किया गया। मेथेनाल के सश्लेषण मे प्राप्त काफी अनुभव इसके लिए उपयोगी हुआ। भारी तेलो के हाइड्रोजनीकरण की गति काफी बढायी जा सकती थी और कुछ चुने-चुने उत्प्रेरको के उपयोग से विशिप्ट पदार्थ बनाये जा सकते थे। गधक के जो खनिज तेलो मे सदैव मिलती है, विपैले प्रभाव से बचने की समस्या का भी हल हो गया। उच्चतम "आक्टेन सख्याओ" को प्राप्त करके उत्प्रेरक हाइड्रोजनीकरण से मोटर इधनो की दक्षता को काफी बढाया जा सका।

बर्गियस ने जो पहला अनुमान लगाया था उसके अनुसार उन्होने घोषणा की थी कि सरलता से हाइड्रोजनीकरण किये जा सकने वाले कोयलो और शीघ्र प्रतिक्रिया न होने वाले कोयलो मे कार्बन की मात्रा महत्त्वपूर्ण है, उसे ८५% से कम न होना चाहिए। अब यह ज्ञात हुआ है कि कार्बन की मात्रा से ही विभिन्न कोयलो मे भेद नही किया जा सकता, हाइड्रोजन और आक्सिजन का अनुपात, कोयले की आयु, उसकी किस्म आदि का उसकी हाइड्रोजन प्रतिक्रिया पर काफी प्रभाव पडता है।

पिछले विश्वयुद्ध के समय इग्लैण्ड और जर्मनी मे जितने मोटर ईधन का उत्पादन हुआ उसका काफी भाग हाइड्रोजनीकरण विधि से प्राप्त हुआ। हाल मे ही, कुछ ऐसे प्रयोग आरम्भ हुए है जिनसे काफी अधिक परास मे कोयले के हाइड्रोजनीकरण के लिए उपयुक्त ताप और दाब की परिस्थितियो का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

१९३२

अरविंग लैंग्म्यूर (Irving Langmuir)

(१८८१-१९५७)

"सतह रसायन (Surface chemistry) में अन्वेषणो एवं आविष्कारों के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा[1]

"अरविंग लैंगम्यूर का जन्म ब्रूक्लिन, न्यूयार्क मे ३१ जनवरी १८८१ को हुआ। ब्रूक्लिन के सार्वजनिक स्कूल मे आपकी आरभिक शिक्षा १८९२ तक हुई। उसी वर्ष आप अपने माता-पिता के पास पेरिस चले गये। वहाँ आपने फासीसी स्कूलो मे तीन वर्ष तक पढा। १८९५ के अत मे आप यूनाइटेड स्टेट्स वापस आ गये और फिलाडेलफ़िया की चेस्टनट हिल अकदमी मे प्रविष्ट हुए। इसके दूसरे वर्ष आप प्राट इस्टीट्यूट हाई-स्कूल मे पढने के लिए पुन ब्रूक्लिन वापस आ गये। इस इस्टीट्यूट मे अध्ययन समाप्त करने के बाद आपने कोलम्बिया विश्वविद्यालय के खानो के स्कूल (School of mines) मे प्रवेश किया। यहाँ से आप १९०३ मे स्नातक हुए और आपको धातु-विज्ञान के इजीनियर की उपाधि मिली। स्नातक होने के बाद आपने प्रोफेसर नर्न्स्ट की सरक्षता मे गाटिन्जेन विश्वविद्यालय मे कार्यारम्भ किया। १९०६ मे आपको एम० ए० और पी० एच० डी० की उपाधि मिली। आपका मुख्य विषय भौतिक रसायन था।

"अमरीका लौटने पर डा० लैंगम्यूर होबोकेन, न्यूजर्सी मे टेक्नालाजी के स्टीवेन्स इस्टीट्यूट मे रसायन के प्रशिक्षक हो गये। यहाँ आपने १९०९ तक पढाया। तत्पश्चात् आपने जनरल इलेक्ट्रिक कपनी की शोध-प्रयोगशाला मे प्रवेश किया और इस समय आप उसके सहायक डायरेक्टर रहे।

"डा० लैंग्म्यूर ने रसायन, भौतिकी एव इजीनियरिंग के क्षेत्रो मे शोध-कार्य किया है, अधिकतर यह कार्य निर्वात घटनाओ (vacuum phenomena) से सबधित है।

1 Lex Prix Nobel en में आत्मकथा से।

इन रासायनिक एव भौतिक घटनाओ मे आणव एव परमाणव रीति (mechanism) को ज्ञात करने के लिए आपने अधिशोषित फिल्मो और सतहो के गुणधर्मो का आधारभूत अन्वेषण किया, आपने उच्च निर्वात मे और निम्न दाब पर गैसो के विद्युत्-विसर्जन की प्रकृति पर भी कार्य किया।

"डाक्टर लैंगम्यूर ने वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओ मे लगभग १५० रचनाएँ प्रकाशित करायी। निम्न दाब, रासायनिक प्रतिक्रियाओ और अधिशोषण घटना पर प्रकाशित आपकी रचनाओ की सूची नोबेल भाषण के अत मे दी हुई है। दूसरे क्षेत्रो मे आपके प्रकाशन के कुछ विषय ये हैं—ऊष्मा वहन, टगस्टन तन्तु और लैम्प, धातु के वाष्प दाब एव उद्वाष्पन का वेग, उच्च निर्वात पर विद्युत्-विसर्जन, गैसो मे विद्युत्-विसर्जन, उच्च निर्वात पम्प, परमाणु रचना और सयोजकता एव अन्य साधारण विषय।"

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"**टंगस्टन पर थोरियम**—जब १ प्रतिशत ThO_2 मिली टगस्टिक आक्साइड को २८००° तक या और अधिक ताप तक गरम किया जाता है तो टगस्टन का एक तन्तु बनता है और इसके एक सूक्ष्म भाग मे थोरिया धातविक थोरियम मे अवकृत हो जाता है। तन्तु मे थोरियम सूक्ष्म गोलाकार कणो के रूप मे रहता है। ये टगस्टन केलास की सीमा पर न होकर उन केलासो के बीच मे इधर-उधर बिखरे रहते है, यदि तन्तु को १९००–२०००° k तक फिर कुछ मिनटो के लिए गरम किया जाय तो जो थोरियम धातु उच्च ताप पर बनी थी वह पुन व्यापन करके तन्तु की सतह पर आने लगती है और सतह पर गति होने के कारण पूरी सतह पर फैल जाती है, इसके फल-स्वरूप थोरियम परमाणुओ की एक-परमाणव फिल्म तन्तु पर बन जाती है। २०००° पर उद्वाष्पन का वेग इतना कम होता है कि शीघ्र ही पर्याप्त थोरियम पूरी एक-परमाणव फिल्म को बना लेता है। यदि ताप २२००° अथवा २४००° तक बढा दिया जाय, तो सतह पर से उद्वाष्पन का वेग इतना बढ जाता है कि व्यापन के फलस्वरूप अदर से आने वाले थोरियम के परमाणुओ की सख्या उद्वाष्पन के फलस्वरूप जाने वाले परमाणुओ की सख्या से काफी कम हो जाती है। इस प्रकार सतह का वास्तविक साद्रण काफी कम हो जाता है।

"अधिशोषित पटल की थोरियम मात्रा मे यह परिवर्त्तन प्रामाणिक निम्न ताप पर तन्तु के इलेक्ट्रान उत्सर्जन के मापन के अध्ययन से ज्ञात किया जा सकता है। इस ताप

1. Lex Prix Nobel en 1932 से अनूदित।

को परीक्षात्मक ताप कहते हैं। यह इतना नीचा रखा जाता है, जिससे व्यापन अथवा उद्वाष्पन के फलस्वरूप सतह पर कोई विशेष परिवर्त्तन न हो। सुगम ताप १५००° है। ताप पर अधिशोषित थोरियम के सतह पर होने के कारण सतह का इलेक्ट्रान उत्सर्जन, शुद्ध टगस्टन सतह की अपेक्षा १०⁵ गुना तक अधिक हो जाता है।

"**जल पर तेल की फिल्म**—जब एक शुद्ध सतृप्त द्रव-हाइड्रोकार्बन जल पर रखा जाता है, तो वह जल पर बूँद अथवा लैन्स के रूप मे रहता है, इससे उसके चारो ओर के जल के तल-तनाव पर कोई प्रभाव नही होता। तथापि, यदि किसी अविलेय वसीय अथवा तैलीय पदार्थ को, जैसे पशु अथवा पौधो से प्राप्त साधारण तेल को, शुद्ध जल पर रखा जाय तो वह फौरन ही सतह पर पतली फिल्म के रूप मे दौड जाता है। यदि सतह पर की गति को अबरक का चूर्ण बुरक कर देखा जाय तो यह दिखाई देता है कि थोडा-सा तेल पटल के एक निश्चित क्षेत्र को बनाने मे समर्थ होता है, यदि कभी-कभी क्षेत्र निश्चित मान से बढ जाता है, तो उस बढे क्षेत्र मे जल के तल-तनाव पर कोई अतर नही होता। कई अविलेय कार्बनिक पदार्थो की तुलना से ज्ञात हुआ है कि यह फैलने की प्रवृत्ति कार्बनिक अणु मे उपस्थित कुछ सक्रिय समूहो अथवा मूलक पर निर्भर होती है, ये समूह वैसे होते हैं जो जल मे कार्बनिक पदार्थो की विलेयता को बढाते हैं। उदाहरणतया, पेन्टेन C_5H_{12} जल मे प्राय अविलेय है, पर एमाइल ऐलकोहल $C_5H_{11}OH$ सापेक्ष रूप से विलेय है। कार्बनिक अणु के OH समूह जल के अणुओ के OH समूह पर तीव्र आकर्षक प्रभाव डालते हैं और यह प्रभाव विलेयता की वृद्धि से स्पष्ट होता है। इसी प्रकार कार्बाक्सिल-समूह COOH निम्न वसीय अम्लो को उसी के हाइड्रोकार्बनो की अपेक्षा जल मे अधिक विलेय बनाता है।

"उच्च अणुभार वाले हाइड्रोकार्बन, जैसे $C_{18}H_{38}$ जल मे बिलकुल अविलेय हैं। यदि $C_{18}H_{38}$ की शृखला के अत मे CH_3 समूह के स्थान पर कार्बाक्सिल समूह आ जाता है तो अणु का एक भाग जल मे घुलने का प्रयत्न करता है, पर उसके दूसरे भाग मे हाइड्रोकार्बन की अविलेयता वर्त्तमान रहती है। जल की सतह पर फैलने-से इस प्रकार के अणुओ के कार्बाक्सिल समूह बिना एक दूसरे से पृथक् हुए जल के सपर्क मे आते हैं।

"इस प्रकार से बनी तैलीय फिल्म मे पास-पास सटे हुए अणुओ की जल की सतह पर एक फिल्म होनी चाहिए। यदि फैल जा सकने वाले सीमित क्षेत्र की तुलना मे वसीय अम्ल आवश्यकता से अधिक होता है तो कार्बाक्सिल-समूहो के जल के सपर्क मे आने का प्रयास इतना अधिक होता है कि सतह पर उनकी भीड़ लग जाती है और वे

एक-दूसरे से मिलकर प्राय सीधे खडे हो जाते है। इस दशा मे एक अणु उतना स्थान घेरता है जितना कि हाइड्रोकार्बन शृखला का क्रास सेक्शन (cross section) होता है अथवा अणु के केवल सर का भाग, जो जल के सपर्क मे रहता है और क्रास सेक्शन से अधिक बडा होता है। फिल्म की मोटाई हाइड्रोकार्बन-शृखला की लम्बाई के बराबर होती है।

"**सतहो की उत्प्रेरक क्रिया**—१५००° तक ऊष्मित टगस्टन पर आक्सिजन की एक-परमाणव फिल्म सब प्रतिक्रियाओ के लिए उत्प्रेरक विप का सा काम करती है; इसकी अनुपस्थिति मे टगस्टन उत्प्रेरक की भाँति कार्य कर सकता था। इस प्रकार आक्सिजन की अति सूक्ष्मतम मात्राएँ भी १५००° K पर हाइड्रोजन के विघटन (dissociation) तथा अमोनिया, मेथेन अथवा सायेनोजन के विच्छेदन को रोक देती है। आक्सिजन के प्रभाव से सारी सतह ढक जाती है जिससे दूसरी गैसे टगस्टन की सतह से सस्पर्श नही कर पाती।

"इसी प्रकार प्लैटिनम सतहो पर हाइड्रोजन और कार्बन मानो-आक्साइड उत्प्रेरक विषो का-सा काम करते है। जिस वेग से प्लैटिनम कार्बन मानो-आक्साइड और आक्सिजन से सयोग करता है, वह आक्सिजन के दाब से सीधे रूप से समानुपाती किन्तु मानो-आक्साइड के दाब से प्रतिलोमानुपाती होता है। प्रतिक्रिया का वेग प्लैटिनम सतह के उस अश पर निर्भर होता है जो कार्बन मानो-आक्साइड के अधिशोषित अणुओ से ढका नही होता। इन खाली स्थानो मे आक्सिजन के जो अणु अधिशोषित हो जाते है, और इस प्रकार उनका अधिशोपण प्लैटिनम से हो जाता है वे अपने पास वाले कार्बन मानो-आक्साइड के अणुओ से प्रतिक्रिया करते है।"

सिद्धांत और व्यवहार पर प्रभाव

जल, शीशे और धातुओ की सतहो पर विशेष बल प्रदर्शित होते है। ऐसा मालूम होता है कि एक पदार्थ अचानक अपनी सीमा पर अपनी सतह से ही समाप्त नही हो जाता, किन्तु उसे अपने वातावरण से सपर्क स्थापित रखना पडता है। यद्यपि सतह पर स्थापित ये बल कोमल होते है, तथापि वे बडे महत्त्वपूर्ण है। हमारे कायिकी प्रक्रमो का आधार इन सतहों की पारस्परिक क्रिया ही है। सतहो पर होने वाली प्रतिक्रियाओ का औद्योगिक रूप से भी बडा महत्त्व है। हम लोग जिन मोटर ईधनो का उपयोग करते हैं उनमें से अधिकतर ईंधनो का नियत्रण बाहरी तौर से अक्रिय पर विशिष्ट सतह-प्रतिक्रिया करनेवाले पदार्थों से ही होता है।

लैंग्म्यूर ने यह शोध-कार्य विद्युत् लैम्प मे प्रयुक्त धातु के तारो से आरम्भ किया था। इस कार्य के फलस्वरूप तापदीप्त लैम्प अधिक दिनो तक चलते है और अधिक विद्युत्-ऊर्जा को प्रकाश मे परिवर्त्तित करते है।

जल-अविलेय पदार्थों के जल पर फैलने के लैंग्म्यूर द्वारा किये गये अन्वेषण के फलस्वरूप शीशे की सतह से परावर्त्तित प्रकाश की मात्रा को कम किया जा सका है। इस प्रकार चकाचौध से बचाने के लिए उसके व्यावहारिक उपयोग हमारे सम्मुख आये है।

हाल मे ही लैंग्म्यूर ने इस सतह-शोध को बादलो से जल-बूंदो के बनाने मे भी लगाया है। जब बादल मे एकत्रण बिन्दुओ—शुष्क बर्फ अथवा विक्षेपित रजत आयो-डाइड—को डालकर "बीजीकरण" (seeding) किया जाता है तो कृत्रिम वर्षा के लिए प्रेरण हो जाता है। इस विधि की काफी आलोचना हुई है। कृत्रिम वर्षा के क्षेत्र मे इसका उपयोग चाहे जो कुछ भी हो, पर हम लैंगम्यूर के साथ यह आशा अवश्य कर सकते है कि कदाचित् यह विधि भीषण तूफानो मे बचने मे उपयुक्त हो सके।

१६३३

कोई पुरस्कार नही दिया गया

१९३४

हैरल्ड क्लेटन यूरे (Harold Clayton Urey)

(१८९३-   )

"भारी हाइड्रोजन के आविष्कार के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

हैरल्ड सी० यूरे का जन्म वाल्करटन, इन्ड, मे हुआ था। वाटरलू, इन्ड०, के हाई स्कूल से स्नातक होने के बाद आपने देहात के स्कूलो मे तीन वर्ष तक पढाया। तब आपने मोनटाना विश्वविद्यालय मे प्रवेश किया और बैचलर आफ साइन्स की उपाधि १९१७ मे प्राणिशास्त्र मे प्राप्त की। नोबेल पुरस्कार कमेटी मे भेजे गये अपने आत्म-कथानक मे आपने प्रथम विश्व-युद्ध के प्रभावो का स्वय वर्णन किया है—"जब यूनाइटेड स्टेट्स भी विश्वयुद्ध मे सम्मिलित हुआ तो मै युद्ध-सामग्री के बनाने मे सहायता देने के लिए फिलाडेलफिया गया। मै इस अनुभव को बडा सौभाग्यशाली समझता हूँ, क्योकि इससे मुझे यह निश्चित करने मे सहायता मिली कि ओद्योगिक रसायन मे मेरी अधिकतम रुचि न होगी, फलत मै शिक्षा सबधी कार्य की ओर प्रवृत्त हुआ।" आप रसायन के शिक्षक के रूप मे मोनटाना विश्वविद्यालय लौट आये और तब आप कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय चले गये। वहाँ गिलबर्ट एन० लीविस (Gilbrt N. Lewis) के प्रेरणात्मक प्रभाव से आपकी रुचि भौतिकी एव गणित सबधी रसायन की ओर हो गयी। १९२३–२४ मे आपको इन विषयो मे और अधिक प्रेरणा कोपेन-हागेन मे स्थित सैद्धातिक भौतिकी के इस्टीट्यूट मे नील्स ब्होर (Niels Bohr) के साथ होने पर मिली। अगले कुछ वर्षो मे आप जान हापकिन्स (John Hopkins) के सहायक रहे। १९२९ मे कोलम्बिया विश्वविद्यालय मे आप सहायक प्रोफेसर बन गये तथा १९३४ मे प्रोफेसर हो गये।

समस्थानिको पर की गयी ऐस्टन की शोधो से क्वाटम-सिद्धात एव ऊष्मा गतिकी की सहायता से आपने यह गणना की कि २ परमाणुभार वाले हाइड्रोजन के समस्थानिक

को भौतिक विधियो से पृथक् हो जाना चाहिए। इस समस्थानिक का नाम आपने डायटीरियम रखा, इसका भार तत्त्व के साधारण भार की अपेक्षा दुगुना था। दूसरे सब तत्त्वो के समस्थानिको के परमाणु-भार मे अतर एक छोटा भिन्न है। सिद्धात के दृष्टिकोण से जो भविष्यवाणी की गयी थी, वह प्रयोगो द्वारा ठीक सिद्ध हुई। बाद में यूरे ने १५ परमाणु-भार वाले नाइट्रोजन समस्थानिक के पृथक्करण मे भी इस विधि का विस्तार किया, साधारण नाइट्रोजन का परमाणु-भार १४ होता है।

दूसरे विश्वयुद्ध के समय किये गये परमाणु बम के उत्पादन-सबधी कार्य मे यूरे का प्रमुख हाथ था। भूगर्भशास्त्र एव पुरातत्त्वशास्त्र मे समस्थानिको के नये उपयोग सबधी कार्य से आप आधारभूत समस्याओ को सुलझा रहे है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"जब O^{16} को परमाणुभार की १६ इकाइयो का प्रमाण मान लिया जाता है तो इसकी तुलना मे H^1 के सापेक्ष परमाणु-भार का निर्धारण और आक्सिजनके प्राकृतिक समस्थानिको के मिश्रण के रासायनिक परमाणु-भार के निर्धारण से ज्ञात होता है (जैसा बर्जे—Birge और मेजेल–Menzel ने सबसे पहले बतलाया था) कि २ सहति वाले हाइड्रोजन के समस्थानिक की हलकी हाइड्रोजन मे १ ४५००के अनुपात मे उपस्थिति सभावित है। भारी हाइड्रोजन के इससे अधिक होने की आशा नही की जा सकती थी, क्योकि और किसी भारी समस्थानिक के होने के मतलब यह थे कि सब भारी समस्थानिको को मिलकर ४५०० के एक भाग से अधिक नही होना चाहिए। जब उपर्युक्त प्रमाण से गणना की जाती है तो चौथे दशमलव पर २ के अतर से ये अनुमानित परिणाम आते है। रासायनिक निर्धारणो मे सभावित त्रुटि के युक्तियुक्त अनुमान से यह कुछ अधिक है। O^{18} की प्रचुरता के सबध मे हाल मे जो अन्वेषण किये गये है उनसे अनुमानित परिणाम १ ४५०० के स्थान पर १ ३,७०० हो जाते है।

"इस दुर्लभ समस्थानिक के अस्तित्व के प्रदर्शन के लिए इसका किसी विधि से साद्रण करना आवश्यक था, क्योकि उस समय तक ज्ञात विधियो में से किसी भी विधि से इतनी कम मात्रा मे उपस्थित समस्थानिक को पृथक् नही किया गया था। बाद मे यह पता चला कि यह बात ठीक नही थी, क्योकि समस्थानिक के परिचय के लिए बहुत ही सवेदी विधि—अर्थात् परमाणु-वर्णक्रम—का उपयोग किया गया था। इस विधि का इसमे प्रयोग हो सकता था, क्योकि इसमे ब्होर के सिद्धात के अनुसार सापेक्ष दृष्टि से

1 Lex Prix Nobel en 1934 से अनूदित।

परमाणव-समस्थानिक प्रभाव के अधिक होने की आशा थी। तथापि, २ परमाणुभार वाले हाइड्रोजन के समस्थानिक–डायटीरियम–का साद्रण, परिचय को सुगम बनाने के लिए, आसवन से किया गया।

"इस सरल सिद्धात के अनुसार हाइड्रोजन और हाइड्रोजन डायटीराइड तथा हाइड्रोजन से हाइड्रोजन ट्राइटीराइड के वाष्प दाब का अनुपात क्रमश २ २३ एव ३ ३५ है। वाष्प दाबो के अनुपातो के लिए इन मानो को लेकर सरल गणना से यह दिखाया गया कि त्रि-बिन्दु (triple point) पर ठोस हाइड्रोजन के सरल आसवन से ही डायटीरियम का काफी अधिक साद्रण होना चाहिए। वस्तुत यह निश्चित मत देना कि द्रव अवस्था के लिए भी ये अतर ठीक होगे, असभव था, किन्तु यह अनुमान युक्तियुक्त अवश्य था कि कम-से-कम अवस्था मे भी इस प्रभाव को रहना चाहिए।

"यूनाइटेड स्टेट्स के ब्यूरो आफ स्टैन्डर्ड्स के डा० एफ० जी० ब्रिकवेडे (Dr F.G. Brickwedde) ने बडी कृपा करके उपर्युक्त सिद्धात मे स्पष्ट की गयी परिस्थितियो मे हाइड्रोजन के नमूनो का उद्वाष्पन किया। सबसे बढिया नमूना ४००० घ० से० द्रव हाइड्रोजन के त्रि-बिंदु पर उद्वाष्पन से प्राप्त हुआ था, जब अवशेष केवल १ घ० से० रह गया था। मेरे शोध-सहायक, डा० जी० एम० मर्फी (Dr. G M Murphy) और मैने १९३१ के अत मे इस नमूने के परमाणव-वर्णक्रम का अन्वेषण किया। और नमूनो का भी अध्ययन किया गया। इसके लिए २१ फुट के अवतल ग्रेटिंग (grating) का उपयोग किया गया था, जिसके एक इच मे १५,००० रेखाएँ थी। हमने बामर श्रेणी की डायटीरियम की तीन रेखाएँ प्राप्त की। जब व्यापारिक विद्युतीय हाइड्रोजन का उपयोग होता था, तब भी ये रेखाएँ पायी जाती थी। डा० ब्रिकवेडे द्वारा तैयार किये गये नमूनो मे इन तरग-दैर्घ्यो का प्रकाश ४ से ५ गुना तक बढ जाता था।

"यद्यपि प्राकृतिक हाइड्रोजन मे डायटीरियम की रेखा को सरलता से पहचाना जा सकता है, तथापि आसवन से प्राप्त अधिक साद्र नमूनो की सहायता के बिना इनके अस्तित्व के लिए निश्चित निर्णय देना बहुत कठिन हो जाता, क्योकि परीक्षण की हुई अतिरिक्त रेखाओ की रूल्ड ग्रेटिंग के अनियमित गोस्टो ("ghosts") उपच्छाया से इसकी अनुमानित व्याख्या की जा सकती थी। इस प्रकार साद्रण की जिस विधि को निकाला गया था और मौलिक शोध-कार्यो मे जिसका उपयोग हुआ था, वह समस्थानिक के अस्तित्व को सिद्ध करने मे महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई।

"रिटेनवर्ग (Rittenberg) और मैने इस सिद्धात का उपयोग यह दिखाने मे भी किया है कि हाइड्रोजन और डायटीरियम सबधी प्रतिक्रियाओ मे सतुलन स्थिराको

के आसानी से पहचाने जा सकने वाले अतरो का भी अस्तित्व होना चाहिए। बाद के प्रायोगिक कार्यो से यह गणना ठीक सिद्ध हुई, जब हाइड्रोजन और डायटीरियम से क्रमश हाइड्रोजन आयोडाइड और डायटीरियम आयोडाइड बनायी गयी। इसके ठीक सिद्ध होने की पूर्ण आशा की जा सकती थी, किन्तु यह पहला अवसर दिखाई देता है, जब एक रासायनिक प्रतिक्रिया के सतुलन स्थिराक की तभी गणना कर ली गयी थी, जब कि सिद्धात को पुष्ट करने के लिए उनमे से एक तत्त्व काफी मात्रा मे न बन सका हो।

"पिछले दो वर्षो मे डायटीरियम के उपयोग पर जो विस्तृत शोध-कार्य हुआ है, वह हाइड्रोजन और डायटीरियम को पृथक् करने के लिए वाशबुर्न (Washburn) की विद्युतीय विधि से सभव हो सका है। आजकल इन समस्थानिको के पृथक्ककरण के लिए अन्य विधियो का भी उपयोग किया जा सकता है। जैसा फारकस (Farkas) ने दिखलाया है, उसके अनुसार हाइड्रोजन और जल की विनिमय प्रतिक्रिया (exchange reaction) मे कुछ परिवर्तन करके परस्पर विरोधी धाराओ की रगड (scrubing) विधियो का उपयोग करके हाइड्रोजन समस्थानिको का सफल पृथक्करण किया जा सकता है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

दिसम्बर १९३१ मे यूरे ने २ परमाणुभार वाले हाइड्रोजन के समस्थानिक के आविष्कार की घोषणा की। सैद्धातिक भविष्यवाणी की इस पुष्टि के बाद फौरन ही उसके व्यापारिक उत्पादन की बात सोची जाने लगी। इसके लिए त्रिबिंदु पर के (जिसमे हाइड्रोजन तीनो अवस्थाओ—ठोस, द्रव और गैस में रहती है) प्रभाजित आसवन का उपयोग न करके स्वर्गीय ई० डब्लू० वाशबुर्न की विधि—विद्युत्-विश्लेषण—का प्रयोग किया गया। वैद्युत विश्लेषिक विच्छेदन से जब हाइड्रोजन बनायी जाती है तो गैस मे हलकी हाइड्रोजन अधिक होती है, अवशिष्ट जल मे डायटीरियम का अधिक अनुपात होता है। नार्वे के रुजकन वाले जल विद्युतीय प्लाट (hydroelectric plant) से डायटीरियम आक्साइड अर्थात् "भारी जल" का व्यापारिक उत्पादन आरभ हो गया। परमाणु-पुज मे न्यूट्रान की गति को धीमी करने के लिए भारी जल प्रयुक्त होता है, यह उपयोग इतना साहसी और सफल हुआ कि दूसरे विश्व-युद्ध मे जर्मन हाथो से भारी हाइड्रोजन का भण्डार छीनने के लिए इस प्लाट पर आक्रमण किया गया।

अब दूसरे उच्च समस्थानिक ट्रिशियम (tritium) पर सबका ध्यान केंद्रित है, क्योकि परमाणु-खडन के लिए इससे कदाचित् "हाइड्रोजन बम" बन सके।

१६३५

आयरीन जोलियो क्यूरी (Irene Joliot Curie)

(१८६७–   )

फ्रेडरिक जोलियो (Frederic Joliot)

(१६००–   )

"नये रेडियमधर्मी तत्त्वो के संश्लेषण के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

पियरे और मेरी क्यूरी की पुत्री ने प्रथम विश्वयुद्ध के समय अस्पताल के रेडियम-शास्त्रीय (radiologic X क्ष- रश्मिक) कार्य के लिए भौतिकी एव गणित के अपने अध्ययन मे विघ्न डाला। आपने अपनी माता की सहायता की। आप पेरिस के रेडियम इस्टीट्यूट की क्यूरी प्रयोगशाला से १९२५ मे स्नातक हुई। डाक्टर की उपाधि के लिए पलोनियम की अलफा-किरणो पर आपने थीसिस लिखी थी।

उसी समय पेरिस के भौतिकी एव रसायन के स्कूल से इजीनियर का डिप्लोमा प्राप्त कर फ्रेडरिक जोलियो ने रेडियम इस्टीट्यूट मे नौकरी की।

आप दोनो ने १९२६ मे विवाह कर लिया। साथ किये गये कार्य मे आयरीन जोलियो क्यूरी भौतिक दृष्टिकोण पर अधिक बल देती थी, फ्रेडरिक जोलियो रेडियम-धर्मी पदार्थों के रासायनिक परिचय मे अधिक रुचि रखते थे। आपने परमाणु-खडन से प्राप्त कृत्रिम रेडियमधर्मी पदार्थों का अन्वेषण आरम्भ किया, आप परमाणु-बल के शाति समय के उपयोगो की ओर अधिक ध्यान देने लगे। फ्रेडरिक जोलियो ने रेडियम-शास्त्रीय शोध को जीवन-रासायनिक शोध से मिलाया और रेडियमसक्रिय रूप से लेबेल लगे हुए हार्मोनो और थायर्वायड पदार्थों को बनाया।

आर० ग्रीग्वायर (R Gregoire) के साथ दोनो जोलियो ने मिलकर नाभि-कीय भौतिकी पर एक पुस्तक १९४८ मे प्रकाशित की।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

आयरीन जोलियो क्यूरी

"विद्युत् ऋणीय इलेक्ट्रान, जिनसे β–विकिरण होता है, और धनविद्युत् चार्जयुक्त अल्फा-विकिरण के हीलियम कण के साथ-साथ रदरफोर्ड के अनुमान मे एक धन हाइड्रोजन कण भी था, जिसको प्रोटान कहा गया था। जेम्स चैडविक (James Chadwick) महोदय ने हाइड्रोजन के परमाणुभार वाले एक उदासीन कण—न्यूट्रान—का भी आविष्कार किया था। प्रोटान अपने मे से एक धन विद्युत् चार्ज को खो सकता है और एक धन इलेक्ट्रान को देकर एक न्यूट्रान मे परिवर्त्तित हो सकता है। (देखिए, भौतिकी मे नोबेल पुरस्कार विजेता, वर्ष १९३५)।

"हल्के तत्वो पर अल्फा-कणो के उपविकिरण (irradiation) से न्यूट्रान के उत्सर्जन के साथ होने वाले तत्त्वातरण के अध्ययन मे हमे फ्लोर, सोडियम एव एल्यूमनियम द्वारा उत्सर्जित न्यूट्रान के तात्पर्य्य समझने मे अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडा। अल्फा कण को पकड कर एल्यूमिनियम, सिलिकन के स्थायी परमाणु एव एक प्रोटान मे तत्त्वातरित हो जाता है, तथापि यदि एक न्यूट्रान उत्सर्जित हो तो इस प्रतिक्रिया के फलस्वरूप जो परमाणु बनेगा, वह ज्ञात नही है।

"हम लोगो ने उस समय इसका परीक्षण किया कि जब एल्यूमिनियम अथवा बोरान अल्फा-कणो से उपविकिरित होते है, तो केवल प्रोटान एव न्यूट्रान ही नही, अपितु धन इलेक्ट्रान भी उत्सर्जित होते है। फलत हम लोगो ने यह मान लिया कि प्रोटान के स्थान पर न्यूट्रान और धन इलेक्ट्रान साथ-साथ उत्सर्जित होते है, इन दोनो दशाओं मे प्राप्त परमाणु एक ही प्रकार का होगा।

"१९३४ के आरम्भ मे हम लोगो ने इस तत्त्वातरण एव उस समय तक किये गये अन्य तत्त्वातरणो मे एक आधारभूत अतर पर ध्यान दिया, कृत्रिम नाभिकीय रसायन की सारी प्रतिक्रियाएँ तुरत और कभी-कभी विस्फोटकीय भी होती है। इसके विपरीत, अल्फा-कण के स्रोत से प्रतिक्रिया करते समय एल्यूमिनियम द्वारा उत्पादित धन-इलेक्ट्रान-स्रोत के हटाने के बाद भी कुछ देर तक निकलते रहते है। उत्सर्जित इलेक्ट्रानो की सख्या तीन मिनट में आधी हो जाती है।

"फलत यह वास्तविक रेडियमधर्मिता है, जिसकी सूचना धन इलेक्ट्रान के उत्सर्जन से मिलती है।

1 Les Prix Nobel en 1935 से अनूदित।

"हम लोगो ने यह दिखा दिया है कि अल्फा-कण रूपी बम फेंके जाने पर बोरॉन अथवा मग्नीशियम मे भी रेडियम-धर्मिता आ जाती है और इसके साथ धन अथवा ऋण इलेक्ट्रान उत्सर्जित होने लगते है। ये कृत्रिम रेडियो तत्त्व बिलकुल प्राकृतिक रेडियो तत्त्वो की भाँति कार्य करते है।"

फ्रेडरिक जोलियो[1]

अल्फा-किरणो द्वारा उपविकिरित एल्यूमिनियम फिल्म पर हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के विलयन की प्रतिक्रिया से उसको घोला जाता है। इस रासायनिक प्रतिक्रिया से हाइड्रोजन निकलता है और जब जल पर पतली दीवार वाली नली औधा दी जाती है तो यह रेडियमधर्मी तत्त्व उसमे भरने लगता है। इस पृथक्करण से यह स्पष्ट है कि उप-विकिरण के समय एल्यूमिनियम से भिन्न कोई तत्त्व बना था। यह तत्त्वातरण को निश्चित रूप से सिद्ध करता था, इन्ही परिस्थितियो मे एल्यूमिनियम से सूक्ष्म मात्रा मे फास्फोरस पृथक् होना चाहिए।

सक्रिय एल्यूमिनियम को अम्लीय आक्सीकारक विलयन मे भी घोला जा सकता है। इसमे सोडियम फास्फेट और जर्कोनियम लवण की सूक्ष्म मात्रा को मिला दिया जाता है, जर्कोनियम के फास्फेट के अवक्षेपण के समय रेडियमधर्मी तत्त्व भी उसके साथ आ जाता है। एल्यूमिनियम के साथ ये प्रयोग बडे कठिन है, क्योकि इनको केवल ६ मिनट मे करना होता है, नये बने रेडियमधर्मी तत्त्व का अर्द्ध जीवन ५ मिनट से भी कम है। इस प्रकार की रासायनिक परख से ज्ञात हुआ कि अल्फा-किरणो के प्रभाव द्वारा बोरॉन से नाइट्रोजन का समस्थानिक बनता है।

हम लोगो ने इन रेडियमधर्मी तत्त्वो (ज्ञात तत्त्वो के समस्थानिक, जो प्रकृति मे नही पाये जाते) के नाम–रेडियो-नाइट्रोजन, रेडियो फास्फोरस, रेडियो-एल्यूमिनियम (अल्फा उपविकिरण की दशा मे मैग्नीशियम) रखने और उनको इन प्रतीको–RN^{13}, RP^{30}, RAl^{28} से व्यक्त करने का प्रस्ताव किया है।

"इन आविष्कारो के पश्चात् शीघ्र-ही हम लोगो ने यह बात सामने रखी कि अल्फा-किरणो के स्थान पर दूसरे कणो—उदाहरणतया प्रोटान, डायट्रान एव न्यूट्रान—की टक्कर से होने वाले तत्त्वातरण मे ऐसी ही घटनाएँ हो सकती है।"

1. Les Prix Nobel en 1935 से अनूदित।

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

साधारण रूप से—ऊष्मा, दाब, रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा—हम लोग पदार्थो के गुणधर्मो मे जो अतर करने की चेष्टा करते है उससे रेडियम-धर्मिता मे परिवर्त्तन नहीं होता, अत वह तत्त्वो की भाँति अपरिवर्त्तनीय जान पडती है। अब एक ऐसी विधि ज्ञात हो गयी जिससे साधारण तत्त्व मे रेडियम-धर्मिता लायी जा सकती थी। तत्त्व रेडियमधर्मी बन जाता है और तत्त्वो के वर्गीकरण मे अपने पडोसी का समस्थानिक बन जाता है। इस आविष्कार के पश्चात् लगभग ४०० समस्थानिको का वर्णन किया गया है। जोलियो लोगो ने कृत्रिम रेडियमधर्मिता के लिए जिस विधि को बताया, वह केवल अकेली ही नही रही, साइक्लोट्रान एव नाभिकीय प्रतिकारक पुज (Nuclear reactor pile) से भी अनेक प्रकार के रेडियमधर्मी तत्त्व बने और उनकी मात्रा मे वृद्धि हुई। मूलत नये तत्त्व केवल विकिरण के रूप मे ज्ञात थे। इसके पश्चात् शुद्ध रेडियम-धर्मी तत्त्वो की थोडी मात्राओ का उत्पादन हुआ। चूँकि वे अपनी सारी रासायनिक प्रतिक्रियाओ मे साधारण रूप से समस्थानिक की भाँति कार्य करते है, अत उनका सूचक (indicators) के रूप मे उपयोग होता है, विशिष्ट विकिरण की सहायता से सूक्ष्मतम मात्राओ की उपस्थिति का ज्ञान हो जाता है। १४ परमाणु-भार वाले रेडियम सक्रिय कार्बन को, जिसका विकिरण काफी दिनो तक रहता है, आक्सीकृत करके कार्बन-डाइ-आक्साइड प्राप्त की जा सकती है, इसकी सहायता से यह दिखाया जा सकता है कि हरी पत्तियो मे स्वीकरण के समय किस प्रकार कार्बन यौगिक बनते है। रेडियो सक्रिय आयोडीन थायरायड ग्रथियो मे अवशोषित हो जाती है। इससे तुलनात्मक शारीर (anatomy) के अध्ययन मे सहायता मिलती है। जब रेडियो-सक्रिय फ़ास्फोरस पशुओ को सोडियम फास्फेट के रूप मे खिलाया जाता है तो उससे इस पदार्थ के रासायनिक विपचन एव शरीर मे इसके परिवर्त्तन को जानने मे सहायता मिलती है। रेडियो-सक्रिय चिह्न की सहायता से पशु को भी पहिचानने मे सहायता मिलती है। सश्लिष्ट औषधो मे रेडियो-सक्रिय तत्त्वो का उपयोग किया गया है और इस प्रकार जीव मे उनके प्रभाव और उनके क्रिया से सबधित ज्ञान प्राप्त किया गया है।

ये कृत्रिम रेडियमधर्मी तत्त्व पहले ज्ञात तत्त्वो के समस्थानिक है। बिलकुल हाल में ही, इस प्रकार के कृत्रिम उत्पादन से अज्ञात एव उच्च परमाणुभार वाले तत्त्वो का पूरा सश्लेषण किया गया है।

१९३६

पीटर जे० डब्लू० डिबाई (Peter J.W. Debye)

(१८८४–   )

"डाइपोल घूर्णो (Dipole moments) पर किये गये अपर अन्वेषणो द्वारा आणव रचना एव एक्स-किरणो तथा गैसो में इलेक्ट्रान के डिफ्रैक्शन के अध्ययन में आपकी सेवाओ के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

पीटर डिबाई का जन्म मास्ट्रिक्थ, हालैंड मे हुआ था। उसी शहर मे आपने हाई स्कूल तक शिक्षा पायी, इसके पश्चात् आप अपने देश की सीमा—आखेन—पर चले गये और वहाँ विद्युतीय इजीनियर बन गये। वहाँ से आपने सैद्धातिक भौतिकी की शोध के केन्द्रो मे यात्रा की, विशेषतया, आप म्यूनिख मे रहे, जहाँ से १९१० मे आपको डाक्टर की उपाधि मिली। जूरिख मे सैद्धातिक भौतिकी के एक वर्ष तक (१९११–१२) प्रोफेसर रहने के बाद आप दो वर्षो के लिए हालैंड (यूट्रेक्थ) लौट आये। इसके पश्चात् आप गाटिन्जेन मे ५ वर्ष तक रहे, यहाँ गणित और सैद्धातिक भौतिकी के अच्छे ख्यातिप्राप्त विशेषज्ञ थे। इसके पश्चात् आप जूरिख (१९१९–२७) लाइपज़िग और बर्लिन मे रहे, बर्लिन मे १९३५ से १९४० तक आप सैद्धातिक भौतिकी के कैसर विल-हेल्म इस्टीट्यूट के डायरेक्टर रहे। १९४० से आप कार्नेल विश्वविद्यालय मे है।

डिबाई महोदय ने भौतिकी और रसायन मे जो अनेक महत्त्वपूर्ण सेवाएँ की है, उनमे आपने परमाणुओ एव अणुओ पर कम्पनो की प्रतिक्रिया समझने की चेष्टा की है। ये कम्पन ऊष्मा की बडी तरग अथवा प्रकाश की छोटी तरग के रूप मे हो सकते है। आपके आरभिक कार्य का उदाहरण आप का विशिष्ट ऊष्मा सबधी सिद्धात है। ताप-परिवर्त्तनो मे ताप के एक डिगरी के परिवर्त्तन के लिए किसी पदार्थ के इकाई-भार को जितनी कलरियो की आवश्यकता होती है, उसको उसकी विशिष्ट ऊष्मा कहते है। चूंकि ऊष्मा-तरगे विभिन्न परमाणुओ की आपस की दूरी से बडी होती है, अत. आपने

यह मान लिया कि पदार्थो का यह गुणधर्म आणव न होकर निरन्तरिक (continuous) होता है। इससे आप विशिष्ट ऊष्मा का सबध ताप से स्थापित करने मे सफल हुए, यह बहुत निम्न तापो,जहाँ ऊष्मा-तरगो की लवाई सवसे अधिक होती है, के लिए बिलकुल सरल है।

उसी समय १९१२ मे डिबाई ने विद्युत्-चुबकीय तरगो से भी पदार्थो का अन्वेषण किया। इन तरगो से आणव रचना स्पष्ट होती है, विशेप रूप से इनसे यह भी पता चलता है कि धन एव ऋण के विद्युत् चार्जो का किस हद तक सपात (coincidence) होता है। जहाँ इन चार्जो के परिणामस्वरूप गुरुत्व-केन्द्र एक दूसरे से दूर होते है तो अणु ध्रुवीय होता है, चुबकीय क्षेत्र मे अणु को लाने पर उनके एक रेखा मे होने से यह स्पप्ट हो जाता है। ऐसे अणुओ मे परमाणु की एक दूसरे के प्रति घूर्णक गतियाँ सीमित हो जाती है।

विलयन मे अणुओ की अवस्था के लिए एर्‌हीनियस ने (दे० १९०३ का विवरण) एक सिद्धात बनाया था, यह केवल उच्च तनूकरण के लिए ठीक था। डिबाई ने आयनीकरण के विचार को ठोस--पदार्थ के केलासित रूप—तक विस्तृत किया। सान्द्र विलयनो के लिए विलेयक के प्रभाव का मापन हो सकता था और उसको ठीक से बताया जा सकता था। आयन एक दूसरे के जितने अधिकतम निकट आ सकते है, उसको मध्यमान आयनीय व्यास कहते है। केलास विज्ञान (crystallography) मे मापे गये व्यास से यह काफी अधिक होता है। विलेयक के अणुओ के साथ आयनीय व्यास काफी बडा होता मालूम पडता है। (डिबाई-ह्वीकेल सिद्धात, १९२३)।

पदार्थ के उपविकिरण से जिस प्रकार का ज्ञान प्राप्त होता है, वह तरग-दैर्घ्य की तुलना मे रचनात्मक आकार पर निर्भर होता है। गामा अथवा रटजन किरणो से केलास की परमाणव रचना स्पष्ट होती है। गाटिन्जेन मे डिबाई और पी० शेरर (P Scherrer) ने इसका आविष्कार किया कि गामा-किरणो (जिनसे अणु की आकाशीय (Spatial) व्यवस्था ज्ञात होती है) के व्यतिकरण (interference) को प्राप्त करने के लिए अच्छे बने केलासो की आवश्यकता नही होती, बारीक चूर्ण से भी काम चल जाता है। बिलकुल हाल मे ही डिबाई ने प्रकाश-तरगो से बडे अणु वाले विलयनो के अन्वेषण की विधि निकाली है। अणुओ, विशेष रूप से उच्च बहुअश (polymer) अथवा साबुन के अणुओ, द्वारा प्रकाश का प्रकीर्णन (scattering) होता है। जिस अश तक प्रकीर्णन होता है उसका मापन कर उससे घुलित द्रव्य के आकार एव रूप का सबध स्थापित किया जाता है। गणित सूत्रो की (जिनमे आइन्स्टाइन-

के पहले के –१९१०– सिद्धातो का उपयोग होता है) सहायता से रसाकर्षक दाब एव अणु-भार भी इन प्रकाश-विधियो से ज्ञात कर लिये जाते है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"विरल गैसो के परमाणु अध्रुवीय होते है। यह उनके इलेक्ट्रान बादल की केन्द्रीय सम्मित रचना के कारण होना भी चाहिए। द्विपरमाणुक अणुओ को भी, जिनमे एक ही परमाणु (N_2, O_2) होते है, इसी प्रकार अध्रुवीय सिद्ध किया गया है। तथापि जैसे ही ये दो परमाणु विभिन्न हो जाते है, फौरन आणव ध्रुवता दिखाई देने लगती है। यदि ये दोनो तत्त्व आवर्त वर्गीकरण मे पास-पास होते है (CO) तो यह ध्रुवता कम होती है और केवल HCl जैसे अणुओ मे अधिक होती है। H^- आयन और Cl^- आयन से बनी रचना का जो डाइपोल घूर्ण होना चाहिए, वह HCl के डाइपोल घूर्ण के परिमाण के निकट नही होता, वह उस मान का केवल १।६ होता है, क्योकि μ* का मान १ ०४ × $१०^{-१८}$ प्राप्त किया गया है। यदि HCl अणु को ऐसा समझा जाय जिसमे दो आयन पास लाये गये है, तो उसके अनुसार हाइड्रोजन का नाभिक क्लोरीन-आयन के गोले मे बेधता (penetrates) है, इससे पहले वाले चुबकीय घूर्ण के ५।६ भाग की क्षतिपूर्ति हो जाती है। इसकी वास्तविक क्वाटम-सैद्धातिक गणना कठिन जान पडती है। तब भी किर्कवुड (Kirkwood) ने HF, HCl, HBr और HI अणुओ की अब तक जो गणना की है, उससे कुछ परिणाम निकला है।

"जिन अणुओ मे तीन परमाणु होते है, उनका दो समूहो मे विभाजन किया जा सकता है—CO_2 और CS_2 अध्रुवीय है, किन्तु H_2O, H_2S, SO_2 का एक स्थायी घूर्ण होता है। इसकी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है—पहली दशा मे परमाणुओ की व्यवस्था एक रेखा मे है किन्तु दूसरी दशा मे परमाणु त्रिकोण के तीन कोनो पर है। अवस्थितित्व (inertia) का घूर्ण जो सपट्ट वर्णक्रम से स्पष्ट होता है, इन रचनाओ को स्वतत्र रूप से सिद्ध करता है। इसी प्रकार NH_3, PH_3, AsH_3 के अणुओ की परीक्षित ध्रुवता से एक त्रिपार्श्व वाले पिरामिड की रचना करनी पडी, इसमे N, P, अथवा As बीच के एक बिन्दु पर होता है और हाइड्रोजन के तीन परमाणु उसके आधार के तीन कोनो पर होते है।

1 Les Prix Nobel en 1936 से अनूदित।

* विद्युतीय चार्ज, सहति और लम्बाई के सबध को स्पष्ट करने वाला यह प्रतीक "चुम्बकीय घूर्ण" है।

"रसायनज्ञो का यह दृढ विश्वास था कि अणु मे परमाणुओ की आकाशीय व्यवस्था से जो रचनात्मक सूत्र बनता है, वह किसी प्राकृतिक रचना को व्यक्त करता है, यह पहले की गणना से पूर्ण रूप से निश्चित हो गया है। कभी-कभी इसमे केवल एक कमी रह जाती है और वह है ठीक नापो की कमी। अत हम लोग अणु मे दूरी ठीक तरीके से नापने की विधि खोजने का प्रयत्न करेगे। केलास-व्यतिकरण का जब से लावे (Laue) महोदय ने आविष्कार किया है तब से हमको मालूम है कि एक्स-किरणो का तरग-दैर्ध्य इस कार्य के लिए काफी छोटा पड जाता है। तथापि यदि हम स्वतत्र अणुओ का परीक्षण करना चाहे तो एक और कठिनाई उन कणो से उठ पडती है, जो केलास की भाँति, निश्चित रूप से एक जगह पर जमाये नही जा सकते। सौभाग्यवश, हम लोग यह दिखा सके है कि एक्स-किरणो के उपविकिरण से प्रत्येक परमाणु रचना के छितरित विकिरण मे काफी व्यतिकरण का उत्पादन होता है, यह तब भी होता है, जब उसकी आकाश-दशा (orientation) मे स्थायी एव अनियत्रित रूप से परिवर्तन हो जाता है। केलासीय चूर्ण और द्रवो के व्यतिकरण के समय मुझ पर और शेरर पर इस विचारधारा का काफी प्रभाव रहा। १९२८ मे किये गये ये प्रयोग प्रयास के लिए प्रथम सीढी की भाँति थे, ये बेवीलोगुआ (Bewilogua) और एरहार्डट (Ehrhardt) के साथ किये गये थे और इनमे CCl_4–वाष्प का छितरन द्वारा व्यतिकरण किया गया था।

"बेजीन अणु के लिए और बहुत खूबसूरती से हेक्साक्लोरो बेजीन के लिए यह सिद्ध किया जा सकता है कि ६–कार्बन वाला घेरा एकतल मे ही होता है और यह हीरे के घेरे से न मिल कर लिखज के घेरे से मिलता है। यह C—C की दूरी से ही स्पष्ट है, इसका मान ऐलीफैटिक यौगिको के लिए १ ५४° A है, किन्तु गधित (ऐरोमेटिक) पदार्थों के लिए केवल १ ४१° A है। द्विगुण अथवा त्रिगुण बधको की दशा मे यह और कम हो जाता है।"

सिद्धांत और व्यवहार पर प्रभाव

अणुओ मे विद्युतीय ध्रुवता के विचार और उसके परिमाण के मापन से रसायनज्ञो ने अणुओ के जो चित्र खीचे थे, उनमे यथार्थता आ गयी। अब अणु मे परमाणुओ की वास्तविक दूरी ज्ञात की जा सकती है। जहाँ परमाणुओ की सापेक्ष स्थिति मे सदेह होता है, जैसे जटिल समावयवताओ मे, तो इस विधि मे निश्चयात्मक निष्कर्ष सभव होता है। जब भवन-निर्माण के पदार्थों मे कुछ विद्युतीय गुण पाये गये तो इस

ध्रुवता का व्यावहारिक महत्त्व भी स्पष्ट हो गया, विशेष रूप से जब उसको पृथक्कारियो मे लगाया गया। सश्लिष्ट रेज़ीनो और उनके प्लास्टिककारो मे ध्रुवीय घूर्णो के ज्ञान से रेडार अथवा सोनार (Sonar) यन्त्रो मे उपयुक्त पदार्थों का चयन उस समय के सुलभ पदार्थों से किया गया।

डिबाई ने इस क्षेत्र मे जो मार्ग-प्रदर्शक का कार्य किया है, उसको अमर बनाने के लिए ध्रुवीय घूर्ण की इकाई, "एक डिबाई" (जो $१०^{-१८}$ के समीप होती है) रखी गयी है।

१९३७

वाल्टर नार्मन हावर्थ (Walter Norman Haworth)

(१८८३-१९४६)

"कार्बोहाइड्रेट एवं विटामिन सी की रचना पर आपकी शोध के लिए ।"
(१९३७ का पुरस्कार पाल कैरर के साथ दिया गया था, आगे देखिए)

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

वाल्टर हावर्थ का जन्म शार्ली, लकाशायर, इग्लैण्ड मे हुआ था। आपने मैन्चेस्टर एव गाटिन्जेन विश्वविद्यालयो मे अध्ययन किया, जहाँ आटो वालाख (Otto Wallach) और डब्लू० एच० पर्किन (W. H Perkin) आपके अध्यापक थे। आप दोनो गध-तेलो के प्रमुख शोध-कार्य-कर्त्ता थे, अत इसमे कोई आश्चर्य नही कि जब आपने गाटिन्जेन से (१९१० मे) पी० एच० डी० और मैन्चेस्टर से (१९११) डी० एस-सी० प्राप्त की तो आपने उसके बाद १९१२ से लेकर स्काटलैंड के सेंट ऐन्ड्रूज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रह कर पाइन की जडो एव फर नीडिल के तेलो पर शोध-कार्य आरभ किया। इसके कुछ वर्ष बाद आपने शर्करा रसायन पर कार्य आरम्भ किया, १९२० में आर्म्स-ट्राग कालेज, न्यू केसिल और १९२५ से लेकर बर्मिघम मे आपने कार्य जारी रखा।

शोध के ये दोनो क्षेत्र, कम-से-कम आशिक रूप मे, एक ही आरम्भिक पदार्थ-लकडी-के होने के कारण, कुछ मिलते थे। कार्बनिक विलेयको से गध-तेलो का सार बनाया जाता है, जलीय-क्षारीय विलयन से एक जटिल शर्करा प्राप्त होती है। इसको क्साइलान (Xylan) का जो लकडी के लिए ग्रीक शब्द है, नाम दिया गया। उस समय तक शर्करा-जैसा केवल यही पदार्थ पौधो से प्राप्त किया जा सकता था। जब इसको कुछ अम्लीय जल से उबाला जाता था, तो क्साइलान टूट (जल-विश्लेषित हो) जाता था; शर्करा के एक अणु मे ५ कार्बन परमाणु होते थे और इसके साथ थोडी मात्रा मे इसका समावयव आरैबिनोज़ होता था। हावर्थ और आपके सहकारियो ने शर्करा के ऐल्डी-हाइड समूह की मेथेनाल से प्रतिक्रिया करके उसमे मेथिल समूह जोडने अथवा हाइड्रोजन

को मेथिल समूहो से हटाने की फिशर महोदय की विधि का विस्तार किया। शर्कराओ की रचना को स्पष्ट करने के लिए ये मेथिल समूह-युक्त-यौगिक बडे उपयोगी सिद्ध हुए। इसके फलस्वरूप यह दिखाया जा सका कि शर्करा के कार्बन परमाणु एक आक्सिजन परमाणु से मिलकर घेरा बनाते है। उनमे ५ कार्बन परमाणु और एक आक्सिजन परमाणु होता है---इस दशा मे वे पिरानोज (pyranose) कहलाते है, अथवा, उनमे चार कार्बन परमाणु और एक आक्सिजन परमाणु होते है---इस दशा मे वे फ्यूरानोज। (furanose) कहलाते है, क्योकि फरफ्यूराल की ऐसी ही रचना होती है। इन रचनाओ को जब सामूहिक रूप से हावर्थ ने प्रस्ताव रूप मे सामने रखा, तो शीघ्र ही वे स्वीकृत हो गये।

क्साइलान के आधारभूत अणु मे ५ कार्बन परमाणु होते है, स्टार्च और सेल्युलोज़ में ६ होते है। पौधो के इन कार्बोहाइड्रेटो का एक सबधी ग्लाइकोजन भी है, यह जिगर मे पाया जाने वाला बहुअशी (polymer) कार्बोहाइड्रेट है। जैसा स्टार्च और सेल्युलोज मे होता है, उसी प्रकार ग्लाइकोजन बनाने की इकाई द्राक्षशर्करा है। इन कार्बोहाइड्रेटो की रचना मे प्राप्त अनुभव से हावर्थ और आपके साथियो ने विटामिन सी–ऐसकार्बिक अम्ल–की समस्या पर ध्यान दिया। एफ मिशील (F. Micheel) ने यह दिखा दिया था कि आक्सीकरण की विशेष प्रतिक्रिया के फलस्वरूप यह अम्ल बनाता था और इस प्रकार कार्बोहाइड्रेटो से सबधित था। यह एक शर्करा–सारविटोज–से जो फलशर्करा की भाँति होती है, बनाया जा सकता है। जब इसके आक्सीकरण से अम्ल बनाये जाते है, तो अणु के भीतर से ही जल के अणु टूट कर निकलने लगते है; यह टूटना सबसे पहले लैक्टिक अम्ल मे देखा गया और इसे लैक्टोन बनना कहते है। १९३४ मे हावर्थ और उसके सहकारियो ने ऐसकार्बिक अम्ल के सश्लेषण की एक विधि बतायी। इससे उसकी रचना का अतिम सबूत प्राप्त हुआ, इससे यह भी ज्ञात हुआ कि किन विविध दिशाओ से इस महत्त्वपूर्ण विटामिन का टेक्निकल विधियो से सश्लेषण हो सकता है।

दूसरे विश्वयुद्ध के समय, सर नार्मन ने परमाणु ऊर्जा के उपयोग सबधी रासायनिक समस्याओ पर सक्रिय कार्य किया।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"**कार्बोहाइड्रेटो और विटामिन सी की रचना**---इस समय एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि स्टार्च, सेल्युलोज एव ग्लाइकोजन मे जो इकाइयाँ बार-बार जुडती है, तो उनसे

1. Lex Prix Nobel en 1937 से अनूदित।

कितनी लम्बी श्रृखला बनती है। अब यह कहा जा सकता है कि ग्लाइकोजन और स्टार्च की आतरिक रचना एक ही होती है। इसके विपरीत क्साइलान अथवा लकडी के गोद की योजना सेल्युलोज की भाँति होती है, अर्थात् अतर केवल यह होता है कि मुख्यतया द्राक्षशर्करा के स्थान पर क्साइलोज इकाइयाँ होती है। बुद्धिमत्ता तो यह है कि इस जटिल समस्या को हल करने के लिए सब सुलभ पाली-सैकराइडो का एक समूह रूप मे साथ-साथ अध्ययन किया जाय। एक पालीसैकराइड के अध्ययन से जो बात स्पष्ट न हो सके, वह कदाचित् दूसरे के अध्ययन से स्पष्ट हो जाय और यह भी सभावित है कि एक ऐसा निष्कर्ष निकले जो समान रूप से सबमे लग सके। यह अनुमान युक्तियुक्त है कि प्रकृति मे इन पालीसैकराइडो के बनने की एक ही योजना है। इस कारण मैने श्रृखला की लबाई ज्ञात करने के लिए जो विधि निकाली है, उसमे आरम्भिक रूप से मेथिल-युक्त पालीसैकराइडो के अतिम समूह की परीक्षा होती है। अगर इन श्रृखलाओ की रचना मे बराबर फदे (loops) नही होते तो उनके अत मे एक समूह ऐसा अवश्य होना चाहिए, जिसमे श्रृखला के मध्य समूहो से विभिन्न एक अनवकारक (non-reducing) हाइड्राक्सिल समूह और होना चाहिए, अथवा, बाकी बचे अतिम समूह को एक अवकारक इकाई से समाप्त होना चाहिए। इस दृष्टि-कोण से हमारा क्साइलान का अध्ययन काफी महत्त्वपूर्ण है। क्साइलान मे लगभग १७ अथवा १८ β-क्साइलोपिरोनोज की इकाइयाँ एक श्रृखला मे होती है और इसके अत मे अरैबो-फ्यूरोनोज की एक इकाई होती है। बाद वाली इकाई को जब विश्लेषण से सरलता से हटाया जा सकता है, तब केवल क्साइलोज इकाइयो की श्रृखला रह जाती है। १९३४ मे मैने यह बताया कि क्साइलान का यह चित्र कदाचित् दूसरे पाली सैकराइडो के नमूने की भाँति है, क्योकि सीमित लम्बाई वाली श्रृखलाएँ मिलकर एक बड़ी श्रृखला बनाती है, इसके साथ मैने पास-पडोस वाली श्रृखलाओ के बधको पर पडे प्रभाव को भी बताया था। यह कहा गया कि ये मुख्य सयोजकता वाले बधको से अथवा किसी दूसरे बधक से जो इस निर्देशन (coordination) के लिए उत्तर-दायी है, बनी होती है। कडी अथवा बधक किसी प्रकार का भी हो, मै इसको बहु-अशी बधक कहना पसद करता हूँ, इस प्रकार यह मुख्य सयोजकता से भिन्न है और कदाचित् अन्य बहुअशी पदार्थो मे भी इसका उपयोग हो।

"उदाहरणतया, स्टार्च मे २६ अथवा ३० α-ग्लूकोपिरोनोज इकाइयो के बाद एक-एक श्रृखला समाप्त होती है और ये श्रृखलाए उन्ही उपर्युक्त एकत्र-कारक बलो द्वारा जुड़ जाती है। स्टार्च मे इस एकत्रण (aggregation) को तोड़ने की

उलटी विधि भी सभव है। स्टार्च के दोनो पर हलके अम्ल की प्रतिक्रिया के बाद ऐसीटी-करण एव मेथिलीकरण से यह सभव है। बिलकुल हाल मे ही मेरे पहले सहकारी ई० एल० हर्स्ट (E L Hirst) ने भी इस परीक्षण की पुष्टि की है। आप ने α-ग्लूकोपिरानोज की २६ इकाइयो की एक अकेली शृखला के मेथिल युक्त रूप को पृथक् किया है। ग्लाइकोजन मे ये शृखलाएँ लम्बाई मे आपेक्षिक रूप से छोटी होती हैं, हम लोगो ने ग्लाइकोजन के ऐसे नमूनो का भी परीक्षण किया है, जिनमे १२ और १८ α-फलशर्करा इकाइयो की निरतर शृखलाएँ होती हैं। ये शृखलाएँ बहुअशी बधक से पुन जुडी होती हैं और १,०००,००० अथवा इससे भी अधिक अणु-भार वाले आणव सकुल को बनाती हैं।

"इन्ही प्रायोगिक विधियो से सेल्युलोज के आणव आकार को समझने की चेष्टा की गयी है।

"**ऐसकार्बिक अम्ल की रचना**—ऐसकार्बिक अम्ल एकक्षारीय (monobasic) होता है। इसके $C_6 H_7 O_6 M$ प्रकार के सुस्पष्ट लवण बनते हैं। यह बलशाली अवकारक है और इसका आक्सीकरण कई पगो पर हो सकता है। पहले आक्सीकरण के लिए आक्सिजन का एक परमाणव अनुपात आवश्यक होता है। जब आक्सीकरण को इस अवस्था पर रोक लिया जाता है तो अवकारको—जैसे हाइड्रोआयोडिक अम्ल अथवा हाइड्रोजन सल्फाइड—की सहायता से इसको परिमाणात्मक (Quantitative) रूप से ऐसकार्बिक अम्ल मे परिवर्त्तित किया जा सकता है। ताँबे की सूक्ष्म मात्रा जब उत्प्रेरक के रूप मे उपस्थित होती है तो ऐसकार्बिक अम्ल का गैसीय आक्सिजन द्वारा आक्सीकरण विशेष रूप से सवेदी (sensitive) होता है, किन्तु इन परिस्थितियों मे प्रतिक्रिया परिवर्त्य (reversible) अवस्था से परे चली जाती है और अणु का विनाश हो जाता है।

"एक महत्त्वपूर्ण परीक्षण यह था कि ऐसकार्बिक अम्ल के प्रथम परिवर्तन के समय आक्सीकरण के फलस्वरूप बने पदार्थ मे अम्लीय गुणधर्म नही होते, यह हर प्रकार से लैक्टोन की भाँति प्रतिक्रिया करता है और इसके जलीय विलयन मे अम्लीयता फिर आ जाती है। इससे यह स्पष्ट है कि ऐसकार्बिक अम्ल (ascorbic acid) का अम्लीय लक्षण इनालिक हाइड्राक्सिल समूह के कारण है और इसमे कार्बाक्सिल समूह नही है। फलत, ऐसकार्बिक अम्ल की रचना ज्ञात करने के लिए प्रथम आक्सीकृत पदार्थ मे लैक्टोन घेरे की स्थिति को जानना शेष रहा। ऐसकार्बिक अम्ल के मुख्य लक्षण अब स्थापित हो चुके थे और १९३३ के आरम्भ मे बर्मिघम् विश्वविद्यालय से

२—कीटो-एल-ग्लूकोनिक अम्ल के लैक्टोन और इसके विभिन्न चलावयव रूपातरो मे इसकी रचना की घोषणा की गयी।

एल-ऐसकार्बिक अम्ल के सश्लेषण की ओर दूसरी सरल विधि यह है कि एल-सारबोज का (इसमे डी–फलशर्करा की भाँति C_1 पर प्रथम ऐलकोहलीय समूह आक्सीकरण के लिए विशेष रूप से सवेदी होता है) सीधे आक्सीकरण कर लिया जाय, इसको मै पहले प्रयोग से दिखा चुका हूँ।"

पाल कैरर (Paul Karrer)

(१८८९—   )

"कैरोटिन्वायडो, फ़्लाविनो एवं विटामिन ए तथा बी की रचनासंबंधी शोधो के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

पाल कैरर का जन्म मास्को मे हुआ था। आपके माता-पिता स्विट्जरलैण्ड के थे और १८९२ मे वे वहाँ चले भी आये। यही आप स्कूल मे पढने भेजे गये। १९११ मे जूरिख विश्वविद्यालय से आपने डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। आप वही आल्फ्रेड वर्नर (Alfred Werner) के भाषण-सहायक के रूप मे रहे; आपने आर्सेनिक के कार्बनिक यौगिको पर कार्य आरम्भ किया। पाल एरलिश (Paul Ehrlich) ने इस कार्य मे रुचि दिखायी और फ्राकफ़ोर्ट के गेआर्ग स्पेयरहाउस मे अपने साथ कार्य करने के लिए आपको आमत्रित किया। वर्नर के विद्यार्थी के नाते आपको धातु के सकुल लवणो का अनुभव हो चुका था, आपने इस अनुभव का औषधोपयोगी आर्सेनिकलो के बनाने मे उपयोग किया और एक रजत-सैल्वर्सन सकुल बनाया। ६ वर्ष बाद आप फ्राकफोर्ट लौट आये और १९१९ मे वर्नर के उत्तराधिकारी हुए। औषध-रसायन के स्थान पर जीव-रसायन का अब आरम्भ हुआ; बड़े अणुवाले कार्बोहाइड्रेटो पर, जिनमे स्टार्च, सेल्युलोज़ और लाइकेन से प्राप्त लाइकेनिन है, कार्य किया गया। शीघ्र ही टैनिन, लेसिथिन और प्रोटीन से प्राप्त एमीनो अम्लो पर भी कार्य होने लगा।

१९२६ मे कैरर ने पौधो के रगद्रव्यो पर कार्य किया, विशेष रूप से पीले रगद्रव्यो पर जो गाजर मे पाये जाते है और इसलिए कैरोटिन्वायड कहलाते है। स्वय कैरोटीन के कई अवयवो को पृथक् किया गया; इनका रासायनिक सगठन एक प्रकार का था पर बड़े परमाणुओ के अत मे कार्बन परमाणुओ के द्विगुण बधको की व्यवस्था भिन्न थी।

कैरोटीन के कार्बन परमाणुओ की मध्य शृखला मे एक बधक और द्विगुण बधक एकान्तर (alternate) पर होते है। जब कार्बन परमाणुओ मे द्विगुण बधक होते है, तो अणु मे उनकी उपस्थिति प्रकट करने के लिए अणु के नाम मे–ईन (–ene) जोड दिया जाता है। फलत कैरोटीन को बहुईन (Polyene) कहा गया। मानव शरीर मे वे विटामिन ए मे परिवर्तित हो जाते है। कैरर द्वारा ज्ञात विधि के अनुसार उनके सममित अणु के मध्य मे रासायनिक जलयोजन होता है। दुग्ध अथवा यीस्ट मे जो पीला पदार्थ––लैक्टोफ्लाविन––होता है, वह रासायनिक दृष्टिकोण से विटामिन ए से भिन्न होता है, पर विटामिन बी और उसके एन्जाइमो से सबधित होता है।

१९२७ मे कैरर ने कार्बनिक रसायन पर अपनी पाठ्यपुस्तक प्रकाशित की। कई भाषाओ मे इसके अनेक सस्करण निकल चुके है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"पुष्पो एव बेरीयो के नीले और लाल रग द्रव्य, जो ऐन्थोसायन कहलाते है, पहले एक समान और कई पौधो के लक्षण स्वरूप समझे जाते थे। नये अन्वेषणो से यह दिखाया जा सका है कि ऐन्थोसायन आपस मे सबधित अनेक पदार्थो के मिश्रण है। कदाचित् एक भी पुष्प अथवा बेरी ऐसी नही है, जिसका रग केवल एक ऐन्थोसायन के कारण हो। प्राकृतिक रगद्रव्य के दूसरे समूह कैरोटिन्वायड मे भी ऐसी ही परिस्थितियाँ होती है। कैरोटिन्वायड पर एल० एस० पामर (L S. Palmer) की प्रसिद्ध पुस्तक मे, जो १९२२ प्रकाशित हुई थी, केवल ६ ऐसे कैरोटिन्वायडो का वर्णन है, जिनका उस समय तक विश्लेषण हो चुका था और जिनके केलास बनाये जा चुके थे। ये ६ कैरोटिन्वायड है––कैरोटीन, लाइकोपीन, जैथोफिल, लुटीन, फ्यूकोजैथिन और र्होडोजैथिन। इनके अतिरिक्त बिक्सीन भी उस समय ज्ञात था। ४ वर्ष पहले प्रकृति मे पाये जाने वाले इन ज्ञात यौगिको की सख्या बढकर १५ हो गयी। आज हमको इस समूह के ४० प्राकृतिक रगद्रव्य ज्ञात है। पृथक्करण की नयी विधियो से ही उनका शुद्धीकरण सभव हो सका है।

"हाल मे कैरोटिन्वायडों ने सबका ध्यान आकर्षित किया है। इसका कारण उनकी बेजोड रचना ही नही, पर विटामिन से उनका नज़दीक सबध है। कुछ कैरो-

1. Lex Prix Nobel en 1937 से अनूदित।

टिन्वायड विटामिन ए के प्रोविटामिन होते है और पशु-प्राणी द्वारा विटामिन ए मे परिवर्त्तित कर लिये जाते हैं। विटामिनो का रचनात्मक अन्वेषण कैरोटीन से ही आरम्भ हुआ। जब १९३० मे β—कैरोटीन के रचनात्मक सूत्र को सही तरीके से जान लिया गया, तो उस समय तक और किसी विटामिन अथवा प्रोविटामिन (Provitamin) की रचना ज्ञात न थी। तथापि इसके थोडे समय पश्चात् ही स्वय विटामिन ए की रचना स्पप्ट हो गयी। इस प्रकार सबसे पहले विटामिन ए की रचना का ज्ञान प्राप्त किया गया। इस समय हमको कदाचित् यह याद आये कि १० वर्षो से कम पूर्व ही कुछ रसायनज्ञ इसकी द्रव्यात्मक विशिष्टता मे सदेह करते थे और कहते थे कि यह पदार्थ की नयी अवस्था है—कलिलीय प्रकृति का एक नया रूप विटामिन के इन अजीब परीक्षित प्रभावो का कारण है।

"इस प्रकार विटामिन ए की प्रतिक्रिया असाधारण रूप से विशिष्ट होती है और एक बिलकुल निश्चित रचना पर निर्भर रहती है। जीवशास्त्रीय विधि से आजकल किसी बहुईन मे पशु से विटामिन ए के लाक्षणिक गुणो का विश्वसनीय रूप से परिचय प्राप्त किया जा सकता है, यह अन्य किसी विधि—जैसे निम्नीकरण की रासायनिक प्रतिक्रिया अथवा वर्णक्रम-विश्लेषण के मापन—से सम्भव नही है। यह उच्च विशिष्टता आश्चर्य-जनक है, क्योकि बहुत-से हार्मोनो मे भी कोई विशेष लाक्षणिक रचना नही होती—उदाहरणतया स्त्री सबधी लैंगिक हार्मोन पौधो की वृद्धि के हार्मोन से मिलते है। पशु-प्राणियो मे इसी प्रकार के कायिकी प्रभाव केवल आपस में सबधित रासायनिक पदार्थों से ही नही होते, अपितु कभी-कभी प्राकृतिक पदार्थो से बिलकुल भिन्न रचना वाले यौगिको के कायिकी प्रभाव प्राय एक-से होते है।

"विटामिनो की रचना की इस सुस्पष्ट विशिष्टता को हाल के कुछ अन्वेषणो के परिणाम से जोडा जा सकता है, उससे यह स्पष्ट हुआ है कि अनेक विटामिन खमीरों के क्रियाकारी (functional) समूह होते है। इन खमीरो के उच्च विशिष्ट गुणधर्म पहले से ही ज्ञात है। पहले विटामिन बी$_2$ अथवा लैक्टोफ्लाविन (lactoflavin) मे इस प्रकार के खमीर एव विटामिनो के सबध को सिद्ध करना सभव हुआ। वारबुर्ग (Warburg) एव थियोरेल (Theorell) के अन्वेषणो के अनुसार विटामिन बी$_2$ का फ़ास्फोरिक अम्ल का एस्टर पीले आक्सीकारक खमीर का क्रियाकारी समूह होता है। आज लैक्टोफ्लाविन एव दूसरे फ्लाविनो का सश्लेषण किया जा सकता है और इस प्रकार हम लोग किसी रचना से सबधित विटामिन के प्रभाव का अन्वेषण करने मे सफल हुए।"

सिद्धात एव व्यवहार पर प्रभाव

बहुअशी कार्बोहाइड्रेटो की पृष्ठभूमि मे हावर्थ और कैरर ने विटामिन पर शोध-कार्य आरम्भ किया। स्टार्च और सेल्युलोज से सबधित नयी सूचना से प्लास्टिक रेशो एव सरेसो के परिवर्तन एव उनसे बने पदार्थो की टेक्निकल तैयारी मे काफी सहायता मिली।

यह बहुत पहले से ज्ञात था कि साइट्रस फल और हरी तरकारियो से स्कर्वी की बीमारी को रोका और अच्छा किया जा सकता है। इन प्राकृतिक पदार्थो मे स्कर्वी-नाशक अथवा ऐसकार्बिक (anti-scorbic अथवा ascorbic) अम्ल को अब एक निश्चित रासायनिक यौगिक का रूप दिया जा सका। अब प्रयोगशाला मे और कुछ बाद ही उद्योग-क्षेत्रो मे इसकी तैयारी की जा सकती थी। जब नील की रासायनिक रचना स्पष्ट हुई थी तो शीघ्र ही इस रगसामग्री का सश्लेषण, व्यापारिक उत्पादन और उससे सबधित अन्य नीलो का बनाना सभव हुआ था। विटामिनो के लिए जीव-शास्त्रीय प्रभाव इतना विशिष्ट होता है कि आणव रचना मे किसी प्रकार का परिवर्तन सभव नही। यह विटामिन सी के लिए भी सभव नही है और विशेष रूप से विटामिन ए के लिए असभव है। फलो और तरकारियो मे विटामिन सी के महत्त्व के कारण पकाने अथवा फलो के रखने के समय इस मूल्यवान् पदार्थ के स्थायित्व पर काफी अन्वेषण हुआ। दुग्ध और मक्खन विटामिन ए के स्रोत थे और इन पर खूब ध्यान लगाया गया। मछली के जिगर से प्राप्त तैलो का सार बनाने की एक नियत्रित रासायनिक उद्योगशाला बन गयी।

विटामिन सी आक्सीकरण के लिए सवेदी होता है, अत भोजन के स्वीकरण के समय उसका महत्त्व स्पष्ट हुआ। नेत्रो की क्रिया पर विटामिन ए का प्रभाव और स्पष्ट हुआ, जब इसका चक्षुपटल (retina) के रगद्रव्यो से (जी० वल्ड–G Wald) द्वारा सबध स्थापित हुआ।

१६३८

रिचर्ड कून (Richard Kuhn)

(१६००--   )

"कैरोटिन्वायडो और विटामिनो पर कार्य के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

जब रिचर्ड कून को नोबेल पुरस्कार मिला तो जर्मन सरकार ने उसको स्वीकार करने के लिए मना कर दिया। युद्ध के पश्चात् आपको स्वर्ण-पदक और पुरस्कार का डिप्लोमा प्राप्त हुआ।

कून का जन्म वियना मे हुआ था और आप म्यूनिख की विल्सटैटर की प्रयोगशाला के सबसे छोटे स्नातक थे। आपने अपनी डाक्टर की उपाधि के लिए लिखी गयी थीसिस (१९२२) मे विल्सटैटर के एन्जाइम के कार्य को और आगे बढाया। १९२६ मे आप जूरिख के स्विस टेक्निकल हाई स्कूल के प्रोफेसर हो गये। तीन वर्ष बाद आप हाइडेलबर्ग चले गये और वहाँ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर तथा रसायन शाखा मे औषध-शोध के कैसर विलहेल्म इस्टीट्यूट के डाइरेक्टर हो गये।

कून ने १९२७ मे एन्जाइम के रसायन, भौतिकी रसायन और जीवशास्त्र पर जो पुस्तक लिखी उसमे प्रायोगिक बारीकियो के साथ नये अनुभवो का क्रमबद्ध सयोजन एक विशेषता थी। आपने रगद्रव्यो के अन्वेषण के साथ एन्जाइम के अध्ययन की विल्सटैटर विधि की भाँति कार्य किया। रग और खमीर प्रक्रिया के गहरे सबध पर आटो वारबुर्ग (Otto Waıburg) ने अपने विचार प्रकट किये थे (देखिए, "कायिकी एव औषध मे नोबेल पुरस्कार", १९३१)। कून ने उसके रासायनिक एव जीवशास्त्रीय अर्थ को समझने की चेष्टा की। क्रमबद्ध कार्बनिक रसायन से इसका आरम्भ हुआ। बहुत समय से रसायनज्ञ बेजीन के ६ कार्बन परमाणु वाले घेरे से मोहित थे। विल्सटैटर ने इस मोह को मोड़ा और दिखाया कि एक ऐलकेलाइड--पेलीटियरीन (Pelletıerıne) मे, जो अनार से बनता है, आधारस्वरूप ८ कार्बन परमाणुओ का घेरा होता है। इन

कार्वन परमाणुओ मे एकातर रूप से एक गुण एव द्विगुण बधक होते थे, यह कौन्जुगेटी (conjugate) बधको का क्रम था। कून ने ऐसे कौन्जुगेटी कार्बन परमाणुओ की खुली शृखला बनायी। वे कार्बनिक रसायन के लिए रोचक थे और इसलिए भी क्योकि वे अनेक पौधो के रगद्रव्यो मे—गाजर की कैरोटीन, टमाटर की लाइकोपीन और क्रोसस की क्रोसेटिन मे—पाये जाते है। कून और कैरर दोनो ही इन रग-द्रव्यो की वास्तविक रासायनिक रचना को स्पष्ट करने के लिए आपस मे होड करते थे। इन रगद्रव्यो की विशेष जीवशास्त्रीय सक्रियता होती है और आशिक रूप मे मे ये विटामिन से सबधित होते है। विशेषतया कुछ निम्न पौधो के स्पोरो (गैमीटो) के लैंगिक पकन (ripening) मे कून ने क्रोसेटिन के उच्च विशिष्ट प्रभावो को दर्शाया। सूक्ष्म विधि एव स्पष्ट विचारधारा के फलस्वरूप कुछ मिलीग्राम पदार्थों से जटिल रासायनिक रचना का निर्धारण किया गया। विशिष्ट जीवशास्त्रीय प्रति-क्रियाओ के लिए प्रकृति अनेक प्रकार की रासायनिक रचनाओ का उपयोग करती है। उदाहरणस्वरूप, समुद्र के अर्चिन एक हार्मोन का स्राव करते है, यह नैपथलीन पदार्थ (हाइड्राक्सिल युक्त नैपथोक्वीनोन) है। यीस्ट मे भी एन्जाइम और विटामिन होते है। एक विटामिन, जो 'बी' समूह का है, एक चर्म रोग का नाशक है, फलत. इसको एडर्मीन कहा गया। इसके दूसरे नाम भी है; विटामिन बी$_6$ और पिरीडा-क्सिन। बाद के नाम से इसका रासायनिक सगठन स्पष्ट होता है। यह आक्सिजन युक्त पिरीडीन से बना होता है। जिस वर्ष नोबेल पुरस्कार दिया गया, कून ने इस विटामिन का पूर्ण रासायनिक सूत्र दिया। चूहे के दैनिक भोजन मे जब इसके १ मिली-ग्राम के सौवे भाग को मिला दिया जाता है तो इससे उसकी डर्मेटाइटिस ठीक हो जाती है।

अनेक प्राकृतिक स्वरूपो मे एन्जाइम, रगद्रव्य और विटामिन शर्करा, वसा और विशेषतया प्रोटीन से सयुक्त होते है। विल्सटैटर ने इन ढीले रासायनिक सयोगो को सिम्प्लेक्स (symplex) कहा, क्योकि वे आपस मे रहते हुए कई जीवित प्राणियो के सहजीवन (symbioses) से तुलनीय है। कून ने इन सिम्प्लेक्सो को घोलकर पौधों का अपवृत साबुन बनाने मे व्यावहारिक उपयोग किया, ये साबुन अपवृत इसलिए कहलाते है क्योकि इनमे कार्बनिक अम्ल और अकार्बनिक क्षार के स्थान पर अकार्बनिक अम्ल और कार्बनिक क्षार होते है। इनमे से कुछ अपवृत साबुन पुराने है, किन्तु औपध क्षेत्रो मे उनका उपयोग नवीन है।

आई० जी० फार्बेन कपनी के हाल के पुन सघटन मे टेक्निकल प्रशासन के लिए कून ने महत्त्वपूर्ण पद ग्रहण किया।

१९३९

लियोपाल्ड रुजिका (Leopold Ruzicka)
(१८८७--   )

"पालीमेथिलीन और उच्च टरपीनों पर कार्य के लिए।"

(१९३९ का पुरस्कार एडोल्फ बूटीनान्ड्ट (Adolf Butenandt) के साथ दिया गया था। (आगे देखिए)

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

लियोपाल्ड रुजिका का जन्म वुकोवर, यूगोस्लाविया मे हुआ था। आपने १९१८ मे अपना शिक्षात्मक जीवन आरम्भ किया। १९२६ मे आप यूट्रेक्थ (हालैंड) विश्व-विद्यालय के प्रोफेसर हो गये पर तीन वर्ष बाद आप जूरिख के टेक्नीशे होख्शूले मे लौट आये। गध-तेलो पर जो कार्य आपने किया, उससे उच्च टरपीनो का एक पृथक् समूह बन गया। आटो वालाख़ (Otto Wallach देखिए पृ० ४१) ने यह ज्ञात किया था कि टरपीन ऐसे पदार्थ से सबधित होता है जो प्राकृतिक रबर के आसवन से प्राप्त होता है। उसका रासायनिक सूत्र $C_5 H_8$ होता है। उसके अणु मे ४ कार्बन परमाणु होते है जो एकान्तर रूप से कौन्जुगेटीय द्विगुणक बधको से जुडे होते है। टरपीनो का साधारण सूत्र $C_{10} H_{16}$ होता है, वालाख़ ने $C_5 H_8$ सूत्र वाले पदार्थ को आधा अथवा अर्ध-टरपीन (hemiterpene) समझा, इसको आइसोप्रीन कहते है। उच्च टरपीनो को बनाने के लिए दो से अधिक अर्ध-टरपीनो का सयोग होता है। रुजिका ने आइसोप्रीन इकाई को कई अ-टरपीन (non-terpene) प्राकृतिक पदार्थों मे भी पहचाना और आपने इससे आइसोप्रीन नियम बनाया। कैरोटिन्वायडो की आणव रचना को समझने मे यह नियम बहुत सहायक होता है।

वसीय अम्लो को, जिनमे किसी पार्श्व शृखला के बिना एक लबी शृखला होती है, बनाने के लिए प्रकृति मे आइसोप्रीनो का उपयोग नही होता। कुछ तेज सुगधि वाले प्राकृतिक तैलो की रचना मे वसीय अम्ल की शृखला एक घेरा बनाती-सी जान पडती थी, इसका अम्लीय कार्बाक्सिल समूह–COOH–एक कीटोन समूह C=O मे परिवर्तित हो जाता था।

सुगधो मे सिवेट (Civet–मुश्क बिलाव से निकली हुई कस्तूरी) एक महत्त्व-पूर्ण पदार्थ है। रुजिका ने इसके एक मूल पदार्थ मे असाधारण रूप से लबी १७ कार्बन परमाणुओ की शृखला के घेरे को पाया। बाद मे आपने ऐम्बर्ग्रिस का, जो वीर्य ह्वेल (Sperm whale) की पाचक नली का एक निदान-शास्त्र सबधी पदार्थ है, अन्वेषण किया और आपने इसका सबध वायलेटो (violets) की कोमल सुगन्धि से स्थापित किया।

बेजीन के घेरे की तुलना मे टरपीनो के ६ कार्बन वाले घेरे मे हाइड्रोजन अधिक होता है। टरपीनो पर शोध के लिए जिस विधि का रुजिका ने उपयोग किया, उसमे अधिक हाइड्रोजन को निकालने के लिए विहाइड्रोजनीकरण किया जाता था, इससे हाइड्रोऐरोमेटिक पदार्थ बेजीन सरीखे ऐरोमेटिक पदार्थ मे परिवर्तित हो जाता है, इनका ज्ञात पदार्थो से सबध सरलता से स्थापित हो गया।

जूरिख के टेक्नीशे होख्शूले मे रुजिका महोदय कई दिशाओ मे अब भी कार्य कर रहे है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"सिवेटोन से आधारभूत प्रयोग किये गये। १७–सदस्य वाले घेरे की उपस्थिति के विरुद्ध साधारण और मेरे पक्षपात की अपेक्षा इस पदार्थ की जटिलता के स्पष्टीकरण मे मुझे कम सघर्ष करना पडा।

"जब यह ज्ञात हुआ कि हाइड्रोजनीकरण के फलस्वरूप प्राप्त पदार्थ डाइ-हाइड्रो-सिवेटोन और उसी डाइ-कार्बाक्सिलिक अम्ल $C_{17} H_{32} O_4$ से वोल्फ किर्शनर प्रतिक्रिया से प्राप्त पदार्थ एक ही थे तो सिवेटोन के लिए बिलकुल सममित सूत्र पर विचार करना था। डाइ-कार्बाक्सिलिक अम्ल $C_{17} H_{32} O_4$ का सूत्र हेप्टा-डिकेन–डाइ-अम्ल (hepta-decane-di-acid) बताया गया था और सश्लिष्ट अम्ल से इसकी तुलना निश्चित रूप से सिद्ध की जा सकती थी।

```
       HC═CH
      /     \
(CH2)7       (CH2)7
      \     /
        CO
```
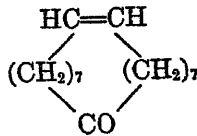
सिवेटोन

1 Lex Prix Nobel en 1939 से अनूदित।

"ऊपरी तौर से सिवेटोन और मस्कोन प्राकृतिक यौगिक नही जान पडते, क्योकि पुराना अनुभव है कि प्रकृति मे उचक-फाँद नही होती ("Natura non fecit saltus") । जब इन दोनो कीटोनो की उत्पत्ति का जीव-रसायन के दृष्टिकोण से विचार किया गया तो उससे उनकी अजीब रचना की एक सभावित व्याख्या की जा सकी। सिवेटोन ओलीनिक अम्ल के ६–आक्सीकरण से बन सकता है और बाद मे सिवेट बिल्ली मे असतृप्त डाइ-कार्बाक्सिलिक अम्ल का चक्रीकरण (cyclization) होता है। इसी प्रकार मस्कोन भी वसा-विपचन से बन सकता है—

CH——$(CH_2)_7$——CH_3	CH——$(CH_2)_7$——COOH
//	//
CH——$(CH_2)_7$——COOH	CH——$(CH_2)_7$——COOH
ओलीक अम्ल	असतृप्त डाइ कार्बोनिक अम्ल
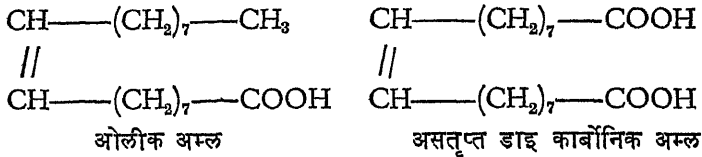
"आणव रचना की बारीकियो और कायिकी गुणधर्मो मे जो सबध है वह इन चक्रीय कीटोनो के घेर–सजातीय (ring-homologous) क्रम से स्पष्ट हो जाता है। ५–८ सदस्य वाले घेरो से जो गधित पदार्थ बनते हैं उनमे कडुवे बादाम, कैंखे Caraway और पिपरमिट की गध आती है, १०–१२ सदस्य वाले घेरो से कपूर जैसी गध आती है। जिन कीटोनो के घेरे मे १४–१८ सदस्य होते हैं, उनसे मुश्क की सुगधि आती है।

"१९२० से हम लोगो ने विस्तारपूर्वक सेस्क्वीटरपीन, डाइटरपीन और बाद मे ट्राइटरपीन यौगिको का अन्वेषण किया है, इनको "उच्च टरपीनो" अथवा "बहुटर-पीनो" के समूह मे रखा गया है। कार्य के लिए एक सरल अनुमान बनाया गया और फिर शीघ्रता से उस पर कार्य कर इन यौगिको के कार्बन-ढाँचे के विभिन्न पार्श्वों को ज्ञात करके उच्च टरपीन यौगिको का एक क्रम बनाया गया। कार्य करने के लिए उस समय जो अनुमान बनाया गया था, वह अब आइसोप्रीन नियम के नाम से प्रसिद्ध है, इसका आधार यह मानकर बनाया गया था कि उच्च टरपीनो का ढाँचा आइसोप्रीन के भागो से मिलकर बनता है।

"प्रकृति मे उच्च टरपीन यौगिको की बडी सख्या और उनकी जटिल रचना से इसकी सूचना मिलती थी कि क्रमबद्ध रचनात्मक विश्लेषण की साधारण विधि से इच्छित थोडे समय मे आइसोप्रीन नियम का मूल्याकन नही किया जा सकता। हम लोगो की समझ मे यह आया कि विहाइड्रोजनीकरण से परिणाम अधिक शीघ्र निकल सकते हैं।

"सक्षेप मे, इस पर मुझको बल देना चाहिए कि जिस विधि का चयन किया गया था उससे प्रत्याशित परिणाम शीघ्र निकले ओर इस प्रकार हमारी विधि की सफलता सिद्ध हुई।

CH₂OH

Phytol

CH₂OH
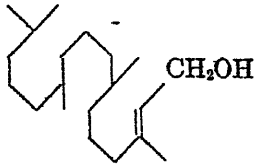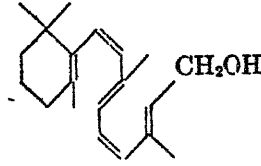
Vitamin A

"ये सूत्र दो महत्वपूर्ण प्राकृतिक यौगिको—फाइटॉल, जो पर्णहरिम का एलकोहलीय अवयव है, और विटामिन ए—के हैं। इन यौगिको की रचना की व्याख्या अति कठिन हुई होती, क्योकि इनकी थोडी ही मात्रा हमको प्राप्य थी, किन्तु आइसोप्रीन नियम द्वारा बतायी विधि से यह सभव हो सका। दोनो दशाओ मे प्राप्त सूत्र को या तो स्वय प्राकृतिक पदार्थ (फाइटॉल) अथवा उसके परहाइड्रो यौगिक (विटामिन) का सश्लेषण करके पुष्ट एव नियत्रित करना था।

"ऐन्ड्रोस्टीरोन के पूर्ण सूत्र को विश्लेपण द्वारा निश्चित नही किया जा सका था, किन्तु यदि लिंग-हार्मोनो एव कोलस्टीरोल के सबध मे हमारे अनुमान सही थे तो ऐन्ड्रोस्टीरोन का सूत्र C_{19} H_{30} O_2 होना चाहिए। चार पृथक् विन्यास समावयवी स्टीरीन थी और इनमे से किसीएक का ऐन्ड्रोस्टीरोन के कृत्रिम उत्पादन के लिए उपयोग किया जा सकता था। इन चार समावयवो के ऐसीटेटो के आक्सीकरण से १९३३।४ मे हम लोग C_{19} H_{32} O_2 के प्रत्याशित चार समावयवी ऐसीटेटो को प्राप्त कर सके, इनमे से एक जो एपी-डाइहाइड्रोकोलस्टीरोल से प्राप्त किया गया था, वह ऐन्ड्रोस्टीरोन से मिलता है।

"यह लिंग हार्मोन का पहला कृत्रिम उत्पादन ही नही, अपितु उसकी रचना का पूरा सबूत था, इससे लिग हार्मोन का स्टीरोल से (जिसमे सूक्ष्मतम स्टीरिक बारीकियाँ शामिल हैं) सबध पूर्णरूप से प्रदर्शित हुआ।"

एडोल्फ बूटीनान्ड्ट (Adolf Butenandt)
(१९०३--   )

"लिंग हार्मोनो पर कार्य के लिए।"

(१९३९ का पुरस्कार लियोपाल्ड रुजिका के साथ दिया गया था, पीछे देखिए)

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

एडोल्फ बूटीनान्ड्ट का जन्म वेसरमुएडे, जर्मनी मे हुआ था। आपने गाटिन्जेन मे विनडाउस (Windaus) से रसायन की शिक्षा प्राप्त की और १९२७ मे आप स्नातक हुए। तीन वर्ष बाद आप कार्बनिक एव जीव-रासायनिक प्रयोगशाला के डाइरेक्टर हो गये। उल्का की भाँति आपका जीवन, रिचर्ड कून के जीवन से मिलता-जुलता है, और उनके साथ ही पुरस्कार न प्राप्त कर सकने का दुर्भाग्य आपको भी सहना पडा।

जीवन-रसायन के इतिहास मे १९२९ का वर्ष चिरस्मरणीय रहेगा। इस वर्ष ड्वायसी (Doisy) द्वारा अमेरिका मे और स्वतत्र रूप से बूटीनान्ड्ट द्वारा जर्मनी मे वह लिंग हार्मोन शुद्ध एव केलास रूप मे प्राप्त किया गया, जो मादाओ के लैंगिक विकास के लिए उत्तरदायी है। यह पदार्थ पहले फालीक्युलिन (folliculin) कहलाता था, क्योकि इससे उसके स्रोत एकसेवनी (follicle) का पता चलता था। अब इसको एस्ट्रोन कहते है। यह वह पदार्थ है, जो प्राणी को गर्भ-चक्रो के लिए तैयार करता है, इसका उच्च निर्वात पर आसवन किया जा सकता है। २५६° से० का इसका निश्चित गलनाक होता है, और इसके एक ग्राम के २५ लाखवे भाग से बधिया किये हुए चूहे मे यूटेरस का विकास होने लगता है।

यह हार्मोन गर्भिणी स्त्रियो के मूत्र मे पाया जाता था, फलत मनुष्यो के मूत्र मे नर-लैंगिक हार्मोन का खोजना युक्तियुक्त था। लडन के सी० फक (C Funk) महोदय ने उसमे इसकी उपस्थिति को दर्शाया और इसके अलग करने की विधियो का श्रीगणेश किया। जब यह पदार्थ खसी मुर्ग को खिलाया जाता है तो उसकी कलँगी बढ़ने लगती है। प्रति उपयुक्त भार द्वारा वृद्धि के वेग से हार्मोन की सक्रियता को मापा जा सकता है। नर-मूत्र से प्राप्त शुद्ध उदासीन तेल मे हार्मोन की मात्रा इतनी बढा दी जाती है, जिसके लगभग २० मिलीग्राम से एक हार्मोन की इकाई बन सके। बूटीनान्ड्ट ने अम्लो और क्षारो से इसके सार को निकाल कर २० मिलीग्राम की

सक्रियता को केवल ० ३ ग्राम से ही प्राप्त किया। इस दशा मे यह यौगिक शुद्ध मादा हार्मोन की सक्रियता की तुलना मे अशुद्ध था। जिन अशुद्धियो पर सदेह किया गया था, वे अधिशोषण अथवा निष्कर्षण (extraction) की विधियो से दूर न हो सकी, किन्तु जब इसमे हाइड्राक्सिल एमीन को जोडा गया तो यह प्रतिकर्मक कीटोन C=O समूह से जुड गया, इसके फलस्वरूप पदार्थ का एक छोटा भाग केलासित हो गया। सावधानी से पृथक् किये गये केलासो की सक्रियता तिगुनी हो गयी। जब एमीन समूह को पुन तोड लिया गया और इस अवशेष का निर्वात मे ऊर्ध्वपातन किया गया, तो एक केलास रूप पदार्थ प्राप्त हुआ। इसके एक ग्राम के दस लाखवे भाग को जब १० भागो मे ५ दिन तक लगाया जाता था तो इससे निश्चित रूप मे हार्मोन प्रभाव होता था। १९३१ मे बूटीनान्ड्ट ने रिपोर्ट दी कि इस पदार्थ का १५ मिलीग्राम बनाया जा चुका था। इतने पदार्थ मे ७००० गैलन मूत्र की सक्रियता थी।

बूटीनान्ड्ट ने १९३३ मे डान्जिग मे इस कार्य को जारी रखा। १९३६ से लेकर आप बर्लिन–डाह्लेम के कैसर विलहेल्म इस्टीट्यूट के जीव-रसायन के डाइरेक्टर रहे। वहाँ भी आप इस पर कार्य करते रहे। आपने मेरियन (Merian लदन–१९३०) के साथ ही साथ इस हार्मोन के कार्बन ढाँचे को कोलस्टीरोल और कोलिक अम्ल से सबधित किया और पशुओ एव पौधे के बीजो के लिए विशिष्ट सक्रियता वाले कई पदार्थो का आविष्कार किया। इनमे से एक हार्मोन मे कीटोन समूह तीसरे कार्बन परमाणु पर होता है और १७वे कार्बन परमाणु पर हाइड्राक्सिल समूह होता है। यदि इस यौगिक मे चौथे और ५वे कार्बन परमाणु एक द्विगुणक बधक से जुडे होते है, तो यह एक तीव्र नर-हार्मोन की भाँति क्रिया करता है, यदि द्विगुणक बधक पहले और दूसरे कार्बन परमाणु पर चला जाता है तो हार्मोन मे काफी तीव्र एस्ट्रोजनीय (etrogenic) प्रभाव होते है। आपके कार्य का यह सबसे महत्त्वपूर्ण एव रोचक परिणाम था।

इस रोचक अन्वेषण से यह चेतावनी मिलनी चाहिए कि हार्मोन सान्द्रो के औषधोपयोग मे काफी सावधानी रखनी चाहिए। इसी के साथ-साथ लिंग हार्मोनो एव कैसर–उत्पादक पदार्थो की रासायनिक रचना का सबध केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ही रोचक नही है। एक विस्तृत परीक्षा मे ३००० चुहियो पर प्रयोग किया गया। एक-सेवनियो से प्राप्त हार्मोनो के सभावित कैसर-उत्पादक गुणधर्मो की इनमे खोज की गयी। कम-से-कम इन विशिष्ट हार्मोनो के लिए आपने यह दिखाया कि इनके इस प्रकार के कोई प्रभाव नही होते।

१९४५ से बूटीनान्ड्ट ने ट्वीबेन्गेन के इस इस्टीट्यूट (अब मैक्स प्लाक इस्टीट्यूट) के डाइरेक्टर-पद के साथ-साथ वही के विश्वविद्यालय के कायिकी रसायन का आचार्य पद भी सुशोभित किया है।

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

जब हम प्रायोगिक परिणामो से सार्वभौमिक निष्कर्ष निकालते है, तो हमे अपवादो एव उनकी सीमाओ के लिए तैयार रहना चाहिए, कभी-कभी उनसे नये एव आश्चर्यजनक नियम भी बनते है। उच्च टरपीनो के रसायन से अनेक ऐसे उदाहरण मिलते है। जब रुजिका ने यह ज्ञात किया कि कार्बन परमाणुओ के घेरे मे १७ तक सदस्य हो सकते है तो घेरे सबधी पुराने नियमो के स्थान पर नये नियम बनाने पडे। इसके विपरीत, इन सार्वभौमिक निष्कर्षो का हम को अधिकतम उपयोग करना पडता है; उनकी सीमाएँ जब जान ली जाती है, तो उनका स्वरूप निश्चित हो जाता है। "आइसोप्रीन नियम" इस क्षेत्र मे शोध-कार्यकर्त्ताओ के लिए उपयोगी रहेगा, यद्यपि और दूसरे नियम होने के कारण इसका क्षेत्र सीमित रहता है।

जीवशास्त्रीय एव औषधीय दृष्टिकोण से सक्रिय रासायनिक पदार्थों के क्षेत्र मे सार्वभौमिक निष्कर्ष विशेष रूप से कठिन होते है। ऐसे पदार्थो के अणु मे परमाणुओ की सापेक्ष स्थिति अथवा उनके सगठन के थोडे अतर से ही प्राणियो पर उनके प्रभाव मे निश्चित परिवर्त्तन हो जाता है। आणव रचना मे ऐसे ही छोटे सापेक्ष परिवर्त्तनो से कोलस्टीरोल का उन अवयवो (Organs) पर प्रभाव पडता है, जो प्राणी के लैंगिक पकन (परिपक्वता) से सबधित होते है। लिंग हार्मोनो की रासायनिक रचना की अच्छी जानकारी के फलस्वरूप बडे औषधोपयोगी पदार्थो का सश्लेषणात्मक उत्पादन सभव हुआ है। इन हार्मोनो से मिलते-जुलते पदार्थ से आर्थ्राइटिस (Arthritis) का निदान किया जा सका। इस पदार्थ—कार्टीसोन—के सश्लेषणात्मक उत्पादन से इसका मूल्य २०० डालर से ३५ डालर प्रति ग्राम तक गिर गया और बढती हुई माँगो की पूर्ति के लिए इसका उत्पादन बढाना पडा।

१९४०-१९४१-१९४२

कोई पुरस्कार नहीं दिया गया

१९४३

जार्ज डी हेवेसी (George De Hevesy)
(१८८५--   )

"रासायनिक प्रक्रमो में खोजक (tracer) रूप में समस्थानिको के उपयोग संबंधी कार्य के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

हेवेसी ने अपनी मातृभूमि, बुडापेस्ट के स्कूल मे अध्ययन किया। तत्पश्चात् आप अध्ययन के लिए जर्मनी और इग्लैण्ड चले गये। १९०८ मे आपने फ्राइबुर्ग इम ब्राइसगाउ से डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। वहाँ से आप कार्ल्सरुहे मे हाबेर के पास गये, तत्पश्चात् मैन्चेस्टर मे रदरफोर्ड के पास चले गये। रदरफोर्ड ने निष्क्रिय रेडियम जी० ओर सीस से रेडियमधर्मी रेडियम डी को पृथक् करने की समस्या आपको दी। इस समस्या को हल करने का प्रयास हेवेसी के जीवन-कार्य के लिए निश्चयात्मक बन गया। जब आपने यह दिखा दिया कि यह पृथक्करण सब सुलभ रासायनिक विधियो से असभव है, तो आपने इस असफलता को रेडियम डी के विचित्र गुणधर्म के उपयोग मे सफलीभूत किया, इससे सीस की उपस्थिति सूचित होती थी और इसकी मात्रा का निर्धारण रेडियमधर्मी समस्थानिक द्वारा दी गयी रेडियमधर्मिता के मापन से होता था। आपने १९१३ मे रेडियम-शोध के वियना इस्टीट्यूट मे एफ० पैनेथ के साथ इस विधि का विकास किया।

हेवेसी बुडापेस्ट लौट आये और वही १९१८ मे प्रोफेसर बन गये, किन्तु वहाँ आप वहुत दिनो तक नही रहे। नील्स ब्होर द्वारा आमन्त्रित किये जाने पर आपने कोपेनहागेन मे सैद्धातिक भौतिकी के इस्टीट्यूट मे कुछ वर्ष बिताये। रटजन किरणो द्वारा आपने जर्कोनियम खनिजो का अन्वेपण किया और कास्टर (Coster) के साथ एक नये तत्त्व हैफनीयम का १९२२ मे आविष्कार किया। इस समय आपने समस्थानिकों को भौतिक विधि से पृथक् करने का भी प्रयास किया। यह इस पूर्व विचार

(premise) पर आधारित था—मिश्रित तत्त्व के वाप्प-कला (phase) में हलके समस्थानिक को अधिक मात्रा मे होना चाहिए, यदि मिश्रित तत्त्व के साथ हुए सतुलन से उसको शीघ्र हटा लिया जाय। पारद ओर क्लोरीन मे (हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के रूप में) किये गये सूक्ष्म प्रयोगो से ज्ञात हुआ कि अवशेप के परमाणु-भार की अपेक्षा वाष्पशील अवयव (fraction) का परमाणुभार वस्तुत ० १ प्रतिशत कम था।

एक बार फिर १९२६ मे फ्राइवुर्ग मे हेवेसी ने पृथ्वी और सृष्टि मे रासायनिक तत्त्वों के सापेक्ष बाहुल्य का अध्ययन किया। एक्स-किरण प्रति-दीप्प विकिरण की सहायता से किये गये रासायनिक विश्लेपण द्वारा गणना पर यह अध्ययन आधारित था।

१९३४ मे साधारण रूप से ३१ के स्थान पर ३२ परमाणु-भार वाले रडियो फास्फोरस के उत्पादन से हेवेसी को एक शक्तिशाली यत्र मिला, जिसमे जीवन-प्रक्रमो के लिए महत्त्वपूर्ण रासायनिक प्रतिक्रियाओ के रहस्य का उद्घाटन करने मे आप सफल हुए। अकार्वनिक रसायन से, भौतिकी के क्षेत्र से होकर, हेवेसी ने इस प्रकार, कार्बनिक रसायन में प्रवेश किया।

१९४३ से हेवेसी स्टाकहाम विश्वविद्यालय के कार्बनिक रसायन के इस्टीट्यूट मे प्रोफेसर है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"मान लीजिए कि हम नाइट्रेट रूप मे १ ग्राम सीस को जल मे घोलते है। इसमे न्यून भार वाले रेडियम डी को मिलाया जाता है, इसकी रेडियमधर्मिता १० लाख सापेक्ष इकाई है (इस सक्रियता के मापन के लिए विद्युत्दर्शी का उपयोग किया जाता है)। अब हम इस लेबल लगे सीस से जटिल कार्य करते हैं। इन कार्यविधियो के समय हम किसी अवयव मे भी यदि निश्चित रूप से १ रेडियमधर्मी इकाई की उपस्थिति को दर्शा देते है, तो हमे यह निष्कर्ष निकालना चाहिए कि उस अवयव मे आरम्भ के १।१००० मिलीग्राम सीस-परमाणु-युक्त सीस नाइट्रेट का कुछ अश अवश्य है।

"लेबेल लगे हुए सीस का पहला उपयोग कुछ बहुत ही अविलेय सीस यौगिको, जैसे सीस क्रोमेट की विलेयता के निर्धारण मे हुआ। इन प्रयोगो मे, रेडियम डी नही, अपितु सीस के दूसरे समस्थानिक थोरियम बी का सूचक रूप मे उपयोग हुआ था।

1 Lex Prix Nobel en 1940-44 से अनूदित।

थोरियम बी की १,००,००० सापेक्ष इकाइयो को १० मिलीग्राम सीस वाले सीस नाइट्रेट मे मिलाया गया और इस नाइट्रेट को क्रोमेट मे परिवर्त्तित करके लेबेल लगा हुआ सीस बनाया गया। जब इस यौगिक के सपृक्त विलयन को ताप स्थापी (thermostat) मे काफी देर तक रख लिया गया तो इसके कुछ घन सेटीमीटर को वाष्पीभूत करके इसको सुखा लिया गया। इस प्रकार इसके सगठन (composition) का निश्चय करके विद्युत्दर्शी से प्राय अदृश्य मात्रा के अवशेष की रेडियमधर्मिता नापी गयी। थोरियम बी की ज्ञात इकाइयो की सख्या से सीस की मात्रा की गणना की गयी, एक इकाई $१०^{-६}$ ग्राम सीस के बराबर थी, इस प्रकार सीस क्रोमेट की विलेयता की गणना अणु (moles) प्रति लिटर २ $१०^{-७}$ मे की गयी।

"कार्बन डाइसल्फाइड पर न्यूट्रान रूपी बम फेक कर हमने रेडियमधर्मी फास्फोरस का समस्थानिक बनाया और इससे शीविट्ज (Chicwitz) के साथ फास्फोरस विपचन का अध्ययन किया। इन प्रयोगो मे प्रो० नील्स ब्होर द्वारा कृपा करके दिये गये रेडियम और बेरिलीयम से उत्सर्जित सभी न्यूट्रानो का १० लिटर कार्बन डाइ सल्फाइड द्वारा अवशोषण कर लिया जाता था। इस प्रकार बने ^{32}P को तनु नाइट्रिक अम्ल अथवा जल से प्रतिक्रिया करके निकाल लिया जाता था, फ़ास्फोरस के निकल जाने के वाद इस कार्बन डाइसल्फ़ाइड का न्यूट्रान रूपी बमो के अवशोषण मे पुन उपयोग हो सकता था।

"समस्थानिक सूचको के उपयोग से जो सबसे अद्भुत परिणाम हुआ, वह कदाचित् शरीर के अवयवो की गतिशील अवस्था का आविष्कार है। जिन अणुओ से पौधे अथवा पशु के अगो का निर्माण होता है वे निरतर नये बनते रहते है। नये बनने की इस प्रक्रिया मे केवल भोजन से प्राप्त अणु और परमाणु ही भाग नही लेते, अपितु किसी इद्रिय अथवा एक प्रकार के अणु मे उपस्थित परमाणु अथवा मूलक शीघ्र ही किसी दूसरी इद्रिय या किसी दूसरे प्रकार के अणु मे उसी या किसी दूसरी इद्रिय मे पाये जाते है। भोजन के साथ लिया गया फास्फेट मूलक पहले ऑत की म्यूकोज मे द्राक्षाशर्करा के फास्फोरिलेशन (Phosphorylation) मे भाग लेता है, इसके पश्चात् स्वतत्र फास्फेट के रूप मे रक्त-धारा मे प्रवाहित होता है, वहाँ रुधिर कोण (red corpuscle) मे प्रवेश करके ऐडीनोसीन ट्राईफास्फोरिक अम्ल के अणु से गुँथ जाता है और उसके ग्लाइकाल सबधी प्रक्रम मे भाग लेकर पुन रक्त धारा-प्रवाह मे सम्मिलित हो जाता है। तत्पश्चात् वह यकृत की कोशिकाओ मे प्रवेश करता है और फास्फेटाइड अणु के बनाने मे भाग लेता है, थोडी देर बाद इस रूप मे वह रक्त मे आ जाता है और तिल्ली मे

प्रवेश करता है। कुछ देर बाद वह लिम्फोसाइट (lymphocyte) का अवयव बन कर इस इद्रिय से निकल जाता है। प्लाज्मा (plasma) के अवयव के रूप मे हमे फ़ास्फेट मूलक पुन मिलता है, यहाँ से उसे अस्थि-पिंजर मे जाने का मार्ग मिलता है। अस्थि-पिजर की सबसे ऊपर वाली आणव सतह मे जमा होकर इसे प्लाज्मा अथवा लिम्फ (lymph) के अन्य फास्फेट मूलको से विस्थापित होने का अवसर मिलता है, किन्तु यह भी सभव है कि इसे वहाँ स्थायी रूप से टिकने का सौभाग्य प्राप्त हो जाय। यह तब होता है जब यह नयी वनी अपाटाइट की तरह की हड्डी-क्रिस्टेलाइट (crystallite) मे नीचे बैठ जाता है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

किसी तत्त्व मे रेडियम धर्मी लेबेल को जोड कर हम वस्तुत उस तत्त्व मे एक ऐसा भौतिक गुणधर्म जोड देते है, जिसका सरलता से मापन हो सकता है। इमसे शुद्ध रूप मे तैयार अथवा पृथक् किये बिना १ ग्राम की दस लाखवी मात्रा का निर्धारण भी सभव हो जाता है। इस निर्धारण का व्यावहारिक महत्त्व इस बात से स्पप्ट है कि एक ग्राम के १ खरबवे ($१०^{-९}$) भाग मे किसी तत्त्व, जैसे क्लोरीन के ६००,००० खरब परमाणु होते है। यह पता चला है कि कुछ तत्त्व पौधो की वृद्धि अथवा उनके पकने की जीव-शास्त्रीय प्रतिक्रियाओ मे काफी महत्त्वपूर्ण भाग लेते है, बिलकुल सूक्ष्म मात्रा मे भी उनकी उपस्थिति पर पशुओ का स्वास्थ्य निर्भर रहता है।

एर्‌हीनियस (Arrhenius) महोदय ने विलयन मे पदार्थ की आयनीय अवस्था का (दे० पृ० १५) जो सिद्धात बताया था वह हेवेसी की विधि से पूर्ण रूप से सीधे ही सिद्ध हो गया। हरे पौधो द्वारा कार्बन डाइ आक्साइड और जल के स्वीकरण के हमारे ज्ञान मे इससे काफी वृद्धि हुई है। थायर्‌वायड द्वारा आयोडीन का अवशोषण वस्तुत रेडियमधर्मी आयोडीन के मापन से यथार्थ रूप मे ज्ञात हुआ है। भोजनो, औषधियो और विषो का शरीर मे जो हाल होता है, वह रेडियमधर्मी खोजक विधियो से स्पष्ट हुआ है। जब ग्रथियो, मास-पेशियो अथवा अस्थि के ततुओ के महीन सैक्शन फोटोग्राफिक पटल पर रखे जाते है तो पटल के प्रति वर्ग सेटीमीटर से निकले २० लाख β-कणो का परिचय प्राप्त किया जा सकता है।

साइक्लोट्रान अथवा यूरेनियम-पुजो से अब कार्बन, फास्फोरस और आयोडीन के समस्थानिक सुलभ मात्रा मे प्राप्त किये जा सकते है। इस कारण इन पदार्थो का औषधि रूप मे उपयोग बढता जाता है। बिलकुल हाल मे ही उच्च औषध सक्रियता और विकिरण वाले "कोबाल्ट ६०" का औषध-क्षेत्र मे पदार्पण हुआ है।

१९४४

ओटो हॉन (Otto Hahn)

(१८७९-   )

"भारी नाभिको के खडन के आविष्कार के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

माइन पर स्थित फ्राकफोर्ट, जर्मनी मे आटो हॉन का जन्म हुआ था। आपने म्यूनिख और मार्बुर्ग मे रसायन का अध्ययन किया और १९०१ मे कार्बनिक रसायन की थीसिस से डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। मार्बुर्ग मे कुछ वर्ष तक आप असिस्टेट रहे, इसके पश्चात् आपने एक वर्ष लदन मे सर विलियम रैमजे की प्रयोगशाला मे बिताया। आपने थोरियम के रेडियमधर्मी विच्छेदन पर अन्वेषण किया। इससे थोरियम श्रेणी मे एक नया तत्त्व—रेडियोथोरियम—बढ गया। बाद मे (१९०७) आपने इसके पूर्व तत्त्व मेसो-थोरियम को भी ज्ञात किया। इसके एक वर्ष पहले आपने मान्ट्रियल मे रदरफोर्ड की प्रयोगशाला मे कार्य करके रेडियो-ऐक्टीनियम (radio-actinium) का आविष्कार किया था। यह रेडियम-धर्मी तत्त्व विरल मृदा के एक तत्त्व लैन्थेनम् से रासायनिक रूप मे एक समान था। जब आप युद्धोपरात शोधकार्य मे व्यस्त हुए, तब ऐक्टीनियम के रहस्यो ने आपका ध्यान १९१८ मे पुन आकर्षित किया। लिसे माइटनर (Lise Meitner) के साथ आपने एक नया तत्त्व— प्रोटो-ऐक्टीनियम—ज्ञात किया, यह जटिल ऐक्टीनियम श्रेणी का पहला तत्त्व है।

बर्लिन-डाहलेम के कैसर विलहेल्म इस्टीट्यूट मे यह रासायनिक शोध-कार्य किया गया। १९२८ मे आप इसके डायरेक्टर हो गये। अभी तक जितने रेडियमधर्मी रूपान्तर किये गये थे, यहाँ तक कि न्यूट्रान रूपी बमो की कृत्रिम विधि से भी, उन सबमे बने नये तत्त्व, मूल तत्त्वो के या तो समस्थानिक होते थे या उनके निकट सबधी। ६ जनवरी १९३९ को हॉन का पहला प्रकाशन निकला जिसमे "नाभिकीय भौतिकी

के सभी पूर्व परिणामो के विरोधी प्रयोगो" का वर्णन था । यूरेनियम के नाभिक का दो भागो मे खडन किया गया था, ये दो तत्त्व, आवर्त्त वर्गीकरण मे यूरेनियम से काफी दूर थे । आपने शीघ्र ही ज्ञात किया कि भारी नाभिक के खडन के फलस्वरूप इन दो भागो के अतिरिक्त अनेक छोटे-छोटे अन्य टुकडे भी निकलते थे ।

जर्मनी मे युद्ध के वर्षो मे भी हॉन वैज्ञानिक कार्य करते रहे । पश्चिमी क्षेत्र की कैसर विलहेल्म गिजेलशाफ्ट के आप १९४६ मे सभापति हो गये, जर्मनी के विज्ञान-क्षेत्र मे यह महत्तम सफलता है ।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"कई वर्षो के कार्यो के फलस्वरूप हम (हॉन–Hahn, माइटनर–Meitner, और स्ट्रासमान –Strassman) ने १९३५–३८ मे कृत्रिम रूप से प्राप्त रेडियमधर्मी परमाणुओ के अनेक विविध रूपो का उत्पादन किया । ये थोडे समय तक जीवित यूरेनियम के कृत्रिम अनुमानित समस्थानिको से सीधी अथवा जटिल विधि से β–विकिरण के फलस्वरूप बनते थे, इसलिए इनको पार यूरेनियम (Trans-uraniums) अथवा यूरेनियम से परे—कहना पडा ।

"क्यूरी (Curie) और साविच (Savitch) ने १९३७–३८ मे हॉन, माइटनर और स्ट्रासमान से स्वतत्र रहकर एक तथाकथित ३ ५ घटे वाले पदार्थ का वर्णन किया था, इसको इन लोगो ने यूरेनियम के साथ न्यूट्रान के उपविकिरण से प्राप्त किया था । इसके रासायनिक गुणधर्मो का निर्धारण सरल नही था ।

"यह ३ ५ घटे वाला पदार्थ पार-यूरेनियम का समझा जाता था । अत मैंने स्ट्रासमान के साथ कार्य करके इसको फिर से प्राप्त करने का प्रयत्न किया । बारीकी से परीक्षण करने पर हम अद्भुत निष्कर्षो पर पहुँचे । ये परिणाम इस प्रकार हैं—हॉन, माइटनर और स्ट्रासमान द्वारा वर्णित पार-यूरेनियम के अतिरिक्त दो उत्तरोत्तर α– विकिरण के फलस्वरूप, तीन अन्य कृत्रिम एव β–विकिरणशील रेडियम समस्थानिक निकलते है, इनका अर्द्ध-जीवन विभिन्न होता है । तत्पश्चात् ये कृत्रिम सक्रिय β–विकिरण शील ऐक्टीनियम समस्थानिक बन जाते है ।

"तथापि, उपर्युक्त उपविकिरण की परिस्थितियो मे रेडियम का उत्पादन काफी अजीब था । जब निम्न ऊर्जा वाले न्यूट्रानो का प्रयोग होता था, तो α– विकिरण

1. Lex Prix Nobel en 1940-44 से अनूदित ।

वाले रूपातरो का परीक्षण नही हुआ था। किन्तु यहाँ, जैसा पार-यूरेनियमो के साथ होता है, एक ही समय मे कई समस्थानिक बन जाते थे।

"विभिन्न दिशाओ मे प्रयोग किये गये। चूँकि नये बने पदार्थो का विकिरण कमजोर होता था और चूँकि नये समस्थानिको के अधिकतम स्थायी समस्थानिक की β– किरण का काफी अवशोषण होता था, अत हम लोगो ने कृत्रिम 'रेडियम' को सह-अवक्षेपित (carrier) की भाँति प्रयुक्त बेरियम से पृथक् करने का यथा-सम्भव प्रयत्न किया।

"नये कृत्रिम रेडियम समस्थानिको को बेरियम से पृथक् करने के हमारे सारे प्रयत्न असफल रहे।

"हम लोगो ने शुद्ध प्राकृतिक रेडियम समस्थानिको को अपने उन कृत्रिम 'रेडियम समस्थानिको' से मिलाया जिनसे रूपातर के फलस्वरूप बने पदार्थो को पृथक् कर लिया गया था। पहले की ही विधि से इनका प्रभाजन (fractionation) किया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि प्राकृतिक रेडियम समस्थानिको को बेरियम से पृथक् किया जा सका, किन्तु कृत्रिम समस्थानिको को पृथक् नही किया जा सका।

"हम लोगो ने इन परिणामो की दूसरी विधि से भी जाँच की। हम लोगो ने फिर ज्ञात किया कि क्षारीय मृदा (alkaline earth)–समस्थानिक, जिसको हम लोगो ने रेडियम समझा था, वस्तुत कृत्रिम सक्रिय बेरियम था।

"अत इस प्रक्रम मे ९२ नाभिकीय चार्जवाले यूरेनियम के नाभिक का खडन होता है और इससे दो बीच के भारी नाभिक बनते है। यदि उनमें से एक बेरियम है, जिसकी परमाणु-सख्या ५६ है, तो इसके साथ-साथ दूसरा क्रिप्टान होना चाहिए, जिसकी परमाणु सख्या ३६ है। यूरेनियम की सहति की जब स्थायी समस्थानिको—बेरियम और क्रिप्टान—से तुलना की जाती है, तो ज्ञात होता है कि यूरेनियम मे न्यूट्रान की सख्या अपेक्षतया काफी अधिक है, दूसरे शब्दो मे उसमे न्यूट्रान प्रचुरता मे है। फलत वे β–किरणो का उत्सर्जन करके उच्च परमाणु-सख्या वाले स्थायी तत्त्वो को बनाते है।

"श्री स्ट्रासमान और मैंने (१० फरवरी १९३९ वाले प्रकाशन मे) इस सभावना पर भी विचार किया है कि खडन-प्रक्रम मे ही न्यूट्रान निकले। एफ० जोलियो (F Joliot) ने सर्वप्रथम ज्ञात किया कि वस्तुत ऐसा ही होता है।

"युद्ध के समय, रसायन के कैसर विलहेल्म इस्टीट्यूट मे, हम लोगो ने इन जटिल खडन प्रतिक्रियाओ पर क्रमबद्ध शोध जारी रखा, इस प्रकार नयी प्रतिक्रियाओं का आविष्कार हुआ। जापानी कार्यकर्त्ताओं ने ज्ञात किया कि धीमे किये गये न्यूट्रानों

की अपेक्षा तीव्र न्यूट्रानो से यूरेनियम का खडन अधिक सम्मित रूप से होता है। १९४५ के आरम्भ मे रसायन के कैसर विलहेल्म इस्टीट्यूट मे हम लोग २५ विभिन्न तत्त्वो की एक तालिका बनाने मे सफल हुए। इनकी परमाणु-सख्या ३५ (ब्रोमीन) से लेकर ५९ (प्रेजीओडिमियम) तक थी। ये तत्त्व यूरेनियम खडन से तुरत अथवा जटिल विधि से प्राप्त १०० विभिन्न सक्रिय प्रकार के परमाणु के रूप में थे। परमाणुओ के सक्रिय प्रकार, जिनको हमने १९३९ तक पार-यूरेनियम कहा था, वे सक्रिय खडन के और उससे बने पदार्थ थे, वस्तुत वे तत्त्व यूरेनियम के परे नही थे।"

सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रभाव

प्राकृतिक रेडियमधर्मिता मे परमाणु का नाभिक स्वत और अचानक घटता जाता है। इस विघटन मे छोटे कण बडी चाल से निकलते हैं। परमाणु-भार की थोडी-सी वृद्धि (देखिए, पीछे जोलियो–क्यूरी) से इसका उलटा प्रक्रम कृत्रिम रूप से किया जा सका। हॉन ने यह देखा कि विघटन इस प्रकार हो सकता है जिससे लगभग बीच के भार वाले नाभिक बने। कृत्रिम रूप से रेडियमधर्मी तत्व β–कणो का उत्सर्जन करते हैं। हॉन का ध्यान सबसे पहले इसी ओर गया। खडन के समय जो अधिक भारी पदार्थ होते हैं उनमे से पार्श्व-प्रतिक्रिया की भाँति न्यूट्रान निकलते है। लिसे माइटनर ने परमाणु रचना सबधी ब्होर के सिद्धात के आधार पर नये परिणामो की गणना से ज्ञात किया कि इस प्रतिक्रिया मे काफी अधिक ऊर्जा निकलनी चाहिए। नाभिक खडन की बड़ी ऊर्जा का प्रायोगिक मापन फ्रिश (Frisch) ने किया और बाद मे जोलियो ने इसे कुछ दृढ किया।

तत्त्वो के एक दूसरे से और द्रव्य के ऊर्जा से सबध पर जिन सिद्धान्तो का बहुत दिनो से विकास हो रहा था उनसे यह निष्कर्ष निकलता था कि भारी परमाणुओ में काफी अधिक ऊर्जा जमा है। ऐस्टन (Aston) ने इस पर विचार भी किया था (देखिए पृ० ८८) कि यदि हम इस ऊर्जा को विकसित कर सके तो इसके क्या परिणाम होगे। अब द्रव्य के ऊर्जा मे परिवर्त्तन की विधि ज्ञात हो गयी है। यह विधि कदाचित् मानवता को नष्ट कर दे या उसका भविष्य उज्ज्वल कर दे।

१९४५

आरटूरी इलमारी विरटानैन (Artturi Ilmari virtanen)

(१८९५--)

"खेती एवं पोषकाहारी रसायन पर शोध-कार्य एवं आविष्कारों के लिए, विशेषतया चारे (fodder) को ठीक तरह से रखने के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

आरटूरी इ० विरटानेन का जन्म हेलसिनकी, फिनलैण्ड मे हुआ था। आपने वही के विश्वविद्यालय मे रसायन का अध्ययन किया। आपने प्रोफे० ओ० अशान् (O Aschan) की सरक्षता मे डाक्टर की उपाधि के लिए थीसिस सबधी कार्य किया। इसमे आपने पाइन रोजिन (pine rosin) के मुख्य भाग एबीटिक अम्ल की रचना का स्पष्टीकरण किया था। १९१९ मे स्नातक होने के बाद आपने अपने रासायनिक प्रशिक्षण को पूर्ण नही समझा। अत आपने स्विट्जरलैण्ड, जर्मनी और स्वीडेन की यात्राओ मे भौतिक एव जीवन-रासायनिक विधियो का अध्ययन किया। आप १९२४ मे हेलसिनकी विश्वविद्यालय के डोसेन्ट (docent) हो गये, १९३१ मे फिनलैण्ड के टैक्निकल हाई स्कूल के जीव-रसायन मे प्रोफेसर हो गये, तदुपरात १९३९ मे विश्वविद्यालय मे प्रोफेसर हो गये।

लगभग १९२० से लेकर विरटानेन ने हरे चारे के जमा करने मे जो प्रक्रम होते हैं उनका अध्ययन किया। किण्वनो से लैक्टिक और ब्यूटिरिक अम्ल बनते है। प्रोटीन से टूट कर बने पदार्थ हरे चारे को खराब कर देते है, इससे उसके पोषकाहारी पदार्थो मे कमी हो जाती है। जब दबे हुए हरे चारे मे अम्ल मिला कर उसका हाइड्रोजन आयन साद्रण $१०^{-४}$ कर दिया जाता है (जिसको pH=4 कह कर भी व्यक्त करते है) तो जीव-रासायनिक नाशक प्रक्रमो मे कमी हो जाती है। इस प्रकार का अम्लीय चारा किस प्रकार उपयोगी था ? क्या इसका प्रभाव स्वास्थ्य एव दुग्ध पर खराब होता था ? १९२८-१९२९ मे किये गये विस्तृत परीक्षणो से यह दिखाया

जा सका कि यह चारा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (कुछ गंधकाम्ल के साथ) मिला दिये जाने पर भी अम्लीयता के सरक्षण मे अति उत्तम रहता था। केवल कलरियाँ और स्वाद ही नही ठीक रहता था, अपितु विटामिन ए और सी मे भी कमी नही होती थी।

इसके पश्चात् आपने नाइट्रोजन को उपयोगी बनाने मे जीवाणु और एन्जाइम सबधी प्रक्रमो, विशेषतया लेग्यूमिनस पौधो की जडो की ग्रन्थियोमे उपस्थित नाइट्रोजन-दायक जीवाणुओ पर अनेक वर्षो तक कार्य किया। विरटानेन ने पोषकाहारी पदार्थों के उपयोग के लिए जिन एन्जाइम सबधी प्रतिक्रियाओ और बधुताओ को उत्तरदायी ठहराया है, उनको अभी पूर्ण रूप से माना नही गया है।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"१९२५ मे जब मैने लेग्यूमो और लेग्यूम-जीवाणुओ के अन्वेषण के सबध मे ताजे चारे को ठीक रखने की समस्या पर विचार किया, तो परिस्थिति ऐसी थी कि लेग्यूम की फस्लो का पूर्ण लाभ उठाने के लिए चारा-गृह (silage) की समस्या का सिद्धात और व्यवहार दोनो मे पुन अन्वेषण करना पडा।

मैने प्रोटीन के विच्छेदन मे और अमोनिया से एमीनो-अम्लो के बनाने मे विभिन्न जीवाणुओ की क्षमता का पहले अध्ययन किया था। इन महत्त्वपूर्ण परीक्षणो के आधार पर यह सभावित जाना पडा कि चारा-गृह मे हानिकारी प्रक्रमो को ताजे चारे मे 4pH से नीचे तक कृत्रिम अम्लीकरण करके रोका जा सकता था।

"व्यावहारिक रूप मे चारा-गृहो के प्रयोग करके यह दिखाना था कि खराब करने वाले प्रक्रमो—श्वसन, प्रोटीन का टूटना (विशेषतया अमोनिया का बनना) एव हानिकारक किण्वनो—को ताजी फस्ल मे 4pH से नीचे तक अम्लीकरण करके रोका जा सकता था, या नही। इस दशा मे व्यावहारिक प्रयोगो से जो परिणाम प्राप्त हुए वे सैद्धान्तिक अनुमानो से बिलकुल मिलते थे क्योकि उपर्युक्त सभी हानिकारक प्रक्रमो को बडी दक्षता से रोका जा सका था।

"एक दूसरा महत्त्वपूर्ण व्यावहारिक प्रश्न यह था कि चारा-गृह मे pH के मान को ३–४ तक जमा करने के सारे समय तक रखा जाय या नही। यदि ताजी घास को जलरुद्ध पात्र मे कस कर रख दिया जाय और खनिज अम्लो से उसका pH ३ ५ कर दिया जाय तो सारी घास की अम्लीयता धीरे-धीरे घटती जाती है, कुछ महीनो बाद pH

1. पहला चयन "Cattle Fodder and Human Nutrition " (Cambridge 1938) से है, दूसरा Nature, vol CLVIII (1946), पृष्ठ ५१५ से है।

का मान क्रातिक सीमा ४ तक पहुँच जाता है। जब एक बार ऐसा हो जाता है तो खराब करने वाले प्रक्रम फौरन आरम्भ हो जाते हैं और घास खराब होने लगती है। यदि यह बहुत गभीर न भी हो तो भी मवेशी साधारणतया इसे पसद नही करते और कभी-कभी द्रव मे डुबाये ऐसे चारे को खाने से इनकार कर देते हैं। तथापि यह दिखाया गया कि जब अधिक द्रव को चारे से निकाल दिया गया, तो उसके pH का मान अपरिवर्त्तित रहा।

"फिनलैण्ड मे ए० आई० वी० (A I V) प्रक्रम के ९ वर्षो तक के विस्तृत व्यावहारिक उपयोग से इस विधि की यथार्थ पूर्णता निश्चित रूप से सिद्ध हो गयी है। गाय को ४५ किलोग्राम तक इस प्रकार का चारा खिलाने पर भी इससे किसी प्रकार के हानिकारक प्रभाव नही हुए।

"हमारे नये प्रयोगो से जो प्रकाश पडा है, विशेषतया नाइट्रेट और अमोनिया-नाइट्रोजन की कुछ एमीनो अम्लो के साथ सफल होड से, उससे हम लोगो को यह सभावित जान पडता है कि प्राकृतिक परिस्थितियो मे पौधे, नाइट्रोजन पोषकाहार के लिए कुछ नाइट्रोजन के कार्बनिक यौगिको का भी उपयोग करते हैं, कम से कम कुछ मिट्टियो मे ऐसा अवश्य होता है। साधारण रीति से लगाये गये पौधो मे कार्बनिक नाइट्रोजन का अधिक उपयोग नही होता, क्योकि कार्बनिक नाइट्रोजन वाले यौगिक मिट्टी मे शीघ्र ही अमोनिया और नाइट्रेट लवणो मे बदल जाते हैं। किन्तु पौधो द्वारा कार्बनिक नाइट्रोजन के थोडे से भी उपयोग से अद्भुत परिवर्त्तन होते है, अत इन यौगिकों का बडा महत्त्व है। अभी, ऐलानीन (alanine) के प्रभाव से मटरो के आकार मे काफी परिवर्त्तन किया जा सका है। फिनाइल ऐलानीन के विकार्बाक्सीकरण (decarboxylation) से प्राप्त फिनाएल एथिल एमीन को नाइट्रेट युक्त पोषकाहारी घोलो मे मिला कर मटरो मे एक विभिन्न प्रकार की शाखाएँ बनायी गयी हैं। प्रकृति की कुछ परिस्थितियो मे भी ऐसे परिवर्त्तनो की आशा की जा सकती है।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

फिनलैण्ड के लिए, जहाँ शरद् ऋतु काफी लम्बी होती है, विरटानेन ने इस विधि का विशेषतया विकास किया था। हरी फस्लो मे अम्लो की सहायता से नियत्रित अम्लीकरण से वर्ष के सब महीनो मे स्वादयुक्त एव पोषकाहारी हरे चारे को सुलभ बनाया जा सकता है। फसल काटने के बाद किसान इस प्रकार ऋतु परि-वर्त्तनो से पराधीन नही रहता। विस्तृत प्रयोगो से यह दिखाया जा चुका है कि अम्ल

से बसाये चारे को गायो को खिला कर उत्तम प्रकार का दुग्ध और मक्खन प्राप्त किया जा सकता है। इस विधि का बडा विस्तृत उपयोग हुआ है।

उच्च पौधो मे नाइट्रोजन पोषकाहार पर विरटानेन ने जो शोध-कार्य किया है उससे ज्ञात हुआ है कि लेग्यूमो की जड-ग्रथिओ[1] मे हीमोग्लाबिन और मेथिमोग्लाबिन होती है। लाल और भूरे रगद्रव्य का सतुलन प्रकाश की तीव्रता एव पौधे की वृद्धि पर निर्भर होता है। जल्दी से बढने वाले पौधो मे सूर्य-प्रकाश के दिन जड-ग्रथियाँ लाल होती है, इससे उनमे अधिक हीमोग्लाबिन की उपस्थिति सूचित होती है। काटी हुई जडग्रथिओ के भूरे रग से निम्नसक्रियता की सूचना मिलती है। जब न तो हीमोग्लाबिन और न मेथिमोग्लाबिन उपस्थित होती है तो रग हरा होता है, उस समय नाइट्रोजन स्थिरीकरण समाप्त हो चुका होता है।

लेग्यूम ही ऐसे पौधे है जो वायु की नाइट्रोजन को स्थिर कर सकते है। इसमे से कुछ नाइट्रोजन मिट्टी मे स्रावित हो जाती है। कार्बनिक नाइट्रोजन यौगिको के महत्त्व पर, जैसा विरटानेन ने इन एमीनो अम्लो से ज्ञात किया है, अभी काफी कार्य होना चाहिए, तभी इसका स्पष्ट चित्र बन सकेगा।

1. Root nodules

१९४६

जेम्स बी० सुमनेर (James B Sumner)

(१८८७--   )

"एन्जाइम केलासित किये जा सकते हैं---इस आविष्कार के लिए।"

(१९४६ का पुरस्कार जान हारवर्ड नार्थ्रोप (John Horward Northrop) एव वेन्डेल मेरेडिथ स्टैन्ली Wendell Meredith Stanley—के साथ दिया गया था, आगे देखिए, पृ० १८०)

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

जेम्स बाशेलेर सुमनेर का जन्म कैन्टन, मसा० (मसाचूसेट्स) मे हुआ था। स्कूल मे आपकी रुचि भौतिकी और रसायन मे थी, किन्तु अन्य विषयो मे आपका मन नही लगता था। आपने हार्वर्ड कालेज मे १९०६–१९१० तक पढा। अपने परिवार की रूई बिनने की एक फैक्टरी मे आपने थोडे दिनो तक कार्य किया। फिर कुछ समय तक रसायन पढाने के बाद आप हार्वर्ड लौट आये, इस बार आप आटो फोलिन (Otto Folin) की सरक्षता मे औषध स्कूल मे आये। १९१४ मे आप जीव-रसायन मे डाक्टर हो गये। थोडे ही दिन बाद आपने कार्नेल के एक औषध स्कूल मे पद ग्रहण किया। १९२९ तक वही आप जीव-रसायन के प्रोफेसर रहे। १९२९ मे आप हन्स फान यूलेर चेल्पिन (Hans von Euler Chelpin—दे० पृ०११५) और स्वेदबर्ग (Svedberg) के साथ अपने केलासित एन्जाइमो के अन्वेषण के लिए स्टॉकहोम चले गये।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"मुझे जैक फली (Jack bean) असाधारण रूप से यूरियेज मे प्रचुर जान पडी और मुझे इसके एन्जाइम को शुद्ध रूप मे पृथक् और उसकी रासायनिक रचना

1. Lex Prix Nobel en 1946 से अनूदित।

को ज्ञात न कर सकने का कोई कारण नही दिखाई पडा । क्लाड बर्नार्ड (Claude Bernard) ने कहा था कि प्रतिकर्मक अथवा मूल पदार्थ के चयन पर ही सफलता अथवा असफलता निर्भर है । विल्सटैटर का यह दुर्भाग्य था कि उन्होंने इस एन्जाइम को पृथक् करने के लिए सैकरेज (sacchaiase) को चुना । मेरा यह सौभाग्य था कि मैंने यूरियेज (uiease) को चुना ।

"मैंने १९१७ के अत मे यूरियेज को पृथक् करना आरम्भ किया, क्योकि इसके पहले मै विश्लेषक विधियो मे व्यस्त था ।

"पहले मैंने जैक फली भोजन से यूरियेज का सार जल द्वारा निकालना आरम्भ किया । ये जलीय सार श्यान (viscous) होते थे और इसलिए इनका छानना बहुत कठिन था । ग्लिसराल से जो सार बनाये गये उनसे और अधिक परेशानी हुई । मुझे यह पता चला कि फोलिन (Folin) ने विश्लेषक कार्यो के लिए ३० प्रतिशत ऐलकोहल से फली का सार प्राप्त किया था और इसका यूरियेज के स्रोत की भॉति प्रयोग किया था । यह ज्ञात हुआ कि ३० प्रतिशत ऐलकोहल से सार बनाने की विधि मे काफी लाभ थे, क्योकि यह विलायक अधिकतम यूरियेज का विलयन तो बना लेता था, किन्तु अन्य प्रोटीनो की काफी मात्रा को नही घोल पाता था । अत इस विलायक के प्रयोग से काफी शुद्धीकरण हो जाता था । ऐलकोहलीय सार बडी शीघ्रता से छन जाते थे और इस प्रकार अघुलित पदार्थ छनने-कागज पर रह जाते थे । ३० प्रतिशत ऐलकोहल का केवल एक दोष यह था कि यूरियेज पर इस विलायक की धीरे-धीरे असक्रियकारी क्रिया होती रहती थी । तथापि निम्न ताप पर रखने से इस एन्जाइम से असक्रियता नही होती थी ।

"जब जैक फली भोजन के ऐलकोहलीय सार को निम्न ताप पर रखा जाता था, तो अवक्षेप बनते थे । इन अवक्षेपो मे प्राय सारा यूरियेज होता था और इसके साथ कानकेनेवेलिन A (Concanavalin), कानकेनेवेलिन B और अन्य प्रोटीन होते थे । इस समय हमारी प्रयोगशाला मे बर्फ की शिलाएँ नही थी, अत हम इनको खिडकी के पास वाली जगह मे रख देते थे और ठडे मौसम के लिए प्रार्थना करते रहते थे ।

"मनोरजन के लिए मैंने ३० प्रतिशत ऐलकोहल के स्थान पर ऐसीटोन का प्रयोग किया और यह देखा कि इस विलायक से शुद्धिकरण की विधि मे कोई लाभ होता है या नही । तदनुसार मैंने ३१६ घ० से० शुद्ध ऐसीटोन को १००० घ० से० तक तनु किया और यूरियेज का सार इससे निकाला । मै क्रमबद्ध रूप से ऐसीटोन को इसी प्रकार तनु करता रहा, क्योकि मै आसवन से प्राप्त ९५ प्रतिशत ऐलकोहल से ३०

प्रतिशत ऐलकोहल मे भी यही करता था। जब बर्फ की शिलाएँ आ गयी तो मैंने ऐसीटान के सार को रात भर तक उन पर रखा। दूसरे दिन प्रात काल मैंने छनित का परीक्षण किया। इसमे अवक्षेप लगभग बिलकुल नही था, इस प्रकार यह ऐलकोहलीय सार से भिन्न था। तथापि, जब मैंने इसके एक बूँद को सूक्ष्मदर्शी मे देखा तो इसमे छोटे-छोटे केलाम दिखाई पडे। इनका आकार ऐसा था कि मैंने पहले इनको कभी नही देखा था। मैंने कुछ केलासो को सेन्ट्रीफ्यूज किया और देखा कि वे शीघ्र ही जल मे घुल जाते थे। तब मैंने जलीय विलयन का परीक्षण किया। इसमे प्रोटीन थी और इसकी यूरियेज सक्रियता काफी उच्च थी। तब मैंने अपनी पत्नी से फोन पर कहा, 'मैंने एन्जाइम को सबसे पहले केलासित कर लिया है।'

जान हार्वर्ड नार्थ्रोप (John Horward Northrop)
(१८९१–)

वेन्डेल मेरेडिथ स्टैनली (Wendell Meredith Stanley)
(१९०४–)

"शुद्ध रूप में एन्जाइमो और वायरस प्रोटीनों की तैयारी के लिए।"

(१९४६ का पुरस्कार जेम्स बी० सुमनेर के साथ दिया गया था, पीछे देखिए)

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

नार्थ्रोप

जान हार्वर्ड नार्थ्रोप का जन्म यान्कर्स, न्यूयार्क मे १८९१ मे हुआ था। आपके पिता प्राणिशास्त्री थे और आपकी माता वनस्पतिशास्त्रज्ञ। इन्होने कोलम्बिया विश्वविद्यालय से १९१५ मे पीएच० डी० उपाधि प्राप्त की। १९१७ से १९१९ तक आप युद्ध सबधी रासायनिक सेवाओ से सबधित रहे। इस बीच मे आपने "ऐसीटोन के किण्वन-प्रक्रम एव उसकी तैयारी का आविष्कार किया।" आप १९२४ से प्रिंसटन के राकफेलर इस्टीट्यूट के सदस्य है।

स्टैन्ली

वेन्डेल मेरेडिथ स्टैनली का जन्म रिजविले, इन्ड० मे हुआ था। १९२९ में इलीन्वाय विश्वविद्यालय से आप स्नातक हुए और हाइनरिश वीलैंड के साथ म्यूनिख मे स्टीरोल पर कार्य करते रहे। १९३१ से आप राकफेलर इस्टीट्यूट की औषधशोध से सबधित हैं। दूसरे महायुद्ध के दौरान मे आपने इन्फ्लुएजा वायरस के पृथक्करण पर कार्य किया और उससे वैक्सीन तैयार करने का प्रयत्न किया।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

नार्थ्राप

"मेरे पूर्व के कार्यकर्त्ताओ की राय थी कि एन्जाइम कदाचित् प्रोटीन है। १८९६ मे पेकेलहेरिग (Pekelharing) ने एक प्रोटीन को आमाशय-रस (gastric juice) से पृथक् किया और इसको आपने पेप्सिन नामक एन्जाइम समझा। आप प्रोटीन को केलासित न कर सके। फलत आपके एन्जाइम और प्रोटीन की पहचान को कभी मान्य नही समझा गया। मैंने १९२० मे इन प्रयोगो को दोहराया किन्तु उस समय उन पर अधिक कार्य नही कर सका।

"सुमनेर के परिणामो से मुझे प्रोत्साहन मिला और मैंने पेप्सिन समस्या को फिर से हल करने की चेष्टा की। १९३० मे मैंने व्यापारिक पेप्सिन से एक केलास-प्रोटीन को पृथक् किया। यह एन्जाइम पेप्सिन जान पडती थी। तब से अब तक पाँच और एन्जाइम एव उनके पूर्ववर्त्तियो को मेरी प्रयोगशाला मे पृथक् किया जा सका है। ट्रिप्सिन और उसके पूर्ववर्ती ट्रिप्सिनोजन, जो ट्रिप्सिन का रोकने वाला पाली-पेप्टाइड है, और इस पदार्थ का ट्रिप्सिन के साथ एक यौगिक काइमोट्रिप्सिनोजन, और काइमोट्रिप्सिन के तीन रूपो को कूनिट्ज (Kunitz) और मेरे द्वारा पृथक् करके केलासित किया गया। कूनिट्ज और मैक्डोनल्ड (Mc Donald) ने राइबोन्यूक्लीएज और हेक्सोकाइनेज को पृथक् और केलासित किया। ऐन्सन (Anson) ने कार्बाक्सी-पेप्टीडेज़ को केलासित किया और हेरियट (Herriott) ने पेप्सिनोजन को पृथक् और केलासित किया। ये प्रयोग काफी कठिन थे और इनमे काफी परेशानी उठानी पड़ती थी और मेरे सहयोगियो के बिना—हेरियट, ऐन्सन, डेसराऊ

1. Lex Prix Nobel en 1946 से अनूदित।

(Desreux) मैकडोनल्ड, होल्टर, क्रूएगेर, (Krucger) बटलर (Butlei) और विशेषतया डा० कूनिट्ज, जिनमे इन अस्थायी एव भ्रमोत्पादक पदार्थों को समझने की विलक्षण प्रतिभा थी—यह कार्य सफल नही हो सकता था।

"इन प्रयोगो के फलस्वरूप यह सभावित जान पडता है कि सब एन्जाइम और कम से कम कुछ वायरस प्रोटीन हैं। केवल यही तथ्य कि तैयार किये गये पदार्थ केलासित प्रोटीन है, इस निष्कर्ष के लिए पर्याप्त नही है। वस्तुत, हम लोगो ने अपने पदार्थों की शुद्धता को स्थापित करने मे और प्रत्येक विधि से उनकी जॉच करके प्रोटीन और उसकी सक्रियता मे सबध स्थापित करने मे काफी समय बिताया है।

"इन परिणामो पर बहस करने के पूर्व सक्षेप मे उन प्रायोगिक विधियो का वर्णन करूँगा जिनका मैंने इन सक्रिय प्रोटीनो के पृथक् और केलासित करने मे उपयोग किया है। एक ऐसी कोई भी विधि ज्ञात नही हुई है जो एन्जाइम को पृथक् केलासित कर सके, किन्तु कुछ साधारण सिद्धात इस दिशा मे बडे उपयोगी सिद्ध हुए हैं। सबसे पहले, पदार्थों की काफी बडी मात्रा का उपयोग किया गया जिससे तनु विलयन के स्थान पर वास्तविक ठोस पदार्थ प्राप्त हो सके। पहले एन्जाइमो के पृथक् करने मे जो असफलता प्राप्त होती थी उसका कारण मेरी समझ मे यह है कि कार्य अति तनु विलयनो से किया जाता था। दूसरे, जहॉ कही भी सभव होता था, चूषण से छनाई की गयी, क्योकि मातृ-द्राव से सेन्ट्रीफ्यूज की अपेक्षा इस विधि द्वारा अवक्षेप काफी अच्छी तरह से पृथक् होता है। यदि पेकेलहेरिग ने अवक्षेप को सेन्ट्रीफ्यूज करके और उसको काफी जल मे घोलने के स्थान पर अपने पेप्सिन पदार्थ को छान कर काफी कम जल मे घोला होता तो मेरा विश्वास है कि पचास वर्ष पहले ही एन्जाइम केलासित हो गया होता।

"तीसरे, प्रभाजन साधारणतया साद्र उदासीन लवणो से किया गया, इनकी उपस्थिति मे तनु-लवण-विलयनो की अपेक्षा प्रोटीन काफी अधिक स्थायी रहते हैं। उदाहरणतया हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के २ ७ pH और ०° से० ताप पर पेप्सिन ३ प्रतिशत प्रतिदिन के वेग से विघटित होती है। लगभग सपृक्त मैग्नीशियम सल्फेट के विलयन से ०° से० पर (जो सबसे अच्छी स्थायी कारी परिस्थिति है) यह वेग १ प्रतिशत प्रतिदिन होता है।

"८ ० pH और ३०° से० पर ट्रिप्सिन की ९० प्रतिशत सक्रियता प्रतिदिन घटती रहती है। यह प्रतिक्रिया असाधारण है, क्योकि यह द्वि-आणव (bimolecular) है और इस दशा मे तनु विलयन साद्र विलयनो की अपेक्षा अधिक स्थायी होता है।"

स्टैन्ली[1]

"१८९८ मे बाइजेरिक (Beijerinck) के कार्य के साथ साधारण गुणधर्मो के अध्ययन द्वारा वायरसो की प्रकृति जानने के प्रयास आरम्भ हुए और विभिन्न प्रयोगशालाओ मे तीस वर्षों से अधिक समय तक ये प्रयास असफल रहे। यद्यपि बाइजेरिक और ऐलर्ड (Allard) ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया था तथापि १९२७ से १९३१ तक किया हुआ विनसन (Vinson) और पेट्रे (Petre) का कार्य सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। आपने दिखलाया कि वायरस-सक्रियता को बिना कोई हानि पहुँचाये तबाकू के मोजैक (mosaic) वायरस मे कई प्रकार के रासायनिक उलट-फेर किये जा सकते थे। तथापि जब १९३२ मे वायरसो पर कार्य आरम्भ हुआ तब वायरसो की वास्तविक प्रकृति पूर्णरूपेण रहस्यमयी थी। अब १९४६ मे इसके लिए रसायन का नोबेल पुरस्कार मिला है। यह नही ज्ञात था कि वे अकार्बनिक है या कार्बोहाइड्रेट, या हाइड्रोकार्बन, या लाइपिड या प्रोटीन या प्राणी-सबधी जीव। फलत यह आवश्यक था कि कुछ प्रयोग ऐसे किये जायँ, जिनसे उनकी वास्तविक प्रकृति का निश्चित ज्ञान हो। आरम्भ के प्रयोगो के लिए तम्बाकू के मोजैक वायरस को चुना गया, क्योकि इससे कुछ असाधारण लाभ थे। काफी तेजी से प्रभाव डालने वाली इसकी बडी मात्राएँ सुलभ थी और वायरस असाधारण रूप से स्थायी था तथा इस वायरस की मात्रा का मापन सरलता, शीघ्रता और बडी यथार्थता से किया जा सकता था।

"तम्बाकू के मौजैक वायरस पर एक सौ से भी अधिक रसद्रव्यो के अध्ययन के फलस्वरूप, यह ज्ञात हुआ कि जिन रसद्रव्यो मे सीधी असक्रियकारी क्षमता थी, वे साधारणतया आक्सीकारक थे, प्रोटीन के अवक्षेपक और हाइड्रोजन आयन का सान्द्रण करने वाले रसन्द्रव्य भी वायरस को असक्रिय बना देते थे। यह निष्कर्ष निकाला गया कि साधारण रूप से परिणाम इस प्रकार के है, जिनसे ज्ञात होता कि वायरस प्रोटीन है। इस अध्ययन के फलस्वरूप उन दिशाओ मे निश्चित रूप से प्रयास किये जाने लगे जिनसे प्रोटीनो का सान्द्रण और शुद्धीकरण हो सके। विनसन और पेट्रे द्वारा प्रस्तावित तम्बाकू के मौजैक वायरस के लिए सीस ऐसिटेट की विधि की तीन मुख्य सीढियो को सर्वोत्तम प्रकार से करने के लिए हाइड्रोजन-आयन का सान्द्रण ज्ञात किया गया। इस विधि के उपयोग से रगहीन, आशिक रूप से शुद्ध, विलयन प्राप्त हुए,

1. Les Prix Nobel en १९४६ से अनूदित।

इनमे वायरस की सक्रियता मूल की अपेक्षा लगभग उतनी ही या कुछ अधिक थी। बाद को यह ज्ञात किया गया कि वायरस का साद्रण और शुद्धीकरण समविद्युतीय (isoelectric) अवक्षेपण और अमोनियम सल्फेट से लवण निकाल कर शीघ्रता से किया जा सकता है।

"छनित मे अमोनियम सल्फेट के विलयन की पर्याप्त मात्रा धीरे-धीरे मिलायी जाती है और उसका खूब क्षोभन किया जाता है जब तक विलयन मे बादल-से नही बनते। इसके पश्चात् १० प्रतिशत ग्लेशियल ऐसिटिक अम्ल और अर्द्ध सपृक्त अमोनियम सल्फेट मिलाया जाता है, जब तक हाइड्रोजन आयन साद्रण ५ pH तक न हो जाये। इस प्रकार छनित मे प्रोटीन केलासित हो जाती है।

"यह कहना आवश्यक है कि कुछ समय तक यह सदेहजनक रहा है कि केलासित पदार्थ तम्बाकू का मोजैक वायरस है या नही। इसका कारण मुख्यतया वे पुराने विचार थे, जिनके अनुसार वायरस जीवित अणु थे। अनेक प्रकार के प्रयोगो से परीक्षा की गयी कि केलासित पदार्थ तम्बाकू का मोजैक वायरस है या नही। इस पदार्थ की वायरस-सक्रियता मूल पदार्थ की अपेक्षा ५०० गुनी थी। केवल $१०^{-९}$ ग्राम पदार्थ युक्त इसका १ मि० ली० विलयन बीमारी फैला सकता है।

"श्यानता (viscosity) एव कल्कन (sedimentation) के निर्धारण से जो परिणाम प्राप्त हुए उनसे यह निष्कर्ष निकला कि तम्बाकू के मोजैक वायरस के कण छड की भाँति होते हैं। उनका व्यास लगभग १२ $m\mu$ और उनकी लम्बाई लगभग ४०० $m\mu$ होती है, उनका अणुभार लगभग ४ करोड होता है।

"तम्बाकू के मोजैक वायरस का एक रोचक एव बडा महत्त्वपूर्ण गुणधर्म यह है कि उनके सिरे एक दूसरे से जुड कर समूह बनाते हैं। वायरस सक्रियता के लिए पूरी छड आवश्यक जान पडती है, क्योकि छड जब दो भागो मे टूट जाती है तो वायरस सक्रियता का नाश हो जाता है।"

सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रभाव

"एन्जाइम" शब्द के वास्तविक अर्थ है "यीस्ट मे"। यीस्ट अथवा माल्ट अकुरणो (sprouts) से सार प्राप्त किय गये। ये कार्बनिक पदार्थों की बडी मात्राओ पर प्रतिक्रिया करते थे, जैसा स्टार्च का शर्करा के ऐलकोहल मे परिवर्तन से होता है। विलसटैटर ने जिन्होने एन्जाइम-विज्ञान मे मात्रात्मक मापनो के आरम्भ कराने मे काफी कार्य किया, एन्जाइमो को रस-द्रव्य मानने का काफ़ी विरोध किया। इसके वास्त-

विक प्रमाण का प्रदर्शन तब हुआ जब एन्जाइम शुद्ध पदार्थों की भाँति पृथक् कर लिये गये। रासायनिक विधि एवं रासायनिक सिद्धात के लिए यह महान् विजय थी। सक्रियता का पहले रहस्यमय कारण अब एक इकाई शुद्ध पदार्थ के एक अणु मे सीमित हो गया। यह सक्रियता रगद्रव्यो के रग की भाँति एक आणव गुणधर्म है।

केलासन सफलतापूर्वक किया जा सका। उदाहरणतया, आलू के एक्स वायरस के साथ, टमाटर के बुशी स्टट वायरस (bushy stunt virus) के साथ जो तम्बाकू के मोजैक वायरस की भाँति छड बनाता है, और इन्फ्लुएजा के विभिन्न प्रकारों के साथ जिसके शुद्ध कण गोलाकार होते है। इन वायरसो का निर्माण एमीनो अम्लो से होता है, जैसा अन्य प्रोटीनो मे भी होता है। शुद्ध वायरसो के साथ कुछ रासायनिक परिवर्तन भी किये जा सकते है जिनके बाद भी वे सक्रिय और बीमारी फैला सकने योग्य रहते है। फार्मेल्डीहाइड की प्रतिक्रिया से उनकी रचना मे जो परिवर्तन होते है, उनसे उसकी सक्रियता पर भी प्रभाव पडता है, जब मूल रासायनिक रचना पुन बना दी जाती है तो सक्रियता भी फिर से आ जाती है।

इन अन्वेषणो से जीव-रसायन एव औषध के दृष्टिकोण से बडे महत्त्वपूर्ण अन्वेषणो का एक अध्याय समाप्त हुआ। तथापि डा० स्टैन्ली द्वारा नोबेल पुरस्कार प्राप्त करते समय किये गये भाषण के अत मे यह कहा गया, "वायरस-शोध का नया क्षेत्र अभी वस्तुत अपनी शैशवास्था मे है और अभी बहुत कुछ करने को बाकी है।" एन्जाइम-शोध के लिए भी यही कहा जा सकता है। रग-सामग्रियो के लिए रग और रासायनिक रचना मे कुछ सबध स्थापित कर लिये गये है। एन्जाइमो और वायरसो के लिए ऐसे सबध अभी दृष्टिगोचर नही हुए है, किन्तु पहले की अपेक्षा अब समस्या का हल अधिक विश्वास से सोचा जा सकता है।

१९४७

राबर्ट राबिन्सन (Robert Robinson)

(१८८६-   )

"जीव-रासायनिक दृष्टिकोण से बडे महत्त्वपूर्ण कुछ वनस्पति-पदार्थो, विशेषतया ऐलकेलाइडो, की शोध के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

राबर्ट राबिन्सन का जन्म बफर्ड मे हुआ था, यह चेस्टरफील्ड के पास डर्बीशायर, इग्लैण्ड मे है। यहाँ आपके पिता दफ्ती के बक्से और स्वय चीड-फाड करने वाले यन्त्रो एव सामग्री को स्वय आविष्कृत मशीनो पर बनाते थे। आप १९१० मे मैन-चेस्टर विश्वविद्यालय से डाक्टर हो गये। १९१२ से १९१५ तक आप सिडनी विश्वविद्यालय, आस्ट्रेलिया मे कार्बनिक रसायन के प्रोफेसर रहे। इग्लैण्ड लौटने पर आप कई विश्वविद्यालयो मे प्रोफेसर रहे। १९२९ से आप आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के मैग्डालेन कालेज मे है।

राबिन्सन की रुचि पहले वनस्पति रगद्रव्यो की रासायनिक रचना मे थी, बाद मे यह ऐलकेलाइडो तक विस्तृत हो गयी। पुष्पो, जडो, लकडी अथवा छाल के लाल, नीले अथवा बैगनी रग बडे जटिल पदार्थ है और ये ऐन्थोसायेनिन कहलाते है। कुछ प्रकार की लकडियाँ बहुत दिनो से रगने के काम मे लायी जाती थी। पहले राबिन्सन इनमे विशेष रूप से रुचि रखते थे। जो रग-सामग्रियाँ उनसे प्राप्त की जा सकती है, वे है—ब्रैज़िलिन और हीमाटाक्सिलिन। राबिन्सन ने विश्लेषण को सश्लेषण से सदैव पुष्ट करने का प्रयत्न किया। आपने ट्रोपीनोन के सश्लेषण की एक विधि ज्ञात की, इसका एक सबधी ऐट्रोपीन के अणु के एक लाक्षणिक भाग को बनाता है। ऐट्रोपीन एक ऐलकेलाइड है जिसका औषध मे प्रयोग होता है, उदाहरणतया, ऑख जाँचने के पहले पुतली को बडा करने मे। आपने मार्फीन की आणव रचनाओ मे पर-माणुओ की व्यवस्थाओ को ठीक से बताने मे काफी महत्त्वपूर्ण भाग लिया। पापी

(poppies) के बीजो के रस पर भी, जिसमे पपावरीन और नार्कोटीन भी आती है, आपने काफी कार्य किया। इनमे कार्बन की खुली शृखलाएँ घेरो मे बद हो जाती है और जगह मे परमाणु-समूहो के हिलने-डुलने (orientation) का निर्धारण करना पडता है।

राबिन्सन ने अपने सबध मे कहा, "जो कुछ भी मैने किया है उसका महत्त्व केवल वैज्ञानिक क्षेत्र तक ही सीमित है, पदार्थों के आर्थिक अथवा जीव-रासायनिक महत्त्वो का अध्ययन अभी नही किया गया है।"

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"ब्रैजिलिन और हीमाटाक्सिलिन का अध्ययन अभी वस्तुत समाप्त नही हुआ है और इस सबध मे मै एक साधारण परीक्षण बतलाना चाहूँगा। ब्रैजिलिन के सश्लेपण का कोई औद्योगिक महत्त्व नही है, इसका जीव-रासायनिक महत्त्व भी एक समस्या है। किन्तु तब भी इसके सश्लेषण का प्रयास करना चाहिए, क्योकि हमे नही मालूम कि इसे किस प्रकार किया जाय। जिस प्रकार शुद्ध गणित का सबध भौतिकी से है, उसी प्रकार कार्बनिक रसायन का सबध जीव-रसायन से है। दोनो दशाओ मे उनके उपयोगो पर ध्यान दिये बिना अति कठिन समस्याओ के हल करते समय आधारभूत ज्ञान की सृष्टि निश्चयपूर्वक होती है।

"ब्रैजिलिन के अन्वेषण के दो और विपय मिले। एक तो, पायरीलियम लवणके सश्लेषण से पहले ऐन्थोसायेनिडिन और बाद मे ऐन्थोसायेनिन (नीचे देखिए) का सश्लेषण हुआ। दूसरे β–३ ४ डाइमेथाक्सीफिनाइल प्रोपियोनिक अम्ल के घेरे के सरलता से बद होने के कारण कीटोन (II) के बनाने से पपावरीन के सश्लेपण का मार्ग ज्ञात हुआ।

"मैने पौधो से प्राप्त पदार्थो के अणुओ मे सरलता से पहचाने जा सकने वाले अवयवो के आधार पर उनके रचनात्मक एव जीव-रासायनिक सबधो को समझने की सदैव चेष्टा की। आरम्भ मे इसका उदाहरण बेरबेरीन की रचना मे प्रस्तावित परिवर्त्तन से मिलता है (१९१०)। यह काफी अप्रत्याशित जान पडा कि हाइड्रेस्टिस कैनेडेन्सिस के कनजीनर (congeners in Hydiastis canadensis) हाइड्रेस्टीन और बेरबेरीन मे पूर्ण रूप से भिन्न मेथाक्सिल समूह हो। आक्सीबेरबेरीन (पर्किन Perkin और रे Ray १९२५ के साथ) द्वारा बेरबेरीन का जब पहला सश्लेषण हुआ

1. Les Prix Nobel en 1947 से अनूदित।

तो प्रस्तावित परिवर्तन ठीक सिद्ध हुआ। जे० एम० गुलड (J M Gulland) के साथ १९२३–२४ मे मार्फीन और उससे सम्बन्धित यौगिको की रचना को फिर से बतलाने मे भी ये ही विचार आधारभूत थे।

"स्ट्रिक्नीन और ब्रूसीन के रसायन के विकास मे जो परस्पर सहायता मिली है, उमको उपयोगिता के दृष्टिकोण से सक्षेप मे नही कहा जा सकता और उमको अलग बताना चाहिए। इसमे ७ जुडे हुए घेरे है, कार्बनिक रसायनज्ञो के लिए इसका अणु बडा रोचक है और उनके लिए यह अच्छा खेल का मैदान है। निम्नीकरण (degradation) के अध्ययन के लिए भविष्य मे अनेक वर्षो तक यह उपयुक्त सामग्री के रूप मे रहेगा। तथापि मेरा विश्वास है कि हर बारीकी मे इमकी रचना की समस्या सतोषजनक रूप से हल हो गयी है। बहुत दिनो तक सूत्र (xxv) सतोपजनक दिखाई पडा, किन्तु १९४५ मे प्रिलोग (Prelog) और ज्पिलफागेल (Szpilfogel) ने यह मानने के लिए अच्छे कारण दिये कि घेरे 'च' मे ६ सदस्य होने चाहिए। इसी दिशा मे और भी प्रमाण मिले है। निओस्ट्रिक्नीन के जो द्वि-बधक की स्थिति के परिवर्तन के समावयव के रूप मे बनती है, रसायन ने भी अस्थायी रूप से कुछ परे-
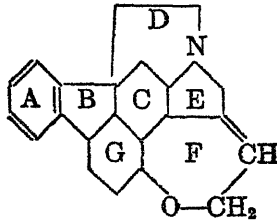
(XXV) (XXVI)
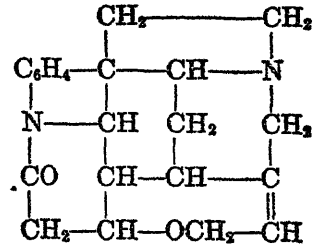
शान किया। ये कठिनाइयाँ इस प्रकार हल हो गयी। निओस्ट्रिक्नीन मे $>N-\overset{\alpha}{C}H=\overset{\beta}{C}<$ होता है, जिसके आक्सीकरण से परबेंजोइक अम्ल $>N-CHO$ $\;\; OC<$ बनता है। ब्रोमीन से यह ब्रोमो-हाइड्रोब्रोमाइड मे बदल जाता है जो गुनगुने पानी मे $>N-\overset{\beta}{C}-\overset{\alpha}{C}HO, HBr$ बन जाता है। (आर० एन० चक्रवर्ती के साथ

१४५–४६)। सावधानी से और लबे विचार-विमर्श के पश्चात् मै सतुष्ट हूँ कि स्ट्रिक्नीन (xxv) है (Experientia 1946) और इसकी इसके अतिरिक्त और कोई दूसरी रचना हो ही नही सकती।"

सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रभाव

जटिल कार्बनिक पदार्थो, जैसे ऐलकेलाइडो के सश्लेषण का आरम्भ सरल यौगिको की तैयारी से होता है, तैयारी की विधि रासायनिक रूप से सुस्पष्ट होनी चाहिए। ये यौगिक मिलकर ऊँची रचना बनाते है और तब हम इन जटिल रचनाओ को समझ सकते है, क्योकि हमने उनको बनाया है। इस प्रकार से प्राप्त ज्ञान केवल निर्मित ऐलकेलाइड तक ही सीमित नही रहता, उस पदार्थ को उपमाओ और सादृश्यो से दूसरो से सबधित कर दिया जाता है। इस प्रकार, सश्लेषण की विधि और ऐल-केलाइडो की रचना मे अतर्दृष्टि से कुछ मलेरिया-नाशक औषधियो के बनाने की कठिन विधियो मे सफलता मिल सकी। सर राबर्ट राबिन्सन ने पिछले युद्ध के दौरान मे इस कार्य मे प्रमुख भाग लिया।

प्राकृतिक ऐलकेलाइडो के ज्ञान से नये प्रयास के लिए विशिष्ट लक्ष्यो का बनाना सभव हुआ और इस प्रकार औषधोपयोगी पदार्थो की रचना की युक्तियुक्त भविष्य-वाणी की जा सकी। पहले जिन विधियो का विकास किया गया था, उनसे नये पदार्थो के बनाने का मार्ग सरल हो गया।

१९४८

आर्ने टिजेलियस (Arne Tiselius)

(१९०२--   )

"इलेक्ट्रोफोरेसिस (clcctropl1o1es1s) और अधिशोषण-विश्लेषण पर शोध-कार्य के लिए, विशेषतया सीरम प्रोटीनो की जटिल प्रकृति संबधी आविष्कारों के लिए"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

आर्ने विलहेल्म काउरिन टिजेलियस का जन्म स्टाकहोम मे हुआ था। आप गाथेनबर्ग के स्कूल मे गये। रसायन का अध्ययन आपने उप्पसल मे किया। यहाँ आपके बाबा गणित के प्रोफेसर थे। १९२५ से लेकर स्वेदबर्ग (Svedbe1g) के असिस्टेट रहे। डाक्टर की उपाधि के लिए आपकी थीसिस १९३० मे प्रकाशित हुई। इसमे आपने "प्रोटीनो की इलेक्ट्रो फोरेसिस के अध्ययन मे गतिशील सीमा की विधि" पर कार्य किया था। विद्युतीय चार्ज के प्रभाव से घुलित पदार्थों के विस्थापन को इलेक्ट्रोफोरेसिस कहते है। यह कई बातो पर निर्भर होता है, जैसे विलयन का साद्रण, अणुओ का रूप और आकार, विद्युतीय आवेश (चार्ज) का परिणाम एव वह माध्यम जिसमे अणु घुले होते है। प्रोटीन के लम्बे एव सवेदी अणुओ के अध्ययन के लिए इस विस्थापन की विधि का प्रयोग करने के काफी प्रयास किये जा चुके थे। उपयुक्त परिस्थितियो एव ऐसी प्रकाश-प्रणाली, जिससे अणुओ की गति का पता चल सके, का चयन आवश्यक था। इस गति की सीमा "गतिशील सीमा" को व्यक्त करती है।

डाक्टर की उपाधि पाने के थोडे दिन बाद टिजेलियस ने नोबेल पुरस्कार के उद्धरण (c1tat1on) मे वर्णित दूसरे विषय--अधिशोषण--पर अन्वेषण आरम्भ किया। आपने अपना कार्य प्रिंसटन मे १९३४-३५ मे जारी रखा। १९३७ मे उप्पसल लौटने पर आपने रक्त सीरम मे प्रोटीनो को पृथक् करने के लिए इलेक्ट्रोफारेसिस की विधि का प्रयोग किया। जीवन के रसायन एव उसकी भौतिकी के अध्ययन के हेतु

आपके लिए प्रोफेसर के एक नये पद की सृष्टि की गयी और इस कार्य के लिए एक नया इस्टीट्यूट भी बनाया गया ।

टिजेलियस महोदय वैज्ञानिक शोध की साधारण समस्याओ मे काफी रुचि रखते है । १९४६ मे प्राकृतिक विज्ञानो की शोध के लिए बनी स्वीडेन की राष्ट्रीय काउसिल के आप आरम्भ से सभापति रहे है ।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"इलेक्ट्रोफोरेसिस विधि की सबसे अधिक उपयोगिता उसकी सादगी और उच्च विशिष्टता मे है । पृथक्करण के पूरे समय तक पदार्थ विलयन मे रहता है और उसकी रचना भी प्राय स्थिर रहती है, इस प्रकार उसके विकृतीकरण (denaturation) और अन्य अपलटनीय (irreversible) परिवर्तनो का, जो अवक्षेपण पर पराधीन प्रक्रमो के ऊपर इतनी सरलता से प्रभाव डालते है, खतरा जाता रहता है । अक्सर अवक्षेपण अथवा बार-बार पुन केलासीकरण (recrystallization) द्वारा शुद्धीकृत प्रोटीनो, एन्जाइमो और दूसरे पदार्थो को इलेक्ट्रोफोरेटिक विधि से असमाग पाया गया । ऐसा कदाचित् इस कारण होता है कि इन पदार्थो मे अवक्षेपण के समय अन्य पदार्थो के अवशोषण की क्षमता होती है । विलयन मे इन अवयवो के पृथक् रहने की काफी सम्भावना होती है और चूँकि इलेक्ट्रोफोरेसिस की विधि मे पृथक्करण गतिशीलता (mobility) के अतर पर निर्भर होता है, अत इसका कोई महत्त्व नही कि अशुद्धियाँ थोडी मात्रा मे है या नही । अन्य विधियो के विपरीत इस विधि मे पृथक्करण शीघ्र होता चला जाता है ।

"तथापि, विधि की इतनी सरलता की कुछ सीमाएँ भी है और इनको बतलाना चाहिए । विलयन मे एक दूसरे से स्वतत्र रहने वाले अणुओ अथवा कणो को ही इलेक्ट्रोफोरेसिस की विधि से पृथक् किया जा सकता है । यदि उनमे कुछ सकुल समूह अथवा सयोग बन गये है तो उनका पृथक्करण उतना ही हो सकता है जितना उन सकुलो का विघटन हो गया हो । एक ऐसा अवयव, जो इलेक्ट्रोफोरेसिस के समय समाग जान पडता हो, विभिन्न परिस्थितियो मे (धीमी प्रतिक्रिया न करने पर अथवा केवल pH के परिवर्त्तन से) बिलकुल सकुल बन सकता है । तब भी इलेक्ट्रोफोरेसिस (जैसे अतिसेन्ट्रीफ्यूज) द्वारा इनके परीक्षण बिलकुल दूसरेही दृष्टिकोण से बहुत

1 Lex Prix Nobel en 1948 से अनूदित ।

महत्त्वपूर्ण है। जितने धीमे से प्रतिक्रिया की जाती है, उससे यह भी निष्कर्ष निकलना चाहिए कि ऐसे सकुल, जो प्राप्त किये गये है, कदाचित् मूल पदार्थो मे भी उपस्थित होते है, अर्थात् जब हम प्रोटीन पर कार्य करते है तो वे जीवित प्राणी मे भी हो सकते है। यह राय देने के लिए कदाचित् जीवनवादी (vitalist) होना आवश्यक नही है कि जो रसायनज्ञ के दृष्टिकोण से अशुद्धता है (उदाहरणतया, लाइपो-सकुल मे लाइपिड) वह कदाचित् जीव-शास्त्र के दृष्टिकोण से जीवनोपयोगी हो। स्वाभाविकतया सपूर्ण जीवन-रसायन मे जीव-शास्त्रीय पदार्थो मे रसद्रव्यो के निकालने मे मुख्य रुचि रहती है, किन्तु अब यह प्राय नि सदेह है कि भविष्य मे जीव प्राणी मे उपस्थित इन विशिष्ट सकुलो पर भी काफी ध्यान दिया जायेगा। एक दूसरे से सबधित प्रतिक्रियाओ की शृखला से ही जीवन-प्रक्रम बनते है और विशिष्ट कार्यो को इन शृखलाओ अथवा प्रतिक्रियाओं का परिणाम समझना चाहिए।

"१९४० मे मैने प्रोटीन और उससे टूट कर बने पदार्थो का क्रोमैटोग्राफी से विश्लेषण करने के प्रयोग आरम्भ किये। इस विधि को उपयुक्त समझा गया और अद्भुत विशिष्टता के कारण इसको अपनाना पडा। १९०६ और इसके बाद मे स्वेट (Tswett) द्वारा किये गये अन्वेषणो से कार्बनिक पदार्थो की इस विशिष्टता का ज्ञान हो चुका था। पेप्टाइड और इसी प्रकार के टूटे पदार्थो की इलेक्ट्रोफोरसिस मे जो विशेष कठिनाइयाँ (जैसे सीमा के अपवाद) सामने आयी उनके कारण एक ऐसी विधि ज्ञात करना आवश्यक था, जिससे इनका पृथक्करण सरल हो जाय।

"साधारण रूप से कोमैटोग्राफी की सब विधियो की भाँति ये काफी विभिन्न पदार्थों के विश्लेषण मे उपयोगी सिद्ध हुई है। हम लोगो ने अनुभव के लिए एमीनो अम्लो, पेप्पाइडो, शर्कराओ और वसीय अम्लो आदि के साथ अनेक प्रयोग किये है।

"इन चित्रो के परिमाणात्मक निर्धारण के लिए यह अत्यावश्यक है कि यथासभव निम्न साद्रण का उपयोग किया जाय। तदनुसार, क्लेसन (Claesson) अभी हाल मे ही एक नये अधिशोषण-विश्लेषण-व्यतिकरण मापी (interferometer) को बनाने मे सफल हुए। यह सुनकर आपको आश्चर्य होगा कि पहले यत्र की अपेक्षा यह पाँच गुना अधिक सवेदी है। इस यत्र से क्लेसन महोदय पालीमेटाक्रिलेट के बहुअवयवो एव नाइट्रोसेल्यूलोज से सबधित पदार्थो को पृथक् करने में सफल हुए है। इससे यह स्पष्ट है कि इस क्षेत्र मे अधिशोषण-विश्लेषण का निकट भविष्य मे ही बडा महत्त्व हो जायेगा।"

सिद्धान्त और व्यवहार पर प्रभाव

टिजेलियस द्वारा और उनके इस्टीट्यूट मे जिन विधियो का विकास हुआ है, उनसे उन पदार्थों का बारीकी से विश्लेषण किया जा सकता है, जिनकी रासायनिक रचना थोडी-सी ही विभिन्न है। यह बडे महत्त्व की बात है क्योकि इस थोडी-सी विभिन्नता वाले यौगिको का सजीव प्राणियो पर प्रभाव काफी भिन्न हो सकता है। इन विधियो का विकास करने के लिए रसायनज्ञ को अच्छा भौतिकीज्ञ और यत्र-आयोजक होना पडा।

इस प्रकार से प्राप्त पृथक्करण प्रकाश के वर्तन द्वारा बडे अतरो की सूचना देते है। जब घुलित पदार्थ समाग नही होता, तो इलेक्ट्रोफोरेसिस के चित्रो मे कई चोटिया-सी दिखाई देती है। इस प्रकार यह दक्ष विश्लेषक यत्र की भाँति प्रयुक्त हो सकता है। हार्वर्ड मे रक्त प्लाज्मा के प्रभाजन से शुद्ध प्रोटीनो के उत्पादन के समय ऐसा ही किया गया। इन प्रभाजनो की औषधीय उपयोगिता काफी विशिष्ट है और इसके द्वारा जीवशास्त्रीय रूप से हस्तक्षेप करने वाले पदार्थो को पृथक् किया जा सकता है। कुछ दशाओ मे इलेक्ट्रोफोरेसिस के यत्र मे ही प्रभाजन किया जा सकता है।

अधिशोषण से पृथक्करण सर्वोपयोगी है, क्योकि इस विधि मे कई प्रभावात्मक खडो को मिलाया जा सकता है। ये खड इस प्रकार है—वे पदार्थ, जिन पर अधिशोषण किया जाय, वे विलायक जिनसे पदार्थो को अवरुद्ध किया जाय और फिर उनको पृथक् किया जाय। इस विधि से सश्लिष्ट रेजीनो मे बहु-अवयवी पदार्थो की उपस्थिति की बहुमूल्य सूचना प्राप्त हुई है। यद्यपि इस विधि को साधारणतया क्रोमैटोग्राफी की विधि की सज्ञा दी जाती है, तथापि इसका प्रयोग रगहीन पदार्थों के साथ भी किया जा सकता है, पहले इससे केवल रगीन पदार्थ पृथक् किये जा सकते थे।

क्रोमैटोग्राफी की विधि का विशेष रूप से प्रभाव डालने वाला उपयोग है—विरल-मृदा यौगिको का पृथक्करण। इनके रासायनिक गुणधर्म प्राय एक-से होते है, परमाणु-विखडन मे इन तत्त्वो ने महत्त्वपूर्ण भाग लिया है।

१९४९

विलियम फ्रान्सिस ग्याउक्यू (William Francis Giauque)

(१८९५–)

"रासायनिक ऊष्मा-गतिकी के क्षेत्र में आपके कार्य के लिए, विशेषतया अति निम्न ताप पर पदार्थों के आचरण के अध्ययन के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

विलियम ग्याउक्यू का जन्म नियागरा जल-प्रपात, ओण्टेरियो मे हुआ था। आपने हाई स्कूल के पश्चात् दो वर्ष एक औद्योगिक प्रयोगशाला मे बिताये। इसके बाद आपने कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय मे रसायन का अध्ययन किया। वहाँ गिलबर्ट एन० लीविस (Gilbert N Lewis) ने आपका ध्यान ऊष्मा-गतिकी की समस्याओ और सुन्दरताओ की ओर आकर्षित किया। डाक्टर की उपाधि पाने के कुछ वर्ष पश्चात् (१९२२) आपने विशिष्ट ताप पर पदार्थो की आतरिक ऊर्जा की क्षमता का अध्ययन किया। इसके द्वारा आप इस क्षमता पर चुबकत्व के प्रभाव (जिसको साधारणतया एन्ट्रापी कहा जाता है) की गणना कर सके। अनेक वर्षो बाद इन गणनाओ का प्रायोगिक परीक्षण हुआ। १९३३ मे ग्याउक्यू ने कैलीफोर्निया मे और डे हास (de Haas) ने हालैंड में ऐसा ताप प्राप्त किया, जो परम शून्य से केवल ०.५ डिगरी कम था।

एन्ट्रापी और ऊष्मा-गतिकी के दृष्टिकोणो से द्रव्य के सारे गुणधर्म एक दूसरे से सबधित होते है और उनमे से किसी एक का उपयोग करके दूसरे गुणधर्म पर प्रभाव डाला जा सकता है, अथवा उसको समझा जा सकता है। जैसे ही आपने चुम्बकत्व को ऊष्मा से जोडा, वैसे ही आक्सिजन के वर्णक्रमदर्शी मापनो से यह निष्कर्ष निकाला कि उससे सारे परमाणुओ की सहति एक-सी नही हो सकती। आपने भविष्यवाणी की कि भली प्रकार से ज्ञात आक्सिजन के परमाणु के साधारण भार १६ ०० के अतिरिक्त १७ एव १८ भार वाले परमाणुओ को भी उपस्थित रहना चाहिए। १९२८ मे की गयी भविष्यवाणी शीघ्र ही ठीक सिद्ध हुई।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय मे रसायन के प्रोफेसर पद पर आप १९३४ से रहे। तब से आप बडे यन्त्रो की सहायता से निम्न ताप की शोध का बराबर विकास करते रहे है। दूसरे महायुद्ध के दौरान मे आपके सैद्धान्तिक कार्य का द्रव-आक्सिजन के उत्पादन मे उपयोग हुआ जिसकी उस समय बडी आवश्यकता थी।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"जब एन्ट्रापी का सावधानी से निर्धारण किया जाता है, तो इसके साथ-साथ प्राय अप्रत्याशित भौतिक गुणधर्मों का आविष्कार होता है। १७ एव १८ परमाणुभार वाले आक्सिजन के समस्थानिको का आविष्कार इसी प्रकार का था।

"डाक्टर एच० एल० जान्सटन (H L Johnston) के साथ आक्सिजन की निम्न ताप ऊष्म-क्षमता का यथार्थ मापन आरम्भ किया गया। इस दशा मे, जैसा पहले से मालूम था, गैस अवस्था मे पहुँचने के पहले इसके तीन केलासित रूप होते है। फलत, अवस्था के प्रत्येक परिवर्तन के समय एन्ट्रापी मे वृद्धि का मापन करना आवश्यक है।

"इस सम्बन्ध मे एन्ट्रापी के निर्धारण के लिए हम लोगो ने शोध की जिन विधियो पर कार्य किया था, उनमे से एक प्रमुख विधि थी—क्वाटम साख्यिकी और गैस अणुओ की एन्ट्रापी सतहो की सहायता से एन्ट्रापी और अन्य ऊष्मा-गतिकी की सख्याओ की गणना। ये एन्ट्रापी पट्ट (band) वर्णक्रमो से प्राप्त किये जा सकते है।

"आक्सिजन अणु की ऊर्जा-सतहो का निर्धारण इस वर्णक्रम से सम्भव हो जाता है। जब इन तीव्र रेखाओ (आक्सिजन वर्णक्रम मे) से आक्सिजन गैस की एन्ट्रापी ज्ञात की गयी तो निम्न ताप से प्राप्त मान से वह बिलकुल मिलती थी।

"वर्णक्रम मे अनेक धीमी रेखाएँ भी होती है। ऐसा विश्वास था कि ये आक्सिजन के कारण है, पर ये समझी नही जा सकती थी। यह मनोरजक बात है कि बैबकाक (Babcock) द्वारा किये गये सूर्य के अन्वेषण मे भी ये अप्रत्याशित रूप से पायी गयी थी। जब सूर्य-प्रकाश पृथ्वी के वातावरण के अणुओ मे से होकर आता है तो ये रेखाएँ कुछ प्रकाश के अश को चुनकर अवशोषित कर लेती है। यह प्रभाव सूर्य का फोटो लेने पर बढ सकता है, इसके लिए सूर्य को निम्न क्षितिज पर होना चाहिए, क्योकि तब प्रकाश वायु के अधिक भाग को प्रभावित करता है।

"पट्ट-वर्णक्रम पर आधारित एन्ट्रापी गणना को सतोषजनक नही माना जाता, जब तक वर्णक्रम की पूरी व्याख्या न हो जाय। धीमी रेखाओ की एक व्याख्या यह मान

1. Les Prix Nobel en 1949 से अनूदित।

प्रकार नही हो सकता ।

"इस समस्या पर महीनो विचार करने के फलस्वरूप इससे सबधित सारी सख्याएँ कठस्थ हो गयी । एक दिन प्रात काल मै इस अनुभूति के साथ सोकर उठा कि इन रेखाओ का मूल विभिन्न प्रकार के समस्थानिक है । डाक्टर जान्सटन और मेरे द्वारा की गयी सूक्ष्मतम गणनाओ से यह बिलकुल यथार्थ सिद्ध हुआ और इससे मेरी अनुभूति दृढ हो गयी । यह बतलाया गया कि पृथ्वी के वातावरण मे १७ एव १८ परमाणुभार वाले समस्थानिक होते है ।

"अति निम्न ताप से सबधित आरम्भिक कार्य मे एक प्रश्न सदैव पूछा जाता था, वह यह है—'आपको कैसे मालूम है कि वह ठडी हो जाती है ?' यह प्रश्न ठीक है। स्पष्टतया, किसी ने भी ऐसा तापमापी नही बनाया था, जिससे ऐसे ताप ज्ञात किये जा सके जिन पर अभी पहुँचा ही नही गया था । चूँकि हीलियम गैस का भी दाब इन तापो पर प्राय गौण होता है, अत गैस-तापमापी भी अनुपयोगी है ।

"ताप पदार्थ के उसी गुण धर्म से नापा जा सकता है, जो ताप से प्रभावित होता हो । इस दशा मे जैसे-जैसे ताप कम होता है वैसे-वैसे उसकी चुबकीय प्रवृत्ति (Susceptibility) बढती जाती है ।

"जब प्रत्यावर्ती धारा एक मापी सर्पिल से चलायी जाती है तो जैसे-जैसे चुबक-प्रवृत्ति बढती जाती है वैसे-वैसे धारा का उसमे प्रवाह कठिन होता जाता है । इस प्रभाव के कारण चुबक-प्रवृत्ति का मात्रात्मक निर्धारण हो सकता है ।

"द्रव हीलियम के ताप पर मापी सर्पिलो के तार का प्रतिरोध इतना कम हो जाता है कि सर्पिल मे तार के घुमावो की सख्या बहुत बडी रखी जा सकती है । इन निम्न तापो पर सर्पिलो से जो सवेदिता प्राप्त होती है, वह ऐसी है कि उसमे पृथ्वी के चुबकीय क्षेत्र के कारण होनेवाले छोटे उच्चावचनो (fluctuations) को पूरा करना पडता है ।"

सिद्धांत और व्यवहार पर प्रभाव

ताप से सारे रासायनिक एव भौतिक गुणधर्मों का सबध स्थापित करना ऊष्मागतिकी का मुख्य विषय है और इस विषय का मुख्य विचार एन्ट्रापी है । ताप अणुओ

की गति के फलस्वरूप होता है और यह गरम करने पर गैसो के विस्तार से प्राप्त मापक्रम (scale) से नापा जा सकता है। इस मापक्रम एव उन विचारो से जिनसे यह मापक्रम बनाया गया है, एक परम शून्य बिन्दु होता है। इस बिन्दु पर, जो केल्सियस (Celcius) के सेटीग्रेट मापक्रम के शून्य से २७३ डिगरी नीचे है, सारी आणव गति को शात हो जाना चाहिए। ताप की यह परम शून्य अवस्था बडी मनोरजक है, नर्न्स्ट महोदय ने इस अवस्था के निकट वाली परिस्थितियो से कुछ बडे व्यावहारिक सिद्धात निकाले थे। आप ऐसा इसलिए कर सके थे, क्योकि हम लोगो ने साधारण रूप से प्राप्य तापक्रमो की सहायता से इस ताप की भविष्यवाणी की थी। ऊष्मा-गतिकी की गणनाओ से वायु का द्रवण एव द्रव आक्सिजन तथा द्रव नाइट्रोजन का उत्पादन सभव हो सका है। जब वायु को दबाया जाता है तो उसकी आणव ऊर्जा का एक भाग ताप मे परिवर्तित हो जाता है। इस ऊर्जा को ठडे माध्यम के प्रक्रम के अवशोषण की सहायता से हटाया जा सकता है। जब यह ठडी दबी हुई गैस पुन विस्तृत होती है तो उसकी आतरिक ऊर्जा अधिक जगह सुलभ होने के कारण अणुओ की अधिक गति मे परिवर्तित हो जाती है, फलत ताप गिर जाता है। दबाने, ठडा करने और विस्तृत करने के चक्र को बार-बार दोहराने से वायु द्रवीभूत हो जाती है, और इस द्रव वायु के ठडे माध्यम की सहायता से हीलियम को भी द्रवीभूत कर लिया जाता है।

समचुबकीय पदार्थ पर चुबकीय क्षेत्र के प्रभाव से इलेक्ट्रान की गति मे कुछ व्यवस्था उत्पन्न हो जाती है। यह प्रभाव ताप से प्रतिलोम रूप मे बढता है, यह १° पर साधारण ताप (परम मापक्रम पर ३००°) की अपेक्षा ३०० गुना अधिक होता है। जब आतरिक गतियो पर इतनी उच्च प्रकार की व्यवस्था लागू की जाती है तो यह सपीडन के तुल्य हो जाता है और इससे ऊष्मा उत्पादित होती है। इस ऊष्मा को ठडे माध्यम (जैसे १° वाली हीलियम) से हटाया जा सकता है। इस प्रकार से ठडा करने के बाद जब चुबकीय क्षेत्र को हटा लिया जाता है, तो उससे ताप और गिर जाता है, क्योकि इससे गैस मे विस्तार होता है। इस प्रकार इतना निम्न ताप प्राप्त किया गया जो परम शून्य से केवल ० ००३° ऊपर था।

इतने निम्न तापो का मापन भी अति कठिन है। गैस तापमापी का उपयोग केवल हीलियम के क्वथनाक तक हो सकता है। इसके बाद जिन तापमापियो का उपयोग होता है, वे शुद्ध धातु के विद्युतीय प्रतिरोध पर आधारित होते है। यह विधि इस तथ्य से जटिल हो जाती है कि एक ऐसा ताप होता है जो प्रत्येक धातु के लिए विशिष्ट होता है, इस ताप पर उनका प्रतिरोध शून्य होता है और वे विद्युत् के अतिचालक बन

जाते है। परम-निम्न ताप की शोध का एक उद्देश्य यह भी है कि धातुओ की इस विशेष अवस्था का और ज्ञान प्राप्त किया जाय। व्यावहारिक दृष्टिकोण से एक और पार्श्व मनोरजक है। वह है समचुबकन का, अपनी धुरी के चारो ओर नाचने वाली इलेक्ट्रान-गतियो की ऊर्जा-सतहो (स्पिन "Spin") से सबध स्थापित करना। इस प्रकार की गति से, जो वर्णक्रम के सूक्ष्म-तरग के परास मे होती है, अवशोषण सबधित होते है। अधिक विकसित रेडार (Radar) यत्रो के निर्माण मे इसका और अधिक अच्छा ज्ञान होना चाहिए।

१९५०

आटो डील्स (Otto Diels)
(१८७६–   )

कुर्ट आल्डर (Kurt Alder)
(१९०२–   )

"डाईन संश्लेषण के विकास के लिए।"

जीवन-चरित्र की रूपरेखा

डील्स

आटो डील्स का जन्म हैमबुर्ग, जर्मनी मे हुआ था। आपने बर्लिन मे रसायन का अध्ययन किया और १८९९ मे डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। आपने थीसिस के लिए एमिल फिशर की प्रेरणात्मक सरक्षकता मे कार्य किया था। कार्बनिक रसायन का क्षेत्र बड़ा विशाल है, उसमे किये गये अधिकतम शोध-कार्यो का महत्त्व छोटे-छोटे भागो मे ही होता है। डील्स के साथ यह बात न थी। आपने तीन ऐसे आविष्कार किये जिनसे सपूर्ण क्षेत्र पर प्रकाश पडा और जिनकी ओर सब लोग आकर्षित हुए।

इन आविष्कारो मे पहला, एक ऐसा गैसीय पदार्थ था, जिसकी तीव्र गध और जिसके नत्र पर प्रभाव के कारण उसकी उपस्थिति स्वय ज्ञात हो जाती थी। आपने इसको कार्बन का आक्साइड सिद्ध किया, इसमे कार्बन के तीन परमाणु और आक्सिजन के दो परमाणु होते थे। कार्बन मोनोआक्साइड मे परमाणुओ का अनुपात एक और एक होता है, सबसे अधिक व्याप्त कार्बन आक्साइड मे कार्बन का एक परमाणु और आक्सिजन के दो परमाणु होते हैं। यह आविष्कार (१९०६) अद्भुत था क्योकि यह यौगिक केवल सक्रिय ही नही था, अपितु यह भली प्रकार से ज्ञात दो तत्त्वो का एक नया यौगिक था।

दूसरा आविष्कार एक ऐसी विधि थी जिसमे कार्बनिक अणुओ के आशिक हाइ-ड्रोजन को धीमे और नियत्रित रूप मे हटाया जाता था। इस विधि के लिए प्रतिकर्मक

था—सिलीनियम, जो एक धातु है और आवर्त-वर्गीकरण के अनुसार गधक का सबधी है। इस धातु की हाइड्रोजन-आधिक्य वाले यौगिको पर चयनात्मक (selective) प्रतिक्रिया से स्टीरोलो-जैसे जटिल पदार्थों की रचना ज्ञात करने मे सहायता मिली।

तीसरे आविष्कार से सपूर्ण कार्बनिक रसायन को सर्वोपयोगी विधि मिली। यह सश्लेषण की एक ऐसी विधि है, जो अधिकतम धीमी परिस्थितियो मे होती है और इसलिए पदार्थ की रचना को सरलता से स्पष्ट करती है। यह सश्लेषण दो द्विबधक वाले यौगिको के एक विशेष गुणधर्म पर आधारित है, जिनमे दो द्विबधक एक एकबधक से पृथक् होते है। ब्यूटाडाईन

$$\underset{1}{CH_2}=\underset{2}{CH}-\underset{3}{CH}=\underset{4}{CH_2}$$
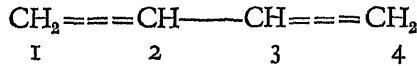
इसका सरल उदाहरण है। आइसोप्रीन, जो प्राकृतिक रबर के लिए ईट-सी है, वस्तुत वह ब्यूटाडाईन है, जिसमे मेथिल समूह दो सख्या वाले कार्बन परमाणु पर जुडा होता है। पाँच कार्बन परमाणुओ वाली महत्त्वपूर्ण डाईन साइक्लो-पेटाडाईन है—इसमे पाँच कार्बन परमाणुओ से एक बद घेरा बनता है।

डील्स, १९१६ से कील विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रहे है। आपने कार्बनिक सश्लेषणो मे आविष्कार एव अन्वेषण कुर्ट आल्डर के साथ किये है।

आल्डर

आल्डर ने रसायन का अध्ययन बर्लिन मे किया। तत्पश्चात् आप कील आ गये और वहाँ से १९२६ मे डाक्टर की उपाधि प्राप्त की। कील प्रयोगशाला मे डाईन सश्लेषण शोध का एक प्रमुख विषय था और यहाँ से ही यह शोध-कार्य अन्य स्थानो पर फैला है। आपने अपने वैज्ञानिक कार्य के परिणामो को टेक्निकल समस्याओ के सुलझाने मे लगाया। आई० जी० फार्बेन उद्योगो मे आपने प्लास्टिक और उनसे सबधित जीवनोपयोगी अन्य पदार्थों के बडे अणुओ का अध्ययन किया। १९४० मे आपने कलोन विश्वविद्यालय के रासायनिक इस्टीट्यूट मे डायरेक्टर का पद स्वीकार किया।

पुरस्कार-प्राप्त कार्य का वर्णन[1]

"हम लोग यह निश्चित करने मे सफल हुए है कि डाईनो मे, जिनका आइसोप्रीन विशिष्ट प्रतिनिधि है, अद्भुत रूप से अनेक ऐसे सश्लेषण करने की क्षमता होती है,

1 Zeitschrift fur Angewandte Chemie Vol. XLII (1929) p 911 *ff* से अनूदित।

जो सबसे धीमी परिस्थितियो मे हो सकते है। अपने परीक्षणो के फलस्वरूप हमको इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि वे सब कार्बनिक सश्लेषणो मे (अर्थात् प्राणियो मे भी) कार्बनिक अणु के निर्माण मे महत्त्वपूर्ण भाग लेते है।

"डाईन सश्लेषण के विकास की सबसे आवश्यक प्रतिक्रिया वह है जिसमे ऐजो एस्टर से प्रयोग मे अदला बदली होती है—

$$RO_2C—N=N—CO_2R$$
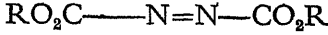
इसके फलस्वरूप एक उपयुक्त नाइट्रोजन से स्वतत्र प्रक्रम बन जाता है, इस प्रतिक्रिया का आरम्भ थीले के विद्यार्थी आल्ब्रेक्थ (Albrecht) के एक पुराने प्रकाशन से हुआ था। आपन यह देख लिया था कि साइक्लोपेटाडाइन क्वीनोन के एक या दो अणु-भारो से सयोग करती है। आपने प्रतिक्रिया से वने पदार्थो के जो दो सूत्र बताये थे उनको हम लोगो ने गलत सिद्ध कर दिया। साइक्लोपेटाडाईन का क्वीनोन से सयोग १ ४ स्थिति मे होता है।

"इस सिद्धात के अनुसार हम लोगो ने सरल डाईनो (जैसे स्वय ब्यूटीडाईन अथवा उसके ऐल्काइलयुक्त यौगिक या चक्रीय डाईन भी) को ऐल्फानफ्थोक्वीनोन से जोडा और इस प्रकार ऐन्थ्राक्वीनोन के अनेक सजात (homologues) तैयार किये। इस विधि के अनुसार सभावित सश्लेषणो की सख्या का कोई अत नही है। चूँकि ये प्रतिक्रियाएँ अचानक होती है और इनमे दूसरे प्रतिकर्मको की उपस्थिति आवश्यक नही होती, अत मुझे यह युक्तियुक्त प्रतीत होता है कि प्रकृति भी ऐन्थ्रासीन और हाइड्रोकार्बन के जटिल यौगिक बनाने के लिए इस विधि का प्रयोग करती है।

"डाईन सश्लेषण का अतुलनीय बाहुल्य इस तथ्य का परिणाम है कि प्रतिक्रिया के दो अवयव इच्छानुसार परिवर्तित किये जा सकते है, किन्तु इस परिवर्तन से सयोग की प्रवृत्ति और इस प्रकार हाइड्रो ऐरोमैटिक यौगिक बनाने की क्षमता पर कोई प्रभाव नही पडता।"

सिद्धात और व्यवहार पर प्रभाव

डाईन सश्लेषण से एक ऐसी धीमी विधि ज्ञात हुई जिससे काफी जटिल अणु ऐसी प्रतिक्रिया से बनते है, जिसमे अणु के भागो को केवल साथ रख दिया जाता है। इस प्रतिक्रिया मे न ऐसे ताप की आवश्यकता होती है और न वैसा ताप उत्पादित होता है जो जीवित प्राणियो की सीमाओ के बाहर हो। इस प्रकार ऐन्थ्रासीन रचना वाले रग-सामग्रियो अथवा कोलस्टीरोल की रचनाओ का सबध जीवन-रसायन से जोडा जा सका। कुछ हद तक हम प्राणियो के इन पदार्थो के बनने की नक़ल कर सकते है।

इन सश्लेषणो के नियमो को सरल नमूनो की सहायता से निर्धारित किया गया। ऐसे कार्य के दौरान मे हम सश्लेषणो की सहायता से अणुओ, उदाहरणतया, उच्च टर्पीन की परमाणु व्यवस्था का सबूत दे सकते है। फिलैन्ड्रीन (Pheliandrene) एक ऐसी टर्पीन है जो जल फेनेल (fennel) अथवा यूकैलिप्टस वृक्षो से प्राप्त होती है। इससे डाईन सश्लेषण किये जा सके और इनकी सहायता से इसकी अणु-रचना स्पष्ट हो ग यी। दो सरल एव सरलता से प्राप्त रसद्रव्य-पयूरेन एव मैलीक अम्ल एनहाइ-ड्राइड के डाईन सश्लेषण से कैन्थेरीडीन प्राप्त हुआ। यह एक प्राचीन औषधोपयोगी विष है जो तथाकथित स्पेन की मक्खी और कुछ भृगो (beetles) से प्राप्त किया जाता है।

नैपथोक्वीनोन ऐसा पदार्थ है, जिसका ऊपर वर्णन किया जा चुका है। इसमे नेपथलीन के दो घेरो मे से एक घेरे मे एक दूसरे से विपरीत स्थान पर आक्सिजन के दो परमाणु होते है। इसने विटामिन के सक्रियता वाले पदार्थ से यौगिक बनाया। इनका सश्लेषण ब्यूटाडाईन मे उपयुक्त भाग को जोड़कर किया गया। इसी प्रकार की अन्य प्रतिक्रियाएँ काफी उपयुक्त होती है और इनसे दूसरे विटामिनो और हार्मोनो का कृत्रिम उत्पादन होता है।

डाईन यौगिक एक दूसरे से जुडकर बहु-अवयवी (polymer, बहुलक) बनाते है। ब्यूटाडाईन के बहु-अवयवीकरण से अकेले अथवा स्टीरीन के साथ, कृत्रिम रबर बनता है। डाईन सश्लेषण का अनुभव ऐसे बहु-अवयवीकरण (बहुलीकरण) की सैद्धातिक व्याख्या करता है। इनके अध्ययन की सहायता के फलस्वरूप प्लास्टिक और रबर-जैसे पदार्थों की उत्पादन-विधियो को अधिक अच्छा बनाया गया है।

लेखकों की तालिका

विषयानुक्रमणिका